राधाकृष्ण द्वारा प्रकाशित महाश्वेता देवी की अन्य रचनाएँ

जंगल के दावेदार

1084वें की माँ

अग्निगर्भ

भटकाव

महाश्वेता देवी

हिन्दी रूपान्तर
जगत शंखधर



राधाकृष्ण

करुणा प्रकाशनी, कलकत्ता द्वारा प्रकाशित
बंगला पुस्तक 'घरे फेरा' का अनुवाद

प्रथम हिंदी संस्करण 1980

मूल्य
20 रुपये

प्रकाशक
राधाकृष्ण प्रकाशन
2 अंसारी रोड दरियागंज
नई दिल्ली 110002

मुद्रक
भारती प्रिंटर्स
दिल्ली 110032

ऋत्विक को

देवादिदेव उस समय भी कालाटोप मे था, इसीलिए जब ईप्सिता का तार डलहौजी म आया तो उसे आते ही नही मिला। ईप्सिता को डलहौजी टूरिस्ट ऑफिस का पता दिया हुआ था। देवादिदेव न कहा था, 'चार दिन डलहौजी मे रहूँगा, उसके बाद कश्मीर जाऊँगा। कश्मीर घूमन फिरन म, समझ लो, कुछ दिन लग जायेंगे।'

डलहौजी के बाद देवादिदेव कश्मीर ही जाता किन्तु तार सारा प्रोग्राम उलट-पलट तूफान उठाकर चला गया।

कालाटोप जाने का कोई इरादा न था। डलहौजी म रहन की बात कहकर ही देवादिदेव आया था। पठानकोट मे हिमाचल प्रदेश के टूरिस्ट ऑफिस म बिलकुल भीड न थी। ज्यादातर लोग कश्मीर जाते हैं सारी भीड कश्मीर टूरिस्ट ऑफिस मे घिरी ही रहती है। हिमाचल के टूरिस्ट ऑफिस म काम करने वाला लडका बहुत अच्छा था, एकदम सज्जन। डलहौजी के बारे मे बहुत उत्साह से बता रहा था।

—डलहौजी तो बगालियो के लिए तीर्थ है।

—क्यो ?

—रवीन्द्रनाथ वहाँ रहे थे।

—सो तो रहे थे।

—डलहौजी बहुत शात एकात स्थान है।

—शात एकात स्थान की ही तलाश म हूँ।

—आप क्या ?

—लेखक हूँ।

—नाम ?

—देवादिदेव बसु।

देवादिदेव को आघात लगा, यह आदमी अखिल भारतीय प्रसिद्धि-प्राप्त लेखक का नाम नही जानता !

—क्या लिखते हैं ?

—कहानी, उपन्यास।

—अच्छा !

—डलहौजी की बस कब मिलेगी ?

—*आपके लिए ही रुकी हुई है।*

—डलहौजी बहुत भीड-भरी जगह तो नही है ?

—नही, नही ! मैं तो यही कहूँगा कि डलहौजी सबसे खूबसूरत पहाडी जगह है। बर्फ से ढँके पहाड देखने लोग कौसानी जाते है, मगर डलहौजी धौलगिरि रेंज के बहुत समीप है। चारो ओर बर्फ से ढँके पहाड है। ओक के बडे-बडे पेड मिलेंगे। टैगोर का मकान सबसे ऊँची जगह पर है।

बस मे डलहौजी के मुसाफिर कम ही थे। कई पजाबी लडके थे। वे डलहौजी म खेतीबाडी करते थे। पठानकोट से खेती का बहुत सारा सामान लेकर लौट रहे थे। उनमे से एक बोला, 'किसी दिन मेरा फार्म देखने आइयेगा। बिलकुल मॉडर्न फार्म है।'

देवादिदेव न सोचा था कि डलहौजी मे ही ठहर जायगा। लेकिन डलहौजी पहुँच कर समझ मे आया कि डलहौजी पुरानी, मरणोन्मुख पहाडी नगरी है। रहन-बसन की जगह है। टूरिस्टो के आने लायक जगह नही है। कोई चमक-दमक, चहल-पहल नही है। बिखरी-बिखरी-सी जगह है। घूमन के लिए एक ही सडक है। लोग कम हैं। आंखो के आगे बार बार ईसाइयो का कब्रिस्तान, गिरजाघर या अँग्रेजो के परित्यक्त बँगले दिखायी पडते हैं। ओक वृक्षा के पत्तो से सदा ओस टपकती रहती है। टूरिस्ट लॉज म भी मच्छर काटते रहते हैं।

—का देखियगा ?

टूरिस्ट लॉज का चौकीदार भी डलहौजी से ऊबा हुआ था 'का दखियगा ! टागोर का बँगला उनका राजमहल ?

दवेन्द्रनाथ के यादगार वाले बँगले की चढाई चढते चढते हँफनी चढ रही थी। बगल के बरामदे मे ध्यानमग्न रवीन्द्रनाथ की बात का ध्यान उसे बहुत पहले से था। दवेन्द्रनाथ का सूय निकलने स पहले बरफीले पानी स स्नान और दूध पीना बहुत ही अच्छा था ईश्वर के चारो ओर उनका चक्कर लगाना भी अच्छा था किन्तु जमीदारी की आय होन से ही यह सब सभव था। ईश्वर यदि सवत्र है तो उन्ह मैदान म बैठकर भी पाया जा सकता है। डाँडी म सवार होकर चोटी पर चढ बिना भी काम चल सकता है। इस ऊँची जगह पर बैठकर आराधना करना बडा अच्छा काम है बशर्ते दस बीस पहाडी नौकर पहाड की उतराइ चढाई निरतर उतर चढकर सुख सुविधा का सभी सामान जुटाते रह !

यह सब कुछ ध्यान म आते ही दवादिदेव को लगा कि बात ठीक ढग स नही सोची जा रही है और उसन रवीन्द्रनाथ के विषय म सोचन की कोशिश की। परिणामस्वरूप उसके मन के परदे पर सत्यजित राय के रवीन्द्रनाथ वृत्तचित्र म रवीन्द्र की भूमिका करन वाले बच्चे का चेहरा उभर आया और वह चिढकर पहाडी से नीचे उतर आया।

चारो तरफ पहाड दर्रे बफ प्राकृतिक सौन्दय का फलाव। इन सबके बीच उसे बेचैनी हो रही थी। टूरिस्ट लाज म लौट कर थोडी शराब पीने से चैन पडा। थोडी हँसी थोडा शोरगुल थोडे से रेडियो के गानो के लिए उस भीगी रात म उसका मन व्याकुल हुआ और तभी अचानक किसी नारी कठ के हाहाकार करके रोने से वह चौंक गया। पता लगा कि चौकीदार की सास थी। चौकीदार की साली बीमारी से मर गयी थी और लडकी के मरन की खबर पाकर वह रो रही थी। देवादिदव को लगा था कि उसके मन मे उसके प्रति कोई सवेदना नहीं है। उसे लगा कि इस तरह रोना धोना असभ्यो के शोर चीत्कार की तरह है। सवेरे उसन देखा कि चौकीदार की सास से सहानुभूति दिखान के लिए बहुत सी औरतें आ रही थी सभी रोन के लिए तयार। उस डलहौजी असहनीय लगने

लगा। उसने सोचा, सवेरे ही वह कालाटोप के फारेस्ट-बँगले को बुक करा लेगा।

—पैदल जाना पड़ेगा।

—बस नहीं है?

—नहीं।

—और कोई सवारी?

—नहीं।

—रास्ता कैसा है?

—अच्छा ही है। कुछ साल पहले कालाटोप में आल इंडिया स्पीकर्स कान्फ्रेंस होने की बात थी। उसी के लिए कालाटोप तक सड़क बनवायी गयी थी।

—पैदल ही जाऊँगा।

—हाँ, हाँ, बहुत अच्छी सड़क है।

—पैदल चलना मुझे पसन्द है।

देवादिदेव को पैदल चलना खूब आता है। सुदूर अतीत की बात है, जब उसे पैदल चलना अच्छा लगता था। लेकिन एक ज़माने से उसका पैदल चलने का अभ्यास बिलकुल छूट गया था। चलते-चलते खयाल आया कि आजकल वह बिलकुल पैदल नहीं चलता। जब पैसे नहीं थे, तभी चलता था। अब वह रिक्शा, टैक्सी, मिनी बस आदि में चलता है। ट्रामों और बसों में नहीं चढ़ पाता, भीड़ में तकलीफ होती है। उसकी पत्नी ईप्सिता अब भी पैदल चलती है। पैदल बाज़ार जाती है, बाज़ार से सामान आदि लाती है, बच्चों के साथ इधर-उधर भी पैदल ही जाती है। चलते-चलते देवादिदेव को यह भी याद आया कि वह बच्चों के साथ कभी कहीं नहीं जाता—चिड़ियाघर, सिनेमा, खेल के मैदान, लेक। लेकिन बच्चों के साथ रहने की इच्छा देवादिदेव में बराबर बनी रहती थी। बच्चों से मिलना-जुलना अमूल्य ज्ञान का स्रोत बन जाता है। देवादिदेव को समय नहीं मिलता था। उसका ज़्यादातर समय बाहर ही बीतता था। देवादिदेव को वक्त ही नहीं मिलता था। 'वक्त निकालना पड़ता है,' ईप्सिता क्लान्त और अनिच्छुक स्वर में कहती थी। ईप्सिता नहीं समझेगी। देवादिदेव

बसु की मजबूरी है कि उस हमेशा बाहर ही समय बिताना पडता है।

पैदल चलते चलते पहली बार बर्फ देखी। पत्थर पर स बर्फ फिसल रही थी, सरकती आ रही थी। ऊपर से धूल हटाने पर उजली सफेद ! खाकर देखने की इच्छा हुई लेकिन खामी नही। वह अपने का हमेशा बाहरी सक्रमण स यत्नपूवक सुरक्षित रखन की कोशिश करता है। फिर बर्फ खाने स गला बैठ सकता है। वैसे बर्फ कितनी अच्छी लग रही है ! बर्फ पर क्या देवादिदेव अपना नाम न लिखेगा ? बफ पर नाम लिखन की बात मन मे आते ही उसे याद हो आया। समुद्र के किनारे बालू पर वह अपना नाम लिख रहा है रेशमा दुर्रानी देख रही है। वह अफगान लडकी थी। गण नाट्य सघ की कायकर्त्री थी। नाचती थी। नाम लिखते देखकर रेशमा न देवादिदेव स कहा था, नार्सिसस !'

दवादिदेव ने उँगली स लिखा—देवादिदेव। उसके बाद एक पत्थर पर बैठ गया और उसन सिगरेट सुलगा ली थी। डलहौजी वापस चला जाय ? लौटना ही ठीक रहेगा। पैदल पैदल कालाटोप ? अच्छा, वह आँखें मूँदे और कही स एक गाडी आकर खडी हो जाय ! फिर ड्राइवर कहे, 'कहाँ जा रहे है ?

अचानक एक जीप आकर रुकी। जैसे देवादिदेव ईश्वर हो और उसके इच्छा करते ही जीप आ गयी हो। सेना विभाग की जीप थी। ड्राईवर जवान अफसर था। तभी दवादिदेव का ध्यान आया कि कालाटोप के पास ही आर्मी सेंटर है।

ड्राईवर न सिर बाहर निकाला, कहाँ जा रहे है ?'

—कालाटोप।

—आइये।

—आप ?

—वही।

—तकलीफ तो न होगी ?

—नही आइय।

देवादिदेव जीप म बैठ गया। लडका उस कालाटोप पहुँचा देगा।

लेकिन राह मे लडके ने उससे कोई बात न की, जरा भी अतरग न हुआ। सिर्फ एक बार पूछा था, 'क्या करते है ?'

—लिखता हूँ।

—क्या लिखते है ?

—कहानी, उपन्यास।

—नाम ?

—देवादिदेव बसु।

—देव बसु !

—हाँ।

—आपकी जीवनी अँग्रेजी मे निकली है ?

—हाँ। पढी है ?

लडके न कोई जवाब नही दिया। आँखें सिकोडे वह सामने की ओर देख रहा था। सामने मोड था। उसन एक हाथ से माचिस जलाकर सिगरेट सुलगायी। उससे पूछा तक नही। लडके के मन मे जैसे अचानक विद्वेष जाग उठा हो। क्यो ? यह देवादिदेव नही बता सकता था। लेकिन उसे बखूबी पता चल जाता है कि कब किसके मन मे उसके प्रति विद्वेष पैदा हो जाता है। देवादिदेव की त्वचा और रोम बेतार के तारो की तरह अचानक सक्रिय हो जाते हैं। ट्रेन में, ट्राम मे, बस में, चाय की दूकान पर, हर जगह कोई न-कोई उसे विद्वेष और क्रोध की नजरो से देखता है, अविश्वास की दृष्टि से देखता है।

उसे सब पता चल जाता है। वह सबको पहचानता नही है। लेकिन जान लेता है कि उसकी तरफ कोई गुस्से से, नाराजगी से देख रहा है। देखता है और उसे नकार देता है। उसकी उपेक्षा कर वे सिनेमा, राजनीति, मुहल्ले की लडकियो के बारे में जोर-जोर से बातें करने लगते है। जो उसकी उपेक्षा करते है वे अक्सर अभिज्ञ और कम उम्र के लौडे होते हैं। देवादिदेव समझ नही पाता कि जवान लोग उस पर अविश्वास क्यो करते है ?

क्या उसके चेहरे पर लिखा रहता है कि वह देवादिदेव बसु है ? क्या उसे देखते ही पता लग जाता है कि उसकी पत्नी ईप्सिता चलते-फिरते

उस पर ताने मारती है ? लगता था कि उसके चारो ओर बुना हुआ एक तरग-जाल है जो साथ-साथ चलता-फिरता है। तरग-जाल क स्पर्श से ही लोगो को पता चल जाता है। अकसर लोग उस पर अविश्वास करते हैं, इसीलिए वह दुखी और मन ही-मन वुझा बुझा रहता। सदेह और आत्म-विश्वास का अभाव उस हमशा सालत रहत। यह बात वह लोगो के बीच जाकर ही जान पाया है। देखते ही अविश्वास, आक्रोश, गुस्सा—नकार का भाव ! आजकल वह बहुत ही अनिश्चय की मन स्थिति में है। मछली खरीदते समय उस लगता कि अभी मह मछली वाला कहेगा, 'पैसा लीजिये, मछली लौटा दीजिये। आप महाशय, नकारे हुए आदमी है।'

अभी तक किसी दिन ऐसा नही हुआ है, पर हा तो सकता है। उसे अपना अस्तित्व बडा भयावह लगता। किसी भी विषय मे व्यवस्थित रूप स सोचना सभव न था। बहुत डर लगता कि कही कभी भी कोई अपमानित करक चला न जाय। गाडी रोक कर कोई उस पर थूक देगा, बस स निशाना साधकर कोई पान की पीक उसक कपडो पर उगल देगा। बस को आया दखकर कोई जानबूझकर जलती हुई सिगरेट देवादिदेव की टेरी शर्ट पर छोडकर बस में चढ जायगा।

आक्रोश, विद्वेष, नकार का भाव—यही क्रम है। तिस पर मजा यह कि सब चुपचाप चलता रहता है। बाहर मे सब-कुछ सहज सामान्य चलता है। इतना सहज सामान्य कि जो उस नकारत हैं, अचानक शायद वही मुंह से कह भी सकते हैं, 'यह क्या ! इतने कमजोर हो गये हा ? क्या तबीयत खराब थी ?' ललिता न भी तो यही कहा था।

जो लोग सामन दोस्तो की तरह बातें करत, वे ही मन-ही-मन नकारना, अनचीन्हा कर देना चाहते। यह कैसा भयानक षड्यत्र है ! तो क्या काफ्का की बातें सच है ! उन सब कहानियो के दुस्वप्नो को सच बना डालने का ही क्या इतन दिनो से आयोजन चल रहा है ? लेकिन यदि वैसा ही होना है तो बहुत धूमधाम से छोटी-छोटी बत्तियो से शहर म उजाला करक उत्सव करना ही उचित है। दवादिदव अकेला क्यो मरे ? अकेली बलि स कही इतनी बडी पूजा होती है ?

इसीलिए भागकर यहाँ आना हुआ। अस्तित्व गुम हो रहा है।

देवादिदेव ने जो भी किया सब गलत, ईप्सिता की भाषा में सब 'सुपरिकल्पित बदमाशी' थी। लेकिन इस लड़के के भीतर से विद्वेष का ताप क्यों निकल रहा है? यह तो पंजाबी तरुण अफसर है देवादिदेव से पूरी तरह अनजान, उसकी दुनिया से परे का आदमी।

वे कालाटोप पहुँचे। देवादिदेव उतरकर खड़ा हो गया। लड़के को धन्यवाद देने चला। लड़के ने अदृश्य बन्दूक से उसकी बात को बीच में ही हवा में उड़ा दिया। गोली खाकर देवादिदेव की धन्यवाद की बात अचानक लुढ़क पड़ी। लड़का बोला, 'शंकरदयाल मेरा दोस्त है। मैं आपको पहले से जानता तो गाड़ी पर न बिठाता।'

देवादिदेव खड़ा रह गया। लड़का साईकिल की चेन-लिपटी मुट्ठी से जैसे उसके मुँह पर घूँसा मार गया हो। मुँह टूट गया हो। अदृश्य रक्त बह रहा हो। डरकर देवादिदेव ने चेहरे पर हाथ फेरा। वह आतंकित हो उठा। लड़का चला जा रहा था। देखने में उसकी गरदन किसकी तरह लग रही थी? कौन ऐसे ही गरदन टेढ़ी करके सोचते हुए चलता था? वह कौन है? देवादिदेव को याद न आया। लेकिन उसके मन में पीड़ा घुमड़ उठी। लड़के की गरदन किसकी तरह है यह याद आने से पहले ही देवादिदेव के मन में सहज स्नेह की अनुभूति जागी थी। लड़के के साथ बातें करने की तबीयत हुई थी। लेकिन लड़का यह सब कुछ न जान पाया। उनके प्रति मन में निर्मम आक्रोश और अविश्वास लिये ही चला गया। जिसे तुम क्षण भर या चिरकाल के लिए मित्र बनाना चाहो, वह तुम्हारे मन की वास्तविक बात ही न समझ सके समझना ही न चाहे आज की दुनिया में मनुष्य के जीवन में इससे बड़ी क्षति कौन सी हो सकती है? कोई किसी को स्पर्श नहीं कर पाता। छूना नहीं चाहता। साथ साथ चल सकते हो, जीप पर सट कर बैठ सकते हो लेकिन दोनों के बीच दो नक्षत्रों के मध्य जैसी महाविश्व की दूरी रह जाती है। लाखों-करोड़ों बरस बाद दो नक्षत्रों का एक दूसरे के समीप आना दुर्घटना कही जायेगी। लेकिन दुर्घटना, दुर्घटना ही होती है। उससे कोई नियम का सूत्र नहीं निकाला जा सकता।

लेकिन लड़का उसे क्यों नकार कर गया? शंकरदयाल का मित्र

होने के कारण ? उसने शकरदयाल का क्या बिगडा था कि शकरदयाल का मित्र देवादिदव से घृणा करता ? क्यो घृणा करता ?

शकर दयाल !

शकरदयाल—ऊँचाई पाँच फीट दस इच। रंग गोरा। नाक चिपटी। ओठ मोटे। हब्शियो से बाल। आँखें बादामी। पहचान की निशानी—बायी भौह पर चोट का निशान। बचपन मे गिर गया था। दिल्ली म पैदा हुआ। पिता कृषि विभाग मे बाबू थे। एक मामा की सहायता से हैदराबाद मे लिखना-पढना हुआ। एम० ए० अर्थशास्त्र मे पढता था। तभी गोपाल कृष्णन से परिचय हुआ, और घनिष्ठता बढी। गोपालकृष्णन आध्र के इन्द्रपुरम् एजेंसी म गिरिजन आदिवासी क्षेत्र म काम करता था। बाद मे, गिरिजन विद्रोह का वह नता भी बना। 1969 मे गिरिजन आदोलन मे गोपालकृष्णन ने बहुत मदद दी और अपनी पत्नी को लेकर गिरिजन क्षेत्र म ही रहने लगा। इसी गोपालकृष्णन के साथ छुट्टियो मे शकरदयाल कारकोडा गाँव गया था। वहाँ से छुट्टियो के बाद वह राजनीति मे उग्रपथी बनकर लौटा था। वह बहुत ही मेधावी छात्र था। बहुत अच्छी अँग्रेजी लिखता था। दक्षिण और उत्तर-भारत के विभिन्न अखबारा म दक्षिण की पर्वतीय ग्रामीण अर्थनीति के विषय पर उसके कई लेख बहुत प्रशसित हुए। गोपालकृष्णन के साथ उसकी घनिष्ठता से उसके मामा डरने लगे और उन्होने कोशिश करके दिल्ली की एक प्रकाशन सस्था मे उस काम दिला दिया। दिल्ली आने पर शकरदयाल का परिचय नरसिहम पिल्लई, अमिताभ दवे, आनन्द राय से हुआ और उसने 'द लान्सट' नाम से एक अखबार निकाला। उक्त पत्र का उद्देश्य नाम के लिए साहित्य चर्चा थी, लेकिन उसमे गोपालकृष्णन और कई उसी जैसे बहुत स उग्रपथियो की कहानियों और कविताओ के अनुवाद के अलावा और कुछ प्रकाशित न होता। शकरदयाल के अनुवादो को बडी प्रसिद्धि मिली। वह असाधारण अनुवाद करता था।

बात बहुत पुरानी नही थी। आपात स्थिति चल रही थी। इतने दिनो

पहले की बात याद है क्या ? अब सन् 1979 है। अब भी तो आपात-स्थिति है। देवादिदेव को उस दिन की कल्पना करके न जाने क्यों भय लगता था जिस दिन आपात स्थिति नहीं रहेगी !

शंकर असाधारण अनुवाद करता था, इसीलिए देवादिदेव ने उससे अपनी जीवनी का अँग्रेजी में अनुवाद कराना चाहा था। अपनी अँग्रेजी पुस्तक के प्रकाशक कमलेश जैन से उसने कहा, 'शंकरदयाल से अनुवाद कराओ।'

—शंकरदयाल ?

—तुमसे परिचय नहीं है ?

—वह तो है।

—तब फिर ?

—वह बहुत जिद्दी लड़का है।

—अरे, जरूर कर देगा।

देवादिदेव यह सोच भी नहीं सकते थे कि कमलेश की ओर से टाल-मटोल क्यों है ! देवादिदेव वसु की आत्मकथा का अनुवाद करना शंकर का सौभाग्य होगा। कमलेश ने कहा, 'उससे बात कर लूंगा।'

कई दिन बाद कमलेश ने कहा, 'शंकर मेरे आफिस आयेंगे, आप भी आयें।'

शंकर को देखते ही देवादिदेव को डर लगा। बासठ बरस की उम्र होने पर इस तरह डर लगे ! योग्य, आत्मविश्वासी युवकों को देखकर उसे डर लगता। वे इतने आत्मविश्वासी कैसे हैं ?

शंकर किसी तरह काम की बात पर नहीं आना चाहता था।

—अच्छा बताइये, आप किस तरह यह सब-कुछ कर लेते हैं ?

—क्या करता हूँ ?

—जब क बाबू के अखबार में लिखते हैं तो बहुत ही रसीली उत्तेजक, मोहक कहानी लिखते हैं। जब ख बाबू के पत्र के लिए लिखते हैं तो बहुत ही प्रतिबद्ध रचना लिखते हैं। बिलकुल दूकानदारी का सा हिसाब।

— तुम्हारा यह कहना सही नहीं है।

—क्यों ? समझा दीजिए।

—रचना तो हृदय के भीतर बनती है। जब जो रचना आयी ।

—प्लीज, इस समय अपनी रचना-प्रक्रिया की थ्योरी मत चालू कीजिये।

—तुम मेरा लिखा हुआ पढ़ते हो?

—नहीं।

—अँग्रेजी में भी प्रकाशित होता है।

—आपके लिखे को पढ़ना क्या सभव है?

—तुम्हारी तरह के लड़के को प्रमुख पात्र बना कर...।

—पता है 'शरत् के बाद हेमन्त'—लेकिन बात बनी नहीं।

—लेकिन किताब...।

—किताब की प्रशसा हुई है, यही न? मेरे लिए उसका कोई महत्व नहीं। आप एक स्वार्थ के लिए खरीदे गये है। आपके पाले हुए पाठक आपको लेकर वाहवाही करेंगे ही। छोड़िये उन बातों को।

—लेकिन मैं तुम्हारा एडमायरर हूँ, प्रशसक हूँ।

—यह मेरा दुर्भाग्य है।

—मैंने सोचा था कि...।

—आपकी आत्मकथा?

—हाँ।

—आप चाहते है कि मै उसका अनुवाद करूँ?

—हाँ।

—क्यों चाहते है?

—भाई, तुम ही कर सकोगे, और किसी से न होगा।

—क्यों? व्यवस्था के पालतू 'विद्रोही' लेखक की चालाक आत्मकथा का अनुवाद करने के लिए क्या पालतू अनुवादक नही मिल रहा है? रवि चौधरी तो है! तमाम बड़े-बड़े अखबारों का पालतू और विद्रोही भी!

—तुम ही कर दो।

—आप मुझे जानते नही, पहचानते नहीं। मेरा विश्वास है कि अँग्रेजी की पढाई कर लेने पर भी आप अँग्रेजी अच्छी तरह से नही जानते हैं। मेरी धारणा है कि अँग्रेजी, अँग्रेजी बनी या नही, यह आप औरों से जान लेते हैं। मेरी यह भी धारणा है कि इधर मेरे कई अनुवादों को बड़ा नाम

मिला है, ऐसा आपने सुना है। आप जानते है कि नयी वामपथी पीढ़ी ने आपको एक तरफ रख दिया है। मुझसे अनुवाद कराकर आप उनके आग मेल का हाथ बढाना चाहते हैं। नही, मैं ऐसी कारगुजारियों मे शामिल नही होता महाशय!

देवादिदेव की समझ मे नहीं आ रहा था कि उनके मन म यह ज़िद क्यों समायी हुई है? उन्ह ऐसा क्यो लग रहा था कि जिस तरह भी हो, उसे राजी करना ही होगा।

कमलेश बैठा-बैठा हँस रहा था, 'तुम जरा सोच कर बताओ, शकर!'

—आपन मेरा लिखा क्या पढा है?

—तुम्हारी कविता।

—वह गद्य तो नही है।

—गोपालकृष्णन की कहानी का अनुवाद।

—आप उसका नाम ले रहे हैं?

—वह तो बहुत गर्व करने योग्य व्यक्ति है।

शकर बोला, 'कमलेश, सेशन बडा अच्छा रहा। अब इस सेशन का आगे बढाने की सुविधा के लिए मैं गोपालकृष्णन की सच्ची कहानी सुनाना चाहता हूँ। आप ध्यान से सुनें।'

कमलेश बोला, 'सुनाओ, यार!'

—सुना रहा हूँ। गोपालकृष्णन कारकोडा गाँव की किवदती था। *गिरिजन सग्राम का नेता। 1959 मे इन्द्रपुरम् एजेन्सी म गिरिजन सग्राम* आरभ हुआ था। गिरिजन पहाडी आदिवासी है। जगल विभाग के अफसर लोग उनके हल से खेती करने के तरीके मे रोडे अटकाते। इन्द्रपुरम् एजेन्सी के बारे मे पता है?

—तुम ही बताओ।

—उसका क्षेत्रफल सात सौ वर्ग मील है। उसमे तीन सौ गाँव है। जनसख्या है दो लाख। आध्र की आबादी का दासौवाँ भाग।

देवादिदेव न मन-ही मन नोट किया कि शकरदयाल का होमवर्क कितना पक्का है। जानन का खुद प्रयत्न किये बिना क्या इतनी बातें *जानी जा सकती हैं?*

—पहाडी आदिवासी लोग। न जगल विभाग और महाजन जमीदारो से उचित न्याय माँग था। वे जब खेतिहर मजूरी का काम करत तो दिन मे आठ आन से ज्यादा मजूरी नही मिलती, साल मे उनसठ किलो से अधिक अनाज न मिल पाता। महाजन और जमीदार लोग अवधि बीतने पर भी उनकी गिरवी रखी जमीन वापस न करते। गिरिजनो के लिए कानून कचहरी करना तब असभव था। गिरिजनो को सरकार पर भी गुस्सा था। जगह बदल बदल कर खेती करने और अपने घरा म शराब चुआन की उनकी हरकत क कारण सरकार उनसे नाराज थी। सरकार की आँखा मे व अपराधी थे जरायम पेशा।

—ऐसा सब जगह होता है पता है शकर ?

—मैंने एक क्षेत्र के बारे म सुना है। इस सबके विरुद्ध 1959 मे उनकी लडाई क बारे मे भी जाना है। गोपालकृष्णन उनका नतृत्व कर रहा था। वह सग्राम कितना सफल रहा गिरिजन सघम् कितना शक्तिशाली बना, व सब बातें अब इतिहास के दस्तावेज है। व बातें सबको मालूम हैं। जो बात सबको नही मालूम है वह यह है कि गोपालकृष्णन ने उस लडाई को थमने नही दिया। 1968 म इन्द्रपुरम् एजेंसी म पुलिस आ धमकी। नतीजा—पुलिस की सख्त कार्रवाई, एक के बाद एक गाँव मे विनाशलीला ! पुलिस जब विनाश करन का निश्चय करती है तो वह विनाश बहुत प्रभावशाली हो सकता है।

—यह क्या मुझे मालूम नही है ?

—1968 के अप्रैल के बाद वह अचल नक्सलवादी हो गया।

कमलेश बाला, 'यार, ये सारी बातें यही बताओगे ?'

—हाँ।

—कहो। कहानी ही तो कह रहे हो।

—गोपालकृष्णन उस वक्त कलकत्ता आया था। देवादित्य, चौक क्यों पडे ? आपन भी उससे मुलाकात की थी। वह दूसरे काम मे आया था। आया था किसी से मार्ग निर्देशन लन। अर ! पसीना क्यों आ रहा है ?

—नहीं, कहा।

—उसकी दो कहानियाँ आपक पास भी थी, अँग्रेजी मे अनूदित।

—वह ।

—मजे की बात है, उन्हें दया देने की आपकी कोशिश के बावजूद मैंने ही उनका अनुवाद किया था। मेरे पास प्रतियाँ थी। परिणामस्वरूप 'अन्ना चेट्टी की माँ' और 'मेरा बेटा' दोनों ही कहानियाँ सकलन में प्रकाशित हुई।

—कहते चलो, शकर ।

—गोपाल आपसे क्यों मिला था, पता है?

—नहीं।

—आपके बारे मे उसके विचार बहुत ऊँचे थे।

—ओह !

—मुझसे उसकी बातचीत इसके बाद ही हुई थी। उम्र म वह मुझसे बहुत बडा था। खूब हँसता था। उसकी पत्नी कुन्ती भी उसकी योग्य कॉमरेड थी। तफसील मे नही जाऊँगा। वे दोनो बस्तर मे पकडे गये।

—मालूम है।

—क्यो नही मालूम होगा ? आपको तो सभी कुछ का पता करना पडता है। पता न होने से उस साल पूजा के मौके पर 'गोपाल मेरा भाई' लेख कैसे लिखते ?

—शकर, तुम बहुत कठोर हो।

—शायद लेकिन आप बहुत अस्थिर हो रहे हैं।

—मैं .!

—पता है, गोपाल और कुन्ती कैसे मरे ? उन्हे पकड कर बगाल लाया गया समुद्र के किनारे। पहाडी के सामने खडा करके उन्हे गोली मार दी गयी। गोपाल और कुन्ती की लाशें पानी मे फेंक दी गयी। समुद्र न उन्हे लौटा दिया था।

—पता है, माने, बाद में मालूम हुआ।

—गोपाल लेखक समिति का सदस्य था। वह कई बार दिल्ली मे सभा-समिति की बैठको मे शामिल हुआ था। कमलेश, गोपाल की मौत का विरोध करने के लिए मैंने भारत के प्रमुख लेखको के हस्ताक्षर इकट्ठा किये थे। देवादिदेव ने उस पर दस्तखत नही किये।

—सुनो शकर उसम एक बात है ।

—दस्तखत नहा किये और यह बात आत्मकथा म स्वीकार भी न की। आपकी आत्मकथा म गोपाल अपन काम से आया था और चला गया। आपने और तमाम बातो की तरह अपनी जीवनी म गोपाल का भी उपयाग किया है। सब कुछ आपके उपयोग के लिए है।

—सुनो शकर जरा सुनो !

—नही देवादिदेव कुछ अपराध अक्षम्य हाते हैं। आप गापालकृष्णन की मृत्यु के विरोध म हस्ताक्षर न करेंगे क्योकि आपको सरकार न एक जरूरी काम म लगा रखा है। वामपथी राजनीति के लडका म से जो लिखते है उनको आप स्कीन करते है।

—बहुत आगे बढ जा रहे हो शकर !

—सबूत चाहते हैं ?

—तुम सानन्द राय स सुनकर ये बात कह रहे हो।

—इसीलिए सानन्द राय विश्वास याग्य नहा है ?

—सानन्द पर तुम विश्वास करते हो ?

—समझा।

—क्या समझ ?

—आप दिल्ली क्या आये है।

—नही शकर नही।

—ये बातें देवकी बनर्जी स कहिये।

—मुझ तुम गलत समझ रहे हो।

—गोपालकृष्णन के बारे म झूठी बातें क्या लिखा ?

—सदाशिव चट्टी क कारण। सारी बातें लिखने पर क्या सदाशिव चट्टी अपना काम कर पाता ?

—वाह वाह ! कैसी अफसास की बात है ? बनर्जी भी आप पर पूरी तरह विश्वास नही करते।

—क्या कहते हो ?

—सदाशिव चेट्टी गिरफ्तार निहत्था टुकड टुकड किया गया बगाल म उसक मास स सियार गिद्धा की दावत की गयी।

—नहीं !

—तरह तारीख का। आज सत्रह है।

—इसीलिए आत्मकथा म ।

—अपने को विश्वसनीय सिद्ध करने का यह हास्यास्पद प्रयत्न क्या ? आप जैसे लोगों को कौन नहीं जानता ? कभी आप सच्चे थे लेकिन आज आप झूठे और एकदम झूठे हैं। गोपालकृष्णन की बात आपने जिस तरह आधी कही आधा दबा गये—निश्चय ही आपकी आत्मकथा भी इसी तरह के अद्धसत्यों से भरी पड़ी है ?

—तुम गलत कह रहे हो।

—कमलेश को मालूम था कि मैं आपकी किताब का अनुवाद न करूँगा। सुनिये मैंने उससे आपकी किताब इसलिए माँग ली थी ताकि मैं आपके सामने बैठकर उस पर बातें कर सकूँ। महाशय आप लोगों से मैं नफरत करता हूँ। कभी कुछ सच बातें लिखी थी। उन्हें सुनाकर सच्चे विवेकपूर्ण प्रतिबद्ध लेखक के रूप में लोगों की श्रद्धा प्राप्त करना चाहते हैं और साथ ही शक्ति का व्यापार भी करते हैं। आप जैसे महान लेखक की आत्मकथा मेरे निकट दवादिग्ध बोसे रद्दी कागजों के अलावा कुछ नहीं है।

शंकरदयाल कमलेश से जा रहा हूँ कहकर चला गया। दरवाजे के पास पहुँच उसने घूमकर खड़े खड़े कहा था कमलेश उस किताब का अनुवाद करायेगा छापेगा। वह तो प्रकाशक है। जो बिकता हो वही छापता है। पर समझ रखिये वह भी आप लोगों पर हँसता है।

शंकर चला गया था। कमलेश जैन ने कहा था बहुत गुस्सैल बद मिजाज लड़का है।

—तुमको मालूम था कि वह अनुवाद न करेगा ? जान बूझकर तुमने मेरा अपमान कराया ?

कमलेश बोला आप भी तो दूसरों की तरह ही हैं। हमेशा आप जो करें सब उसका समर्थन करते रहें क्या ! विरोधी विचारधारा रखने का क्या किसी को हक नहीं ? शंकर को भी अपनी विचारधारा में विश्वास रखने का पूरा अधिकार है।

—तुम्हारे अलावा भी मेरे प्रकाशक हैं।

—मेरी तरह रुपय कोई न देगा। फिर इतना विज्ञापन कौन करेगा ?

—तुम भी मुझे लेकर ।

—अच्छा दादा ! यह तो मजाक की बात है। मैं जानता हूँ, आप सब जगह प्रकाशको को वज्रमूर्ख, मारवाडी मानसिकता का आदमी कहते फिरते हैं। कैसा मजाक होता है जानते हैं ? आप मोनोपली प्रेस को गालियाँ देते हैं, प्रकाशको को गाली देते है, शायद व्यवस्था को भी कोसते है आप माने आप लोग। और यह मोनोपली प्रेस यह प्रकाशक, यह व्यवस्था—इनके बिना आप लोगो का काम नही चलता।

—तुम क्या कहना चाहते हो ?

—सुनिये, आप लोग यह सब क्या करते है अच्छी तरह जानता हूँ। शक्ति सत्ता हथियाना चाहत है अपना प्रभुत्व स्थापित करना चाहते है। सच कहूँ तो आप शक्ति सचित कर रहे है इसीलिए आपके प्रति हमारा इतना झुकाव है। मैं योग्यता मे विश्वास करता हूँ, आप पर विश्वास करता हूँ।

—शकर पर ?

—दूसरी तरह से विश्वास करता हूँ। उसकी बात भूल जाइये। आप जो कुछ चाहते है, वह वह नही चाहता। मै जानता हूँ, आप जो शक्ति चाहते हैं, उसे वह कभी न चाहेगा। इसीलिए उस पर विश्वास करता हूँ। इसके अलावा अभी तक वह गोपालकृष्णन को नही भूल पाया है।

दिल पर अप्रत्याशित चोट लगी थी। कमलेश जैन का उस पर विश्वास है, लेकिन श्रद्धा शकर पर है। पता चला कि देवादिदेव को वह भविष्य का या शायद वर्तमान का भी समर्थ साहित्यिक मानकर छाप रहा है। क्यो ? देवादिदेव शकरदयाल की तरह श्रद्धा क्यो नही पायेगा ?

—शकरदयाल इस वक्त कर क्या रहा है ?

—आपको पता होगा।

—क्या कर रहा है ?

—नरसिंहम् पिल्लई, शकर, अमिताभ दवे, सानन्द राय अखबार नही निकाल रहे हैं क्या ? सानन्द तो कलकत्ते का लडका है।

शकरदयाल ! उस समय मन मे बहुत क्रोध उत्पन्न हुआ था। मन की त्वचा कुचले के जहर से जहरीली हो गयी थी। उस समय कुछ नही किया। नही, कोई लक्ष्य मन मे नही आया था। लेकिन बाद म एक बडी सी पार्टी मे तमाम लोगो के बीच, शराब का नशा चढते ही मुँह से निकल पडा था कि शकरदयाल खतरनाक दुश्मन सिद्ध होगा, उस पर निगाह रखनी होगी। इस तरह की शब्दावली अदर-ही-अदर तैयार हो रही थी। इसी-लिए तुरन्त मुँह से निकल पडी। देवादिदेव ने कहा था, 'हम-तुम सब विट्रेयर है, धोखेबाज हैं—गोपालकृष्णन की मृत्यु के बाद हस्ताक्षर नही किये थे न, इसीलिए।' अपने-आप महसूस हो रहा था कि बहुत कुछ गलत हुआ जा रहा है, किसी की क्षति हो रही है। पछतावा भी हुआ था। लेकिन रुक नही पा रहा था। देवकी बनर्जी हर बात को ध्यान से सुन रहा था। ताता मित्तिर देवादिदेव को रोकने का प्रयत्न कर रहा था।

डेढ महीने बाद शकर का अखबार बद कर दिया गया।

उसके बाद देवादिदेव लबे अँधेरे मे चला गया। आज भी उसी म है। शकर का मित्र उसे नकार कर चला गया। लेकिन लडके की गरदन किसकी तरह थी ? कौन उसकी तरह सिर झुकाये आहिस्ता-आहिस्ता पैदल चलता था ? याद आया, याद न आया। उसी याद न आने वाले व्यक्ति की याद देवादिदेव के मन के एरियल के पास कटी पतग की डोर की तरह चक्कर लगा रही थी। एरियल म किसी तरह अटक नही रही है।

देवादिदेव कमरे मे आया। चौकीदार से खाना बनाने के लिए कहा। बाहर आकर खडा हो गया।

चारो ओर बडा सन्नाटा था। बहुत दूर तक फैली पर्वतमाला थी, बर्फ पर अस्त होता हुआ सूरज चमक रहा था। बडी सख्या मे पक्षी सध्या समय अपने घोसलो को लौट रहे थे। ढेरो सीधे तन खडे ओक, पाइन और फर सिर उठाये, विनीत भाव से सध्या को पत्ते पत्ते मे ग्रहण कर रहे थे।

प्रकृति मे सब-कुछ इतना अधिक क्यो होता है ? क्यो इतना अपव्यय है ? सध्या तो रोज होती है, रोज होगी। उसको सम्मान और विदा देकर रात का ग्रहण करने के लिए इतना आयोजन क्यो है ?

देवादिदेव नीरवता के आदि नही थे। सजा सजाया कमरा ढरो लाग आवाजा और तेज रोशनी क अभ्यस्त देवादिदेव की उँगलिया म उत्तेजना से कपन शुरू हो गया। बहुत बार उसके बारे म बडी बातें लिखी-कही गयी बहुन बार कैमरे के फ्लैश बल्ब से उसका सवपरिचित विपण्ण मुख झुलस गया था। उस चहरे पर एक ही भावाभिव्यक्ति दखी जाती है। सुख मे विपत्ति म मित्र की मृत्यु पर प्रस सम्मेलन म एयरपोट पर बाजार मे रास्त पर खिडकी म कमेटी की मीटिंग म प्रदशन म विरोध सभाओ म वह चहरा एक जैसा भाव लिय रहता है—परुप गभार रूखा, विपण्ण। कभी किसी ने उसे हँसते नही दखा।

आज नीरव तरल चादी सी आश्चयजनक सध्या मे जब वृक्ष धूसरित हुरे हो रह है हिममडित हिमालय क आगे जसे उसे गूगा बना दता है। बेचैनी होती है। साँस फूलन लगती है। सास फूलती है तो बहुत कष्ट होता है मानो वायु मे ओजान[1] न हो। कथामृत मे एक कहानी है पदमगधी हवा में मछुआरिन को नीद नही आ रही थी। मछलियो वाली सूत की झोली से पानी छिडकते ही उस नीद आ गयी। पहाडी देवदार के वृक्षो से धूपगधी सुगध भर रही है। बतास धूप की गध से भरी है। फिर भी नीद नही है नीद आ नहा रही है। काच की खिडकियो के उस पार तारे टिमटिमा रहे हैं। नीद क्यो नही आ रही है? हवा में ओजोन क्या नही है निजन में आकर अपने को खोजने की बात एक धोखे सी है। प्यासा है। हरेक की अपनी पसद है। वैसे आज तक देवादिदव कभी एक घट क लिए भी अकला नहा रहा था। सभा समिति सेमिनार डिनर लच काक्टल अडडबाजी, वीक एड पार्टी घर पर जमघट। बरसो से देवादिदेव न अपनी पत्नी और बेटे क साथ खाना नहीं खाया। ईप्सिता लडका क साथ खा लती। उसे दोष भी नही दिया जा सकता। देवादिदेव अकसर घर पर खाना नहीं

---

1 एक गस जो वातावरण म रहती है।

खाता। निमन्त्रित रहना। ईप्सिता उन निमन्त्रणों मे न जाती। श्रीयुत और श्रीमती बसु के सम्मिलित निमन्त्रण मे श्रीमती बसु नही आयेंगी, यह जैसे सब मान बैठे थे।

सांस लेने म बडी तक्लीफ हो रही थी। हवा बहुत थी और शुद्ध थी। क्लब के बद कमरे की धुएँ और शराब की गध से भरी हवा मे इससे कही अधिक ओजोन रहता है। बहुत अधिक चैन मिलता, अगर देवादिदेव चमडे से मढी कुर्सी पर बैठा होता, तारीफ करने वाले सामने बैठे होते।

किन्तु, आकाश के नीचे अपना सामना करने के लिए न बैठे रह सकने पर देवादिदेव अपने घर क्योकर वापस जायेगा? घर लौटने के लिए एकात जरूरी है। कभी घर लौटने का अर्थ भलमनसी से घर लौटना था। गोपालकृष्णन के सम्बन्ध मे उसे जो मालूम था, उसे दबाकर जीवनी मे और बातें लिखने से घर लौटना सम्पूर्ण नही होता। शकरदयाल को मीसा मे बद कराके, छिपाकर, उसके कष्ट पाने से दुखी होकर, उसकी किताब खरीदने से घर लौटना पूरा नही होता।

घर लौटने के मान, विवेक के दर्पण मे अपनी नगी शक्ल देखकर आँखें बद किये रहना। घर लौटने के मतलब, ईप्सिता की भाषा मे सारा 'फसाद' एक तरफ रखकर पहले की तरह भला और सघर्षशील लेखक बनना। घर लौटने के मतलब, पास और दूर के लोगों की आँखो मे विश्वासपात्र बनना। वापसी आज बहुत मुश्किल है। वापसी का मार्ग अब बहुत जटिल और काँटो से भरा हो गया है। वापसी की राह मे तमाम काँटे तो देवादिदेव के खुद के ही बोये हुए हैं।

न-न, ईप्सिता समझती रहे, देवादिदेव को स्वय नही मालूम कि काँटे बो-बो कर उसने वापसी का मार्ग स्वय ही कठिन बना दिया है। उसे पता नही था कि वह असत् आचरण कर रहा है। जानता न था कि अविवेक के काम से वापसी की राह मे काँटे उग आते है। असिपत्रों के वन का नरक[1] बन जाता है। पापियो की आत्मा उस नरक का मार्ग पकडकर आगे बढती

---

1. असिपत्र नरक मे मार्ग मे दोनों ओर तलवार की धार की तरह पत्ते रहते हैं जो जरा-सा भी हिलने डुलने पर पथिक को घायल कर देते हैं।

रहती है। दोनो ओर असिधारा के पत्ते पापिया के इधर उधर हटन पर उन्ह लहुलुहान करते रहते है।

देवादिदेव को इतनी बातें नही मालूम थीं। उसन सोचा था कि घर छोड़कर बाहर आने म कोई डर नही है। किसी क स्नह की पुकार पर सदा घर लौटा जा सकता है। छुटपन म देवादिदव बहुत भला था। माँ के बुलाते ही घर लौट आता। बचपन म पद्मा नदी क किनारे एक छोटे शहर म उनका घर था। उनके घर क सामन था तपता हुआ मैदान। मैदान के बीच म पतली पगडडी एसी थी माना उनकी माँ के घन बाला के बीच की माँग हो। सध्या के समय माँ दहलीज पर खडे होकर पुकारती दवू, घर आ।

देवादिदेव घर लौटना चाहता था। वह क्या समझता नही था कि दिन ब दिन वह किस तरह अरण्यदव बनता जा रहा है? अवास्तविक? पहले जीवन कितना सरल था! तब दवादिदेव भी औरो की तरह विश्वास करता था कि क्रान्ति आ गयी है। समाजवाद आ गया है। सब कम्यून मे रहेगे, जीवन समान होगा। हर जिले म कम्यून बन गय थ। रगपुर तब सुर्ख रगपुर था। सुविनय न बहुत सुन्दर गीत गाया था। रेखा सुन्दर गाती थी। वह सुविनय की बहन थी। सुविनय सडक-दुघटना म मारा गया था। जिनके साथ देवादिदेव ने मार्ग पर चलना शुरू किया था, व सब मर चुक थ। 'साथी! साथी! कधे से कधा मिलाओ' गीत किसका लिखा हुआ था? वरुण का। किन्तु वरुण नही मरा। वह अब भी लिख रहा है, लिखे जा रहा है। हँसने पर वरुण की दोनो आँखें हमेशा सिकुड जाती थी। लगता कि कोई बहुत छोटा लडका हँस रहा हो। और भी बहुत लोग थे। जुलूस म देखे चेहरो की कतार-की-कतार, पहचानी-पहचानी शक्लें। वरुण ने उस दिन उसे देखकर कैसा अपरिचित-सा बरताव किया। करते हैं, सभी करते हैं। इसीलिए तो देवादिदेव जान पहचान के लोगो के पास जाते हुए डरता है। नय लोगा के साथ रहना उसे बहुत अच्छा लगता है। एक बार घर लौट सकन पर देवादिदव फिर वरुण के पास जा सकेगा।

लकिन घर लौटना क्या इतना आसान है? अगर सभी-कुछ दूसरी

तरह स होता ? दूसरी तरह से वापसी ? अमरीका म नीग्रो जिस तरह अपने घर की तलाश करत करते अफ्रीका पहुँच ? वैसा होन पर काम बहुत आसान हो जाता। वह मुश्किल काम भी बहुत सीधा है। देवादिदेव घर लौटना चाहता है उस घर म जिस वह स्वच्छा स छोड आया है।

बहुत सच बात है। यह वापसी का सिद्धात भी उसन स्वय नही अपनाया। मामला दूसरी तरह स हो गया। दस बरस पहले उस विपुल मित्र न बुलवा भेजा। व पश्चिमी बगाल के कर्ता धर्ता विधाता हैं।

विपुल मित्र ने उसस कहा था क्या सोच रहे हो ?

—साचूगा क्या ?

विपुलकाय विपुल मित्र बोले बहुत दिनो तक तो लेफ्ट राइट की परेड की, अब राइटट राइट कर रहे हो करो। लेकिन थोडा बहुत सीरियस काम करो। नौसिखियो का जमाना नही है।

दोनो के बीच मे एक मज थी। मेज पर बहुत से कागज-पत्तर और फाइलें और दो गिलास थे—स्काच के। विपुल थोडी बहुत पीने वाला था। देवादिदेव उन दिना उससे कही ज्यादा शराब पी सकता था लेकिन पीकर कभी बहका नही। नशा न चढन की उसकी बात की व्याख्या पाञ्चजन्य इस तरह करता जो आदमी नशा चढ जान के डर से *विटामिन बी या मक्खन खाकर शराब पिय वह आदमी बहुत ही कच्चा* है। निश्चय ही उसके मन म छिपान याग्य बहुत सी चीजें हैं। कुछ कह न दे इसी डर से वह नशे मे धुत होन का खतरा नही उठाता। शराब क्यो पीते हो ? नशा हो इसलिए न ? उस तरह की डिसिप्लिन के आदमी तो हो नही कि उँगली से नाप कर रोज एक ही वक्त शराब पीते हो। पीते हो खूब। अकसर दूसरे के पैसा पर। पीकर भी धुत और सावधान *बन रहते हो। अर्थात शराबी होन का साहस तुम मे नही है। हमारा* वन ऐंड ओनली पुरोहित का सा भयानक शराबी वह बनेगा ? देवादिदेव बसु ? अपने को नगे शिशु की तरह दुनिया के आगे खोलकर रखेगा ? उसम वह हिम्मत है ? पुरोहित नाम पाते ही व्यक्ति धार्मिक बन जाता है उपदश देता रहता है।

विपुल उसे जी-भरकर शराब पिलाता और अपनी योजनाएँ उसके सामने पश करता। पहला काम है, विरोधी कैंप मे घुसपैठ। 'सब जगह घुस पडो। तुम्हारी पार्टी का अजेय किला है, कल्चरल फट—सास्कृतिक मार्चा। देवादिदेव, तुम कल्चरल फ्रट पर सी०-इन-सी०[1] बन जाओ। सर्वाध्यक्ष। तुमको अभी पचास कमेटिया का अध्यक्ष बनाय देता हूँ।'

—अचानक?

—इन सब बातो को लेकर विवाद से कोई फायदा है? उन्ह पता है कि प्रस्ताव अचानक नही आया है। मुझे मालूम है, मैं जानता हूँ कि तुम हमशा शक्ति और अधिकार चाहते रहे हो। मैं तुमको शक्ति दे रहा हूँ, दवादिदेव!

—मुझे, क्यो?

—वह तुमको भी मालूम है।

—हाँ।

तब देवादिदेव चुपचाप अमोघ और सर्वशक्तिमान बनकर पश्चिम बगाल के शासको के दल मे शामिल हो गया। पाठ्य पुस्तक चुनाव कमेटी से लेकर सभी तरह की कमेटियो का सदस्य बन गया—अत्यत प्रतापशाली सदस्य।

ईप्सिता ने कहा था, 'यह क्या कर रहे हो?'

—क्यो? अभी तो यह शुरुआत है।

—बिगिनिंग ऑफ द एड—खात्मे की शुरुआत।

—नही, दूसरा पक्ष विवश होकर समझ गया है कि पश्चिमी बगाल म साहित्य और सस्कृति के क्षेत्र मे वामपथियो का अलग रखन से काम न चलेगा। मुझे स्वीकृति देन का मतलब, वामपथियो का स्वीकृति देना।

—तुम क्या अपन को वामपथी समझते हो?

इस बात पर देवादिदेव बहुत नाराज हुआ। बहुत दिनो तक उसने ईप्सिता से अच्छी तरह से बात न की। दवादिदेव न कहा था, मैं साबित

---

1 कमाडर इन चीफ प्रधान सेनापति।

कर दूँगा, यह बिगिनिंग ऑफ द बिगिनिंग—आरंभ का प्रारभ—है।'

ईप्सिता ने कहा, 'अब तुम लौट न सकोगे।'

—जीवन दो पैसों का सस्ता रोमांस नहीं है, ईप्सिता।

वही देवादिदेव आज घर लौटना चाहता है। लेकिन घर लौटना क्या इतना आसान है? विपुल मित्र से अलिखित शर्त पर अदृश्य स्याही में दस्तखत कराने के बाद?

उस दौरान कैसा वातावरण तैयार हुआ था। भारत-चीन सीमा-संघर्ष के बाद ही बुद्धिजीवियों को जाल में फाँसने का प्रोग्राम शुरू हुआ। 'मुक्त साहित्य संस्था' का नाम कई बार सुर्खियों में छपा था। चीन के आक्रमण की निन्दा करना ही काफी न था, उसके साथ ही अपना स्वदेश-प्रेम भी घोषित करना होगा, कम्युनिस्ट-विरोधी शिविर में सम्मिलित होना पड़ेगा।

सभी महत्वपूर्ण साहित्यिक इसी आशय का अपना वक्तव्य देने की दौड़ में सम्मिलित हुए। गैर-राजनैतिक या दक्षिण-पंथी या शुद्ध कला के हिमायती ही नहीं, कभी जो वामपंथी आंदोलन में शामिल थे वे भी नाम लिखाने की दौड़ में थे और उनके नाम भी खूब दिखायी दिये थे। बुजुर्गों में भृगु सान्याल और युवकों में अमृत दत्त तक, दक्षिणतम शिविर में ऐसे शामिल हुए कि फिर जमीन पर न उतरे। भृगु-दा मर गये, अमृत आज भी टिका हुआ है। देवादिदेव की तरह ही वह भी अकेला है।

देवादिदेव को स्वीकृति देने के तमाशे में नहीं बुलाया गया। उसे क्षमता का टोप पहना दिया गया और साथ ही उसने चरम दक्षिणपंथी शिविर के बहुप्रचारित समाचार-पत्र में नियमित रूप से लिखना शुरू किया। चरम दक्षिणपंथी शिविर में सम्मिलित होकर उन दिनों बहुत बदमाशी से काम करना पड़ता था। जैसे क्रांतिकारियों के साथ लेक पर और मैदान में बाउल[1] नाच एवं सांस्कृतिक मेलों के मंच पर बैठना। देवादिदेव ही एकमात्र ऐसा व्यक्ति था, जो यह सब कर सकता था और फिर अपने दल में 'चिरकाल से प्रतिबद्ध लेखक' के रूप में प्रशंसित भी

---

1. हिन्दू गायकों के गान।

हुआ जा सकता था। उसके मुकाबल अमृत दत्त न कम बुरे काम करके बहुत बदनामी कमायी।

उसक बाद उसके बाद ।

घर लौट आन का सिद्धात उसका अपना नही था। इस बीच एक के बाद एक कई घटनाएँ घटी। इस अध्याय की शुरुआत सन सत्तर से हुई थी। चरम दक्षिणपथी शिविर म और किसी तरह का पतन नही हो रहा था। कुछ छिटपुट घटनाएँ अवश्य हुई थी।

एक पत्रिका की दसवी वर्षगाँठ के उपलक्ष्य म ग्रेट ईस्टन मे एक विशाल आयोजन हुआ। उसका निमत्रण पत्र मिला अनुष्ठान क दूसरे दिन। उसने सुना था अनुष्ठान म उसे प्रमुख सम्मानित अतिथि बनाया जायगा। वह सम्मान मिल गया अमृत दत्त को।

परिणाम यह हुआ कि उसने अपने सिद्धात के अनुसार पत्रिका के कणधारो की इच्छा की उपेक्षा कर उस वप का पुरस्कार मती गुह राय को दिला दिया। फलस्वरूप उसके इस बदला लन की बात पर उक्त पत्रिका मे बहुत सी चिटिठयाँ प्रकाशित हुइ।

वृद्ध साहित्यकार तारक गागुली की मृत्यु पर जो सभा हुई उसम उसे बुलाया ही न गया हालाँकि उस सभा के कायकर्ता उसके अपने खेमे के लाग थे। उसस कह दिया गया कि पता ही नही था कि तुम यहाँ हो या मनीला म।

फुल्लरा मित्र उसकी प्रिय पाठिका और सडे क्लब की सभानत्री थी। फुल्लरा के घर हर रविवार को बहुत जोरदार और ह्विस्की से युक्त साहित्यिक दिवस का आयोजन होता था। फुल्लरा का बेटा उग्र राजनीति म सम्मिलित होकर गायब हो गया था। फुल्लरा उससे कुछ कहे बिना विपुल मित्र के पास चली गयी। यह खबर अभागे बदजात पाञ्चजन्य न उसे बतायी थी। उसन फुल्लरा से उस न बतान का कारण जानना चाहा। फुल्लरा न अपन पति का नाम लकर कहा मानी न कहा है कि तुम विपुल की नजरो मे गिर गय हो।'

विपुल न उससे कहा था तमन मेरी बहुत बदनामी की है जी। कलकत्ता म आजकल बहुत खून-खराबा हो रहा है होशियार रहना।

मेरी मिनिस्ट्री नही है कि मेरे कहने पर सब-कुछ हो जायेगा।'

—क्यो ? मैं होशियार क्यो रहूँ ?

—कह दिया, बस मान लो।

सत्तर मे कलकत्ता म और उसके आसपास बडा खून खराबा हुआ था। खुलेआम मुठभेडो जैसी बातें हुई। यद्यपि देवादिदेव कलकत्ता के एक निरापद अचल म रहता था, फिर भी युवको के इस मृत्यु-उत्सव से उसे विशेष आघात लगा और वह अनुपम चकलादार के पास भागा।

—अनुपम, क्या लाइन है ?

—कैसी लाइन ?

—पार्टी-लाइन।

—किस बारे मे ?

—यही नक्सलवादी लडको की हत्या ? मत्रिमडल मे तो हमारी पार्टी भी शामिल है। कोई वक्तव्य क्यो नही दिया जा रहा है ?

—किमने कहा, वक्तव्य नही दिया गया है ? पढकर देखो।

अखबार की कतरन। सन् 70 10वी जनवरी। देवादिदेव पढता है। *उसकी पार्टी की आन्ध्र प्रदेश कौंसिल की सब-कमेटी ने श्रीकाकुलम* मे पुलिस के अत्याचारो की जाँच की है। कमेटी ने सबधित इलाके का दौरा किया है और रिपोर्ट दी है कि नक्सलवादी आदोलन को बडा आघात लगा है और अब आदोलन स्पष्टत समाप्त हो रहा है।

"कई बडे-बडे नक्सलवादी नेता पुलिस की गोली से मारे गये हैं या कैद कर लिये गये हैं। पिछले दो महीनो स नक्सलवादियो की गतिविधियाँ बद है क्योकि हथियारबद पुलिस बडी सख्या मे तैनात है और पुलिस द्वारा उस क्षेत्र क चप्पे-चप्पे की खुफिया जाँच जारी है। इससे पहले नक्सलवादियो को जनता स जो सहयोग और समर्थन मिला था, वह अब मौजूद नही है।"

कमेटी ने नक्सलवादी नेताओ से अनुरोध किया कि वे सघर्ष का अपना मौजूदा तरीका छोड दें। उनकी सघर्ष-पद्धति जमीदारो, महाजनो और सरकार की सहायक सिद्ध हो रही है। साथ ही, यह प्रजातान्त्रिक आदोलनो का दमन करके जनता को बहुत कष्ट मे डाल रही है।

कमेटी न सरकार से तथाकथित उपद्रवग्रस्त अचल मे पुलिस का ताडव फौरन बन्द करन को कहा। यह भी माँग की गयी कि सभी घटनाआ की विभागीय न्यायिक जाँच करायी जाये आदिवासियो की जमीन पर कब्जा करन वाले मैदान के सभी लोगो को वहाँ से निकाला जाये और जातने योग्य सारी वजर भूमि का वितरण किया जाय।

देवादिदेव का कहना था कि आध्र म निश्चय ही अच्छा काम हुआ है लकिन इस विषय मे हमारा वक्तव्य क्या नही जारी किया गया है ?

—अभी नही जारी किया गया है किया जायेगा।

—क्या यह निश्चित किया जा चुका है ?

—तुम तो बड आदमी हो नही तो तुम ही कुछ विरोध उरोध की व्यवस्था करो।

—मैं ?

—क्या नही ?

देवादिदेव चुप रहा। विपुल के साथ उसका एक गुप्त समझौता था कि वह कभी मच पर उसके साथ नही रहेगा। उसके अलावा कलकत्ता या पश्चिमी बगाल म नक्सलवादियो के प्रति वतमान मत्रिमडल का रुख या नीति क्या है उसमे कही ज्यादा जरूरी यह जानना था कि श्रीमती भारत इस विषय मे क्या सोचती है ? उनकी नीति नक्सलवादियो को निष्ठुरता से कुचल देने का है। यही विपुल की भी नीति है। आज मत्रिमडल म विपुल शीषस्थान पर नही है लेकिन यह कोई चिता की बात नहीं है। राजनीति के खेल म पासा उलटा पडते ही विपुल दिल्ली छोडकर कलकत्ता आ जायेगा आ रहा है। नही देवादिदेव अपने को मुसीबत म नही डाल सकता।

अनुपम ने कहा था वियतनाम के बारे म क्या सोचते हो ? अमरीकी साम्राज्यवाद वियतनाम म जो कर रहा है उससे।

—कलकत्ता के लडको की बात कौन सोचेगा ?

देवादिदेव अपनी बात आतरिक दुख से कहता। सच कहन म क्या हज है ? पश्चिमी बगाल और कलकत्ता के युवका की हत्या अब दूर की बात नहा रह गयी थी निकट आ गयी थी। जिन जिन युवको को देवादि

देव पहचानता था नही पहचानता था, उनके लिए भी वह डरने लगा था। युवक बडे नासमझ है। पता नही कि जान-पहचान का कौन-कौन लडका मारा गया है! पता लगने पर देवादिदेव भी कैसी मुसीबत मे फँस जायेगा? उस समय उसे परेशानी होगी। परेशान होना देवादिदेव के लिए ठीक न था। ऐसे मे वह बहुत-से मुखौटे पहनकर बहुतेरे काम एकसाथ नही चला सकता। ठीक उसी तरह, जैसे नशे मे होने की बात उसे ठीक न लगती थी। इसीलिए तो मक्खन या विटामिन-बी खाकर वह शराब पीता। खूब शराब पीने के बाद भी नशे मे न आकर सबको ताज्जुब मे डाल देता।

'वियतनाम की बात सोची जायेगी' कहकर देवादिदेव उठ आया था। उस दिन वह थोडा जल्दी घर लौटा। इस तरह जल्दी लौटना बडे आश्चर्य की बात थी। घर लौटकर देखा कि लडके को खाना देकर ईप्सिता बाहर जा रही है। ईप्सिता सध्या के बाद कभी घर से बाहर नहीं निकलती थी।

—बात क्या है?

—जा रही हूँ।

—कहाँ?

—अशनि राय के पास।

—क्यो? डी० आई० जी० के पास क्यो जा रही हो?

—नकुडबाबू के बेटे को मार डाला गया है।

—नकुडबाबू?

—पर्ल फार्मेसी के कपाउडर, जिसने तुम्हे विटामिन—बी न्यूरॉन के इजेक्शन दिए थे।

—उसके बेटे को मार डाला? किसने?

—मारा तो कल ही था। सवेरे के अखबार मे भी था।

—वह तो किसी कॉलोनी की घटना थी। पाँच लोगो को. .।

—नकुडबाबू उसी कॉलोनी मे रहते हैं। उन पाँच लोगो मे बलाई भी था। उसे मैंने घर क्यो जाने दिया!

—'जाने दिया' माने?

—यही सुमन के साथ था।

—मेरे घर पर रहे? और मुझे पता भी नहीं!

—तुम्हें बताना मुमकिन नही था।

—क्यों ?

—तुम्हें पता लगने पर वह यहाँ नही रुकता।

—क्यों ?

—तुम पर बलाई विश्वास नही करता। कई दिन से फार्मेसी मे ही सो रहा था। बुखार हो गया था इसलिए यहाँ...।

—तुम वहाँ जाकर क्या करोगी ?

—बलाई की लाश माँगूगी।

—तुम्हारे कहने से पुलिस मान जायेगी ?

—देखती हूँ। अशनि राय मेरी फुफेरी बहन के पति हैं।

—मैं तुम्हारे साथ चलता हूँ।

—नही।

ईप्सिता ने सर हिलाया, 'तुम नही चलोगे।'

उस रात ईप्सिता लौटी ही नहीं। दूसरे दिन बहुत देर से लौटी। चेहरा एकदम सफ़ेद और घबराया हुआ था। देवादिदेव गुस्से और डर से फटा पड़ रहा था। ईप्सिता बिलकुल अजनबी आवाज में बोली, 'शोर न मचाना। पुलिस ने बहुत को आपरेट किया है। तुम्हारे मकान की कोई पड़ताल नही होगी। दाह कर आयी हूँ।'

सारी जानकारी बहुत तीखी थी। ईप्सिता ने कहा, "नकुड़बाबू ने तीन महीने पहले तुमसे कहा था कि बलाई को बाहर भेजना चाहता हूँ, थोड़ी मदद कर दीजिये ?"

—कहने से क्या होता है ? जो लड़का बाप की तकलीफ़ न समझे, थैंक्स टु सेन्सलेस वायलेन्स...!

—नकुड़बाबू को विश्वास है कि तुम मदद करते तो यह सब-कुछ न होता।

—नकुड़बाबू का विश्वास है ! नकुड़बाबू कौन हैं ?

—बलाई के पिता।

देवादिदेव को लग रहा था कि वे ईप्सिता से हारते जा रहे है। ऐसा महसूस होने पर उनका गुस्सा बढ़ गया है। अचानक घर मे मुसीबत लाने के कारण उनके मन मे समस्त नक्सलवादी आदोलन के लिए घृणा हो गयी। उन्होंने मन-ही-मन निश्चय किया कि अब से वह नक्सलवादियों के बारे मे जरा भी परेशान न होगे। दूसरे बड़े उद्देश्यो के लिए काम करेंगे और उन्ही पर ध्यान देंगे।

शाम को नहा-धोकर टेलीफोन उठाते ही कलकत्ता का बाज़ारू साहित्य-समाज भी वही सोचेगा, जैसा वह सोच रहे है। युवकों की लाशें इस समय उनके दरवाजे पर पड़ी हैं। इसलिए महान और महानतर घटनाओ म उलझना जरूरी है। अमरीकी सूचना विभाग को वियतनाम के बारे मे सभी की सम्मतियाँ पेश कर दी गयी। बडी धूमधाम से उक्त कार्य सम्पन्न हुआ।

जीवन अकसर बहुत अप्रत्याशित मोड लेता है। उस दौरान एक के बाद एक बहुत-सी महत्वपूर्ण घटनाएँ घटी। देवादिदेव का पार्टी का पुराना दोस्त बाबू जीवन उसके पास आया और उसने देवादिदेव पर हमला बोल दिया, "मेरा बेटा बादल पुलिस की गोली से घायल होकर अस्पताल मे पडा हुआ है। तुम अभी चलो, नही तो वे लोग उस पर ध्यान न देंगे।"

—बादल भी नक्सल है?

—बिलकुल। नही तो मेरी यह हालत कैसे होती?

—तुम्हारा बेटा होकर वह नक्सल हो गया?

—मेरा भाग्य तुम्हारे जैसा तो है नही। भाभी लडको की गार्जियन बनी हुई हैं। इसलिए तुमको कोई फ़िक्र नही। मेरी घरवाली तो वीरांगना है। सब-कुछ जानते हुए भी कुछ न बोली।

—तुम क्या करते रहे?

—मेरा वह बेटा राजनैतिक विचारधारा लेकर.. छोडो उसे, चलो, चलोगे न? मैं तो किसी को जानता नही, पहचानता नही। तुम्हारा नाम याद आया।

—मैं जाकर क्या करूँगा, जीवन?

—नही चलोगे?

—बताओ तो, जाकर करूँगा क्या ?

—सो क्यों चलोगे ? सड़क पर जाकर वियतनाम-विरोधी जुलूस निकालोगे। उससे अखबार में तसवीर निकलेगी। जीवन सामन्त तो निकम्मी पार्टी का साथी है। तुम एकदम जानवर हो गये हो, समझे ?

—चलो, चलता हूँ।

इस वक्त जीवन ने बहुत लड़कपन किया। उसने रोकर आँसू पोछते हुए कहा, "जाने दो भाई, दया नहीं चाहता।"

—सो यह देखो, आँखें पाछो।

—रहने दो, भाई !

देवादिदेव लाचार होकर गया। नक्सलबादियों का मामला धीरे-धीरे उलझता जा रहा था। हर एक सुखी और शान्त दहलीज पर खून से लथपथ छाया थी। यह सभी कुछ मध्यवर्ग के लोगों को नैतिक पीड़ा देने के लिए काफी था। अस्पताल में बादल बहुत ही रूखी गंभीरता से होंठ बंद किये हुए पड़ा था। देवादिदेव ने कहा, 'जीवन, यहाँ परेशान होने से कोई फायदा नहीं। आओ देखते हैं।'

—क्या देखोगे ?

—किस तरह से बादल को जिन्दा रखा जाये ?

—क्या करोगे ?

—देखते हैं। जेल ही में रखें तो जिन्दा तो रहेगा।

—वह तो मुचलका भी न भरेगा और छूटेगा भी नहीं।

—देखेंगे।

अजीब बात है। बादल के मामले में देवादिदेव ने अपनी आत्मा को पाप-मुक्त करने का प्रयत्न किया। सभी संबंधित स्थानों पर भाग दौड़ की। अगर बादल सामन्त सहयोग दे तो उसे कलकत्ता के बाहर हटाकर कई बरस तक जीवित रखा जा सकता है। यह व्यवस्था कर दी गयी। यह बात बताने के लिए वह जीवन के घर गया। जीवन की वीरांगना पत्नी बेटे को जीवित वापस पा सकने की बात जानकर कृतज्ञता से रोने लगीं। और साथ ही रुँधी आवाज में बोली, 'क्या वह मान लेगा ?'

—उसे मनाइये आप। यह राजनीति गलत राजनीति है, भाभी ! इस

राजनीति से कुछ भी नही होगा। हमारे बीच के अच्छे-अच्छे लडके मारे जा रहे हैं। और तो कुछ हो नही रहा है।

—स्कॉलरशिप मिली थी।

—देखिये, जरूर मान जायेगा।

—बाहर उसके मामा कानपुर मे रहते हैं।

—हां, हां। और ।

—न, रुपये मत दीजिये।

देवादिदेव ने जीवन की पत्नी को, गरीब आदमी के ऋणी न होने के अहकार को चोट नही पहुँचायी। बादल का काम करने की प्रसन्नता से उसका मन पख खोले था और देवादिदेव सडे क्लब की ओर चल पडा। वहां देवकी बनर्जी न व्हिस्की पीते-पीते देवादिदेव का धन्यवाद ग्रहण किया और बोले, लगता नही कि लडका बात सुनेगा। लडके बहुत समर्पित है। लगता है, सुनेगा नही।'

—सुनेगा, सुनेगा।

देवादिदेव कहता जा रहा था और व्हिस्की पी रहा था। केकडे का गूदा और सुअर के गोश्त के कबाब खा रहा था।

बादल की बात उसे याद नही रही। छह दिन बाद वह जब कॉलेज स्ट्रीट मे था तो जीवन सामन्त के साथ दो और व्यक्ति इसी तरह भाग्य की ठोकर खाये हुए उसके कमरे मे आये। पिकासो की तसवीर के नीचे उजबेकिस्तान के रगीन कालीन पर पछाड खाकर जीवन सामन्त बोला, "यह तुमने क्या किया, देवादिदेव ? तुम्हारा सुझाव न जान पाता तो बादल बच जाता। तुम्हारी बात कहने पर उसने कहा, सोचूंगा। उसके बाद ही उसने जेल के अस्पताल से भागने की कोशिश की। इसी से पुलिस ने उसे, पुलिस ने उसे. ।'

—क्या किया ?

—मार डाला।

जीवन ज़ोर-से रोने लगा और देवादिदेव को बेटे की मौत के लिए बार-बार दोष देने लगा। वह देवादिदेव को कुछ भी कहने का मौका न दे रहा था और इसी तरह रोते-रोते कमरे से निकल गया। सारी घटना ने

देवादिदेव को कटु बना दिया। बादल और उसके पिता के संबंध को लेकर उसने झटपट 'राजू, लौट आ' कहानी लिख मारी, लेकिन कटुता दूर न हुई। बादल की मृत्यु के बारे में सभी बातों का उसने पता लगाया। उसे सब बातें मालूम हैं—यह सोचकर वह बहुत घबरा गया और उसने आगे की खोजबीन बंद कर दी।

बादल की रीढ में गोली लगी थी। वह खड़ा भी नहीं हो सकता था। अतएव अस्पताल से भागने की कोशिश उसके लिए असंभव थी।

बादल को सोयी हालत में ही अस्पताल से हटाया गया।

दूसरे दिन जेल के फाटक के पास गोली से बिंधी उसकी मृतदेह मिली थी। घायल आसामी ने भागने की कोशिश की थी, यह था पुलिस का बयान लेकिन पगली घंटी[1] नहीं बजी थी।

बादल के शरीर में हर स्थान पर कई गोलियाँ लगी थी। कॉलरबोन में, पैरों में गोलियों के छेद थे। मारने का उद्देश्य न होता तो गोलियाँ दूसरी जगह लगी होतीं। उसकी मौत खून बहने से हुई थी।

यह सारी जानकारी देवादिदेव को पूरी तरह परास्त कर गयी। वह अनुपम के पास भागा। अनुपम ने उसे बताया कि आध्र के नक्सलवादियों पर पुलिस के हमले के बारे में पार्टी बहुत ही सावधानी, सतर्कता बरत रही है। मौका आने पर पश्चिमी बगाल के बारे में भी यही रुख रहेगा। तभी अनुपम एकाएक कह बैठा कि 'पार्टी क्या करेगी, तुमको इस विषय में बताना सभव नहीं है।' इससे देवादिदेव के अहं को चोट लगी—तो अब अनुपम उस पर विश्वास नहीं करता है!

आहत अहं बहुत समय बाद संतुष्ट हुआ। कई महीने बाद अचानक अमरीकी जंगली जीव संबंधी बहुप्रचारित पत्रिका के भारतीय प्रतिनिधि ने देश-विदेश को खोज निकाला। नक्सली लोग जंगल के जीव न थे, कलकत्ता जगल न था, फिर भी देवादिदेव के कधे पर बंदूक रखकर उस प्रतिनिधि ने अचानक नक्सलवादियों के बारे में बहुत जिज्ञासा दिखायी। वह श्वेतांग बहुत ही सरल था। उसने देवादिदेव को समझाया कि नक्सल

---

1. जेल मे गड़बड़ी होने पर जो घंटी बजती है।

शिविर से हटकर, दक्षिणपथी शिविर की क्रांतिकारी लेखनी को भी जगाना चाहिए। देवादिदेव ने इस समाचार को सही स्थान दिया। परिणामस्वरूप दक्षिणतम शिविर मे सहसा तीन कलम विद्रोही बन गये। निष्कर्ष पर पहुँचने मे उन्हें देर लगी और बहुत दिनो बाद आपात-स्थिति की घोषणा होने पर उन तीनो कलमो वाले तीन जोड़ी हाथो मे हथकडियाँ लग गयी।

इसी तरह देवादिदेव का जीवन आगे बढता रहा। उसके बाद उसे फिर यश दिलाने के लिए मुजीब का युद्ध आरम्भ हुआ। नक्सलवादी आदोलन चुपचाप चलता रहा, क्योंकि वह पश्चिमी बगाल मे केंद्रित था। लेकिन बागला देश के विषय मे चुप रहने से काम नही चलने वाला था, क्योंकि वह सीमा के उस पार की घटना थी। देवादिदेव ने इस मौके पर अपने को उक्त दक्षिणपथी शिविर की नेक नजरो मे रखा और सहानुभूति-परक लेखन से बागलादेश के मुक्ति-योद्धाओं पर पाक सेना के सैनिकों के अत्याचारो के बारे मे बढा-चढाकर लिखा।

परिणामस्वरूप उसका अकल्पनीय अभिनदन होता रहा। अचानक आश्चर्य हुआ कि एक दिन अनुपम उससे कह बैठा, 'कलकत्ता के आसपास इतनी पैशाचिक हत्याएँ हुईं और उस बारे मे तुमने कभी कुछ नहीं लिखा। क्या सारी पैशाचिकता बागलादेश मे ही घटित हुई है?'

देवादिदेव को मानो अचानक किसी ने पीछे से छुरा मार दिया हो।

अनुपम भद्दे ढग से हँसने लगा और बोला, 'पता है, सबके मर जाने पर ही तुम लिखोगे!'

इसी तरह सब चलता रहा। 1972 के चुनावों मे विपुल मित्र क सत्ता मे लौटने पर देवादिदेव भी फिर से निश्चिन्त और स्थायी आसन पर आसीन हुआ। 1975 का आपातकाल उसके लिए वरदान सिद्ध हुआ। अत्यन्त निश्चिन्त मन से वह 'श्रावण की सध्या मे', 'मन की गभीरता मे अकेला', 'झील मे वसन्त' जैसे प्रयोगवादी उपन्यास लिखता रहा। हिंसा की राजनीति ने मनुष्य की मूल अनुभूति को भुला दिया था। प्रेम और प्यार के प्रति विश्वास लौटाने की आवश्यकता थी। देवादिदेव-रचित नर-नारी सत्तर-इकहत्तर के कलकत्ता मे स्थापित हुए और प्यार के लिए

वे बडे वेग से पलामू के जगलो को, कश्मीर मे, हिमालय की तलहटी की ओर निकल पडे। तीन पुस्तकों का फिल्मीकरण हुआ और 'झील मे वसन्त' हिट हुई। सदाबहार प्रेमी जोडी ने इस चित्र मे फिर एकसाथ काम किया और प्रौढा नायिका और प्रौढ नायक द्वारा एक साथ पहलगाँव म गीत गाये गये।

सभी कुछ ठीक-ठाक चलता रहा, अनवरत चलता रहा। किन्तु अचानक देवादिदेव को दिल्ली से एक ज़रूरी सूचना मिली। सूचना इतनी ज़रूरी थी कि वह अपन ही पैसो से हवाई जहाज से दिल्ली के लिए रवाना हो गया। उसे बहुत ही बुरा लग रहा था। लग रहा था कि हवाई जहाज ठीक से नही उड रहा है। इडियन एयर लाइस की सेवा म उसे अचानक गिरावट दिखायी देन लगी। उसे बेकार मे गुस्सा आने लगा।

देवादिदेव को पता नही था कि उसे घर लौटन को कहा जायेगा। दिल्ली पहुँचते ही वह मनोज दवे के दफ्तर की ओर भागा। हाँ, उसका खयाल गलत न था। उसका खयाल कभी ग़लत न होता था।

मनोज दव उसे डाइन बुढिया की तरह 'शीऽऽऽ' कहते हुए एक गुप्त कमरे मे तुरन्त ले आया। अचानक परदा हटा और भीतर आयी श्रीमती कुलकर्णी। उनका चेहरा शिशिर मे धुले गुलाब की तरह पवित्र और कोमल था। कठस्वर कोमल और चेहरा मसृण था। छाती उठी हुई। उन्ह देखकर कोई नही कह सकता था कि उनकी उम्र साठ बरस है। चेहरे की त्वचा और वक्ष *विलायती प्लास्टिक अस्त्रोपचार स सजीव थे। कमनीयता को* नये सिर से पान के लिए वह पुरानी चमडी और पुराना वक्ष विदेश मे रख आयी थी। श्रीमती कुलकर्णी का बाहरी परिचय कुछ इस तरह का था। वह सतोषी माँ की मानवीय राजदूत और बहुत-से लोगो की आध्यात्मिक गुरु थी। वह बहुत शक्तिशाली और प्रभावशाली स्त्री थी।

देवादिदेव को देखकर वह निद्रालु नत्रो से हँसी और दुलार-भरी आवाज मे मनोज दव से बोली, 'नवपत्र, हरल्ड और वैलियेंट अखबारो के सपादको को गिरफ्तार कर लिया गया है ?

—जी।

—केवल के मकान पर छापा मारने का क्या हुआ ?

—केवल आज '—' के घर डिनर खा रहे है। डिनर समाप्त होने पर रात के अतिम पहर मे रेड होगी।

—यह कौन हैं ?

—देवादिदेव बसु।

—इन्हे सब बता दो।

—बता रहा हूँ।

—नही, मैं खुद बताऊँगी।

—बताइय।

—बासू सुना ।

मिसेज कुलकर्णी टूट फूटे शब्दो म ढेर-की-ढेर 303 छोडती रही। 'बासू ! पश्चिमी बगाल की हालत से वह बहुत असतुष्ट है। इमर्जेंसी के बारे म तुम लोगा का समर्थन ही काफी नही है। उनका कहना है कि इमर्जेंसी के बारे म पश्चिमी बगाल के लेखक बहुत दब्बू है।'

—दब्बू रहन की बात है। विपुल ने मुझे ।

—विपुल का नाम मत लो। विपुल इस वक्त उनकी गुड बुक मे नहीं है। हिमालय की नदियों मे इलिश मछलियो की खेती के मामले मे रुकावट डालन से विपुल अत्यन्त रुष्टता का कारण बन गया है।

—क्या हिमालय की नदिया मे इलिश मछली होती हैं ?

—रूस न तो साइबरिया को घास से पाट दिया है। अच्छी मिसाल सामन है, फिर भी तुम लोग ऐसी बातें क्यो कहत हो ? मत्स्य विज्ञानिया का कहना है कि बफ के पानी वाली नदियों म हिलसा खूब फलेगी। उम जान दो !

—क्या कह रही थी ?

—इमर्जेंसी का आगे बढकर अभिनन्दन करना ही काफी नहीं है, बासू ! लेखको स राष्ट्र इमर्जेंसी के विरोधियो के खिलाफ कडे रुख की आशा करता है। इतनी कोशिश करके तीन कलमची तैयार किय गय, वह भी ऐसे अखबारो के जो प्रतिक्रियावादी हैं।

—हम लागो का कैम्प किस तरह इमर्जेंसी को गालियाँ दे ?

—क्या न द ? इमर्जेंसी न जिस तरह सबको सुखी किया है, तुम

लोग उसे समर्थन दे रहे हो। ये बातें जिस तरह सच हैं, उसी तरह यह भी सच है कि कम से-कम अपने में से ऐसे दो-चार लोगो को, जिन पर विश्वास किया जाता हो, इमर्जेंसी का विरोध कर जेल भेजना चाहिए था। उससे पश्चिमी बगाल की इमेज बनती।

—अगर मालूम होता।

—सच कहूँ, तुमसे अधिक तो आध्र के लोग तेजस्वी हैं। वहाँ लेखक नक्सलवादी बन गय हैं गोलियो से मर रहे हैं जेल जा रहे है। नो, नो, आध्र के बारे मे उन्ह कोई चिता नही है। आध्र उनका रेड फोर्ट है। लेकिन लेखको की इमेज वहाँ बहुत अच्छी है। यह कैसी बात है कि पश्चिमी बगाल मे एक लेखक भी नक्सलवादी नही बना, जेल नही गया?

—सच।

—इस स्थिति म मुझे कुछ भी अच्छा नही दिखायी दे रहा है। यह बात क्या सच है कि नक्सलवादी लोग मूर्तियो के सिर काट रहे है?

—कुछ कुछ।

—गुड, वेरी गुड। इस वक्त कलकत्ता मे, भारत के चार सौ सतत्तर साधु-सन्यासियो की मूर्तियाँ स्थापित करना उचित है।

—चार सौ सतत्तर साधु?

—हाँ, जितनी बार ध्यान करती हूँ, यही एक सदश मिलता ह। छोडो, एक अखिल भारतीय लेखक सम्मेलन करन की बात सोचनी पडेगी। उसम इमर्जेंसी को समथन दो। उसीके साथ कलकत्ता म कुछ विरोधी लेखको की तलाश करो।

श्रीमती कुलकर्णी अब भुवनमोहिनी मुसकान मुसकरायी। यह विशेष मुसकराहट उनके जीवन की एक महत्वपूर्ण घटना स जुडी थी। हिमालय मे एक बर्फ से ढके गड्ढे के पास खडे होकर वह इसी मुसकराहट के साथ मुसकरायी थी। किसी कैमरे वाले न फोटो खीच ली। हिमालय सीमान्त की तूफानी यात्रा समाप्त कर, हेलीकॉप्टर मे उत्तरकाशी लौटते समय माँ-भगवती ने उनका चेहरा इस मुसकराहट के साथ देखा और तभी वह फौरन उतर कर उनके पैरो पर गिर पडी। उसके बाद ही कुलकर्णी पत्नी का दिल्ली आगमन हुआ और धीरे धीरे अब वह लोगो का भाग्य बनान-

बिगाड़ने लगी। जाना नाटको म नियति के चरित्र की भाँति ही वह तूफान की तेजी से भारत के भाग्याकाश म अदश्य प्रवश और प्रस्थान करती रहती है। उस समय भी हँसते हँसत वह परदे की ओट म ओझल हो गयी।

देवादिदेव न माथे का पसीना पोछा। अभी तक विपुल था देवादिदेव बेफिक्र था। अब उसे कौन बचायेगा ?

मनोज दव बोल तुमसे और काम भी है।

—क्या ?

मनोज न एक नाम बताया। देवादिदेव को बिजली छू गयी। बोला क्यो कुछ जानते हो ?

— नही मुझ किसी न कुछ नही बताया। फसला लेन की स्थिति म हम अभी नही हैं। हमम स कोई अफसर कुछ दिना से सिफ चपरासी या ड्राइवर का काम कर रहे है। खबर पहुँचा देते है। किसी का यहाँ से वहाँ ले जात है। ल जाते वक्त अपनी गाडी खुद चलाते हैं। शोफर वाली विभा गीय गाडी नही लेते। यही हमारा काम है।

—ऐसा क्या करते हो ?

—टिके रहन के लिए।

—सचमुच क्या नवल नौनिहाल और पिल्लई को अरेस्ट किया गया है ?

—जरूर।

—ओह !

—क्या हुआ ?

—नवल पिल्लइ !

—उन्होन आप ही अपन पर मुसीबत बुलायी।

—तुम नवल के !

—साला हूँ। मरी पत्नी बहुत खफा हो गयी है। चला।

—इन महिला न जो भी कहा !

—सब सच हो सकता है। और सभी कुछ ठीक ठीक बाद भी अगर ऊपर स विपरीत निणय आय तो यह बड है कि बामू स जो कहा था वह ध्यानमग्न अवस्था म

कहा था। यह कहकर तुम्ह मुझ फँसा कर यह हिमालय की ओर प्रस्थान कर सकती है। हम यहाँ बड कठिन दिन गुजार रहे है दवादिदव ! मुझस कुछ न कहा।

दवादिदव को मनाज दव न एक और स्थान पर पहुँचा दिया और अचानक उससे अलग हो गया। उस रात वह भी मीसा म घर लिया गया। राजधानी का अधकार और मवव्यापी मीसा मिल जुल कर वातावरण पर हावी थ।

मनोज दव न उसे जहाँ पहुँचाया था वह सन1911 12 म बना भवन था। बडा सा बगीचा था। बड बड वृक्षा की नीरवता क बीच मकान सोया पडा लगता था। जिनक इस भवन म यह दफ्तर खुला था दुनिया म अपना सहारा वह आप और उनकी लगोटी थी। सहज और आडवररहित जीवन के लिए वह प्रसिद्ध थ। उनसे मिलन के लिए एक कमरे से दूसर कमरे म जाते समय कडी सुरक्षा व्यवस्था पार करना पडती थी। देवादिदेव को लगा कि शिक्षा समाचार सस्कृति जगत क बहुत स लागा को मीसा म गायब करा देने के बाद यह भलमानुस डरे डरे से हैं। कोई भी बदमाश बम मारकर उन्ह भी गायब कर सकता है।

एक बडा सा हाल था। कमरे के दोनो ओर छत के करीब चमकीली ट्यूबें जल रही था। रोशनी के नीच लम्बी मेज थी। मेज पर चमकीली रोशनी थी। अच्छी पोशाकें पहने कतार की कतार औरतें पत्रिकाएँ उलट रही थी। भारत की सारी पत्र पत्रिकाएँ यहाँ आती थी। कहाँ से कौन सी आपत्तिजनक रचना प्रकाशित हो रही है इस विषय म प्राथमिक रिपोट इसी कमरे स निकलती है। उसके बाद उस खबर के आधार पर जाँच चलती। अन्त म मीसा अवश्यभावी आता था। तडके धावा और गिरफ्तारी। दिल्ली की सडको पर पुलिस की गाडिया दिन म कभी नही चलती। जिनके निर्देश पर इतनी सख्ती थी सुना जाता था कि व अपन सिंहासन पर अत्यन्त निश्चिन्त हैं। निश्चिन्त होन का क्या यही नमूना है ? इतनी सख्ती धरपकड और गोली गोला की जरूरत उन्ह ही पडती है जो हमेशा इस डर मे रहते है कि गद्दी अब गयी तब गयी। व ही बहुत डरे डरे रहते हैं। लकिन क्यो ?

यह डर क्यो ? उद्योगपति खुश है, क्योंकि वे मुनाफा लूट रहे हैं। ऐसा पहले कभी नही हुआ। अधिकार के लालची खुश हैं, क्योंकि इतनी क्षमता उनके हाथो म कभी न आयी। प्रशासन मे पुलिस खुश है, क्योंकि रात बीतते-बीतते उन्होंने इतने लोगो को मीसा मे कभी नही पकडा। जमीदार-महाजन खुश है, क्योंकि खेतमजूर और बटाईदारो का इतना शोषण उन्होन कभी नही किया। ऊँची जाति के लोग आध्र और बिहार मे खुश हैं, क्योंकि निम्नवर्ग और हरिजनो पर इसके पहले इतने अधिक अत्याचार उन्होन नही किये। सत्ताधारी राजनैतिक दल खुश हैं क्योंकि नक्सलियो और विरोधी दलो के खिलाफ ऐसी गुडागर्दी और इतने हमले उन्होन पहले कभी नही कराये। 1971 मे बरानगर-काशीपुर मे सामूहिक हत्या करके भी वे गौरव के साथ साफ बच गये। देवादिदेव का दल खुश था, क्योकि आपातकालीन स्थिति मे उन्हे हर तरह म कल्याण दिखायी दे रहा था। सब-कुछ अच्छा-अच्छा था। कणधार के मन मे डर क्यो है ? उनके काम डर के कारण हो रह हैं। भयकर भय मनुष्य को इतना निष्ठुर और निर्दयी बना सकता है। डर के साथ साथ है, सत्ता मे बने रहन की अदम्य इच्छा। जो हो रहा है वह अच्छा ही हो रहा है। जो देश और राष्ट्र जैसा होता है, उसे वैसा ही प्रशासन मिलता है।

कमरा पार करते-करते देवादिदेव ने अचानक एक कोने मे अपन सुपरिचित मृत्तिका-कलाकार मातग चारण पाल को देखा। वह चौंक पडा। राष्ट्रपति द्वारा सम्मानित मातग पाल यहाँ क्या कर रहे हैं ?

—आप यहाँ ?

—हिल्सा।

—हिल्सा !

—बच्चे से बडे होन तक हिल्सा की तरह तरह की शक्लें बना रहा हूँ, मोशाय ! यह कमीशन का काम है।

देवादिदेव आश्चर्य म पड गया। हिमालय की बर्फ के रुपहने पानी वाली नदियो के उद्गम पर हिल्सा पालन का अवास्तविक मामला, राष्ट्र के लिए कितना महत्त्वपूर्ण हो गया है, बिजली कौंधन की तरह वह समझ गया। इलिश योजना अवास्तविक है, कहत ही विपुल मित्र का मत्रि-पद

चला गया। बेचारा विपुल ! हिल्सा को बचपन से अब तक उसन तरह-तरह से खाया है। उसके घर ही देवादिदेव ने सबस पहले भुनी हुई पूरी इलिश रोस्ट खायी थी। वह आगे बढ रहा था। चलते-चलते याद आया कि बचपन मे वह रथ के मेले मे रुपहले रग की मिट्टी की हिल्सा खरीदता था। याद आया इलिश परियोजना का दफ्तर और मत्स्य-विशारदो की कॉलोनी बनान के लिए हिमालय की तलहटी म दो गाँव समाप्त कर दिय गये थे। गाँववालो को जमीन के बदले मे पथरीली जमीनें दी गयी थी।

देवादिदेव परदा हटाकर एक छोटे-से कमरे मे घुसा। एक सेक्रेटरी उसे खास कमरे तक ले गया था और दरवाजा बद कर वह बाहर निकल गया। साउडप्रूफ कमरे मे घुसते ही देवादिदेव को दीवार पर शीशे के केस म इलिश मछली के बच्चे से बडी होने तक के आकारो की शकलें दिखायी दी। बच्चा इलिश, पत्नी इलिश, बडा इलिश—सब तैर रह थे। उसे याद आया कि बुद्धदेव बसु न भी तो इलिश सबधी एक कविता लिखी थी।

विशाल मेज के उस पार जो बैठे थे वह थे वृद्ध, स्वस्थ, धूर्त और निष्ठुर। मेज पर बडे अक्षरो मे धमकी लिखी थी 'नो स्मोकिंग प्लीज।' वृद्ध को धूम्रपान पर आपत्ति है। वृद्ध शुरू की बातचीत के बाद चट से काम की बात पर आ गय।

—देवादिदेव, तुम्हारा घर वापस जाना जरूरी है।

—घर लौटना ?

—समझने की कोशिश करो।

—नही समझा।

—तुमसे असुविधा हो रही है।

—क्यो ?

—तुम्हारे लेखन मे से धीरे धीरे भारतीयत्व गायब होता जा रहा है। नही, नही, दल के लागो को प्रशसा ही काफी नही है। मैंने सोचा था कि हेमाद्रिराजन की तरह तुम्हारे लिखन मे भी वैसा कुछ रहेगा, जिससे दूसरा पक्ष शात रहे। वह नही हो रहा है, देवादिदेव !

—क्या ? मरी आत्मकथा।

—एक नोनसेंस बन गयी है।

—आप यह नहा कह सक्त है।

—वह *अधसत्या स भरी पडी है। उसम सच बातें कहाँ है ?* तुम्हारा जीवन क्या पहन सग्राम और बाद म शुद्ध सफलता है ? पराजय की बात कहा है ? अजीब लिखा है तुमन जिसे नकली कहा जाना चाहिए।

—*नकली !*

—नही ता इतनी विपरीत आलोचना होती ? देख ही रहे हो आत्म कथा का बहुत सी भाषाओं म अनुवाद करान पर भी फायदा नही हुआ। *जो कुछ किया उससे फायदा नहीं हुआ। तुमसे अधिक लाभ ता हमाद्रि* राजन से हुआ।

— आप लाग कहते तो है। मैंन बहुत बार उसकी किताब पढन की कोशिश की पढ नहीं सका। इस तरह से एक ।

—आहा बडी ख्याति का लेखक था। लकिन जो लिखा था उसस उसक समय क भारतवष को जाना जाता था। साहित्य को लेकर सरकारी शोरगुल तो 1947 साल के बाद से ही शुरू हुआ। उसे बहुत पहले स भारत प्राण कहा जाता था न !

—*लेकिन मुझ अच्छा नही लगता है।*

—तुम्हारा यह नकचढापन ही तो नुकसान कर रहा है। हेमाद्रि राजन मोटी धोती पहनता था बातचीत म भदेस था लिखन म पालिश *नही थी। लकिन आध्र के शबर लोगो के बारे म कैसी कहानियाँ उपन्यास* लिख गया। मुझ ता लगता है कि उसकी पुस्तकें समाज के दस्तावज हैं।

—भाषा बहुत खराब थी।

—जिस भाषा में दश की जनता बात करती है उसी भाषा म वह लिखता था। अपनी कहानियो म जो भाषा लिखते हो वह जनता की भाषा नही है देव !

—सचेतनता का अभाव था। आधुनिक जीवन का सघष उसकी समझ से बाहर था। इसीलिए परिचित चीजो को छोडकर शहर की बात *लिख ही नही सका।* मिफ इतना होना ठीक नही। मैं गाँव पर लिखता हू शहर पर भी सचत न लखक सब तरह क जीवन पर ही लिखेंग।

—सचेतनता ?

वृद्ध चिढ उठे। गुस्से से गरजकर बोले, 'सचेतनता क्या होती है ? बाजार मे बिकती है ? खरीदी जा सकती है ? तुम ही केवल सचेतन साहित्य लिखते हो, और कोई नही लिखता ? शरत्चन्द्र को पढो, प्रेमचन्द पढो, ताराशकर पढो। उनकी सी-कौन-सी रचना तुमने, सचेतन साहित्यिको न लिखी है, सुनूँ ता ? वही भारतवर्ष पढो। आज का भारतवर्ष नही। तुम्हारे मुँह पर भारतवर्ष का नाम ही हास्यास्पद लगता है। तुम्हारे विरुद्ध युवको न खूब आलोचनाएँ लिखी हैं। तुम अपने देश, समाज और समय के बार म जानबूझ कर अर्ध सत्य लिखते हो जो उनकी राय म पूरी तरह झूठ लिखने से भी अधिक धोखे की चीज है। तुम्हारे खिलाफ उन्ह ।'

—आप शकरदयाल की बात कर रहे है।

डर भयकर डर। जो पत्र पत्रिकाएँ छिपाकर प्रकाशित की जाती हैं, वे इनके दफ्तर म मौजूद है—बिलकुल स्वाभाविक बात है। भारत सरकार के ये विभाग अनुसधान और विश्लेषण दफ्तर, निर्दयता और दक्षता मे ससार के उन्नत देशो के समान है, एकदम उनके निकट हैं। किन्तु उनम छपी देवादिदेव के विरुद्ध आलोचनाओ को यह अवश्य पढेंगे और देवादिदेव को उनकी बात सुननी पडेगी ? डर, भयकर डर।

—सभी शकरदयाल है जी। मैं वही बात कह रहा हूँ। तुमसे आशा की गयी थी कि तुम सभी कुछ खोलकर सच सच लिखोगे। बडा अच्छा अवसर मिला था। एक ईमानदार आत्मकथा लिखन स काम चल जाता। तुमसे आशा थी कि तुम नक्सली लडको से मिलोगे, उनके विश्वासपात्र बनोगे।

—वे मुझ पर विश्वास नही करते।

—वे तुम पर विश्वास नही करत ? तुम्हारे समय का कोई लेखक विश्वास नही करता। तुम कायर हो।

—क्यो ?

—तुम्हारी आत्मकथा मे मनन दत्त का नाम नही है उससे तुम्हारी जान-पहचान थी, घनिष्ठता थी बहुत दिनो तक तुम दोनो साथ-साथ पार्टी मे थे, एक ही अखबार म भी काम किया था। हाँ, मनन नक्सल हो गया, वह मर गया। मरे आदमी का नाम लेन मे भी इतना डर ? केवल उसका

नाम लेने-भर से, उसे सम्मान देने से वही काम चलता है।

—नही समझा।

—स्वाभाविक है कि शकर आदि तुम्हे नही बख्शेंगे। शकर तुम्हारे विरोधी दल में शामिल हो तो सोने मे सुहागा है। पाचजन्य चटर्जी ने उस दिन लिखा था : कलकत्ता में जिस रोज़ दिन में ही दुःस्वप्न अवतरित हुआ तो देवादिदेव ने जो हमारा मार्ग-दर्शन कर सकते थे, उस रक्तरंजित समय में दो उपन्यास लिखे—'श्रावण सध्या में', 'मन की गहराई में अकेला'। बुजुर्ग लेखक की यह आत्मरति अकल्पनीय है।

अंग्रेज़ी के एक बहुत बिकने वाले साप्ताहिक का पन्ना खोलकर पाचजन्य के लेख से वृद्ध फरफर पढ रहे थे। देवादिदेव के कलेजे में क्लान्ति, भयानक क्लान्ति थी—मानसिक क्लान्ति, शारीरिक नही। देवादिदव नियमित रूप से विटामिन की गोलियाँ, प्रोटिनेक्स इत्यादि खाता रहता था। जीवन-भर इसी क्षुद्र ईर्ष्या और क्षुद्र आक्रोश के साथ रहना पडा है। पाचजन्य को देवादिदेव ने ही पहला मौका दिया था। दुबला-पतला काला लडका, बहुत ही होशियार था। एक अभागे गिरोह में शामिल हो गया था। देवादिदेव की चन्द्रसभा मे लेक के किनारे गिटार बजाकर कविता पढ रहा था। पाचजन्य को बुलाकर उन्होने पत्र-पत्रिकाओ के कार्यालयो मे उसका सबसे परिचय करा दिया। वही पाचजन्य!

—वह खुद क्या है?

—इस पर भी तुम्हे छुटकारा नही मिलता। तुम्हें बनाया गया है, तुम्हारी भावमूर्ति—तुम्हारी इमेज बनी है। तुम सदैव अपनी सुरक्षा की बात क्यो सोचते हो? सोचकर देखो, हेमाद्रिराजन को तुमसे इतनी अधिक श्रद्धा क्यों मिली?

बहुत डर लग रहा था। वृद्ध कहना क्या चाहते हैं? आँखें एक्स-रे की किरणों-सी हैं। देवादिदेव के भीतर तल तक देख डालती हैं। देवादिदेव उनका बनाया हुआ है। जिसने देवादिदेव की मूर्ति गढी हो, वह उसे तोड भी सकता है। वेदी पर धूमधाम मे बिठाकर पूजा की जाती है और उसके बाद किस अवहेलना से पचास हजारी जरी की प्रतिमा विसर्जित

करके क्या नयी मूर्ति के लिए वेदी खाली नही की जाती है? मूर्ति पूजा का यही नियम है। आह्वान विसजन के लिए ही होता है। देवता भी एक ही स्वरूप म चिरस्थायी नही रहत। स्वरूप बदलकर युग के अनुसार बनना होता है।

—तुम्हारा अपनी पत्नी के साथ क्या चल रहा है?

—क्या?

—तुम्हारी पत्नी बच्चे तुम्हारे साथ किसी जगह किसी सभा में क्यो नही जात?

—ईप्सिता को वह सब पसन्द नही है।

—उसका तुम्हारे साथ बाहर रहना भी जरूरी है।

—कहूँगा। सुनगी या नही कह नही सकता।

—आजकल क्या कर रही है?

—वही लायब्रेरियन वाली नौकरी।

—बच्चे?

—दो लडके कानपुर म नौकरी करत हैं। छोटा लडका पढ रहा है।

—कहाँ?

—सेंट जवियस म।

—वेड!

—माँ के आग्रह पर। नौकरी और ट्यूशन करके भी ईप्सिता लडके को अँग्रेजी स्कूल कालेज म पढाती है।

—और तुम इधर मातृभाषा का आदोलन चला रहे हो?

—वाह क्या मेरा लडका ही है? औरो क भी ता।

—वही तो कहता हूँ। हेमाद्रिराजा इस तरह का काम न करता था। तुम लोग जो कुछ कहत हो और जा कुछ करत हो दोना मे कोई मेल नही। अपने बच्चा का वतन छोड बचकर अँग्रेजी स्कूला म पढात हो। नौकरी करन विदश भजत हो। और अगर देश म रह ता उन्हें कम्पनी एक्जीक्यूटिव बनाने का प्रयत्न भी जरूरी है। बँगला म लिखन पढ़न और सहन मरन की जिम्मदारी सब जनता पर ही है क्यो?

—सचमुच। हम क्या एस होत जा रह है?

—होते जा रहे हैं क्यों कहते हो ? कहो, हो गये हैं ।

—हो गये हैं ।

—लेकिन ईप्सिता को किस पर आपत्ति है ?

—वह सोचती है कि मैं हमेशा से ही बईमान हूँ ।

—अफसोस है !

वृद्ध न सिर हिलाया । नहीं, बलवत के मर जान न बहुत नुकसान हुआ है । मरा था छोकरा तीस बरस पहले । उसकी भावमूर्ति, उसकी इमज भी काफी बनायी गयी थी । लेकिन बाईस बरस तक गद्य लिख कर किसी छोकरे की इमज इतनी बड़ी नहीं हो जाती कि वह हेमाद्रिराजन की मूर्ति को पीछे छोड दे ।

वह लडका भी क्या मर्द-बच्चा था ! वह और आदमियों की तरह न था । उसके बारे मे उन्हे भी पता है । उसके माँ बाप उस पार से आय थे । हाँ, उस वक्त सीमा नहीं थी । बगाल सयुक्त था । बासठ साल पहले वह कलकत्ता मे पैदा हुआ । बाप स्कूल मास्टर थे । माँ बचपन मे हैजे स मर गयी । रानी भवानी स्कूल । रिपन में पढते पढते 'बगाल के किसान अखबार से सम्बद्ध । जेल से छुटकारा बयालीस म । पट में अलसर । तैंतालीस, हाँ तैंतालीस मे उसे देवादिदेव बना दिया गया था ।

किन्तु किसी ने अपने सस्मरणो में लिखा है कि उन दिनो देवादिदव जिनके साथ गिरफ्तार हुआ था, जेल में वे जिस श्रेणी में भी रह उसन खुद प्रथम श्रेणी का कैदी बनन के लिए अनशन किया था ।

मूर्ख, *महामूर्ख व्यक्ति ! बुरा नहीं*, लेकिन *जरूरत से ज्यादा बेवकूफ* होना गडबड है । जेल मे प्रथम श्रेणी का राजबन्दी हुआ, किन्तु किसानो के साथ जेल तो गया था । वे अपने सस्मरण नहीं लिखते, कष्ट और बेचैनी की बातें मन में लेकर बैठे नही रहते । ऐसी बातें लिखते है दीमक-जैस चरित्र के लोग । जहाँ कही अच्छा और शोभन दिखायी पडे, उसे टुकडे-टुकडे कर नष्ट कर देना चाहिए । देवादिदेव के सबध म इतनी बातें सोचकर दिमाग में रखन की जरूरत ही क्या है ? मन की बात मन में ही क्यो नही रखी ? लिखने क्यो बैठा ?

वह आदमी भी कम नहीं है । कमाता था तो पत्नी को उससे नौ सौ

रुपय मिलते थे। उसी में घर गिरस्ती। खीचतान के साथ दो बेटो को भी तैयार किया। यह ठीक है कि व अच्छे विद्यार्थी थे मधावी। स्कॉलरशिप-फेलाशिप पात पात दोनो भाई दूसरे राज्यो को चले गये। बडी बडी बातें और बहुत अधिक विश्वस्त थे बाहर के लिए। घर बहुत तग, जिन्दगी बहुत ही व्यवस्थित थी।

व्यक्ति के बारे में गोपनीय रिपोर्ट के सरकारी सस्करण को चाहे तो वृद्ध किसी एक पैरे में उलटकर रख सकते है। फायदा क्या ? अभी उसकी जरूरत है। उसे ही बनाया गया है, उसे ही पकडकर रखा जायगा। पाचजन्य बहुत उच्छृखल लडका है। नही तो उस ठीक किया जाता।

दवादिदेव बेचैनी में घुटे जा रहे थ। बुजुर्ग उनकी बात सोच रहे है, याददाश्त के पन्न उलट रह है।

बुजुर्ग ने आँखे उठायी। बाले, 'किस तरह से क्या किया जायगा, पता नही। लेकिन ईप्सिता को अपने दल में खीचो। हाल ही में क्या लिखा है ?'

—अकेलेपन के दर्पण में'।

—वह क्या है ?

—उपन्यास।

—विषय वस्तु ?

—बडे घर के पिता क साथ बेटे का वैचारिक मतभेद है। डूग-एडिक्ट बन जाता है। पिता की रखैल लडके के निकट माँ की प्रतिमा बन कर रहती है। लडका एक नर्स से शादी करता है। नर्स अपन पहले प्रेमी को भूलने मे पिता की रखैल के प्रेमी के साथ ।

—वड ! वेरी वेड !

—नही, रचना ।

—तभी तो डेविड मल्होत्रा कह रहा था कि तुम इस तरह का कूडा लिख रहे हो। इस तरह की पश्चिम से ली हुई अस्वाभाविक समस्याएँ भारतीय पृष्ठभूमि पर थाप रहे हो। इसी से तुम्हारी रचनाएँ अपना महत्व खोती जा रही है। हमें तो यह ऐसा कूडा लग रहा है कि औरतो की मैगजीन में भी छपने लायक नही।

—लेकिन बहुत प्रशसा हुई है।

—किसने प्रशसा की ? तुम्हारे बनाये दल न, जो तुमको पसन्द करते हैं, उन्होने अकाल के समय तैंतालीस में जो लिखा, उसी तरह की अतरगता से बडे स्केल पर कुछ महत्वपूर्ण लिखो। दूसरी भाषाओ का साहित्य पढते हो ? दक्षिण की जेल, उडीसा का आदिवासी समाज—इन विषयो पर लिखे उपन्यासो को कभी पढा है ?

—नही पढा नही।

—क्यो नही पढा ? किताबें नही मिलती ?

—नही ! अनुवाद तो भेजते हैं।

—फिर ?

—यानि दूसरी भाषाओं में जो लिखा जा रहा है ।

—वह बँगला साहित्य से खराब है यही न ? लेकिन यह गलती है देव ! तुम्हारे आधुनिक साहित्य में भारतवर्ष, भारत का आदमी अनुपस्थित है। तुम्हारी रचनाओ में भारतवर्ष कहाँ है ? आदमी कहाँ है ? नही देव घर लौट आओ। अगर आ सको तो ।

देवादिदव के रक्तप्रवाह की तेजी सो गयी थी। बधन रहित, आनन्दमय उन्मत्त पागलो-सी भाग दौड। श त रक्तकण, लाल रक्तकण, रक्तरस—सभी कुछ कलकत्ता के गदे रास्ता पर इकट्ठे हो गय पानी में कूदता भिखारी लडको का समूह हो गया है।

—अभी तुम पा सकते हो, तुम्ह अवश्य मिलेगी।

—बहुत देर नही हो जायगी ?

—अभी तुम्हारी उम्र बासठ वर्ष की है।

—लेकिन मुझे ता नही लगता।

—क्या लगता है ? चौबीस के हो ?

—एसा नही ।

—अभी भी तुम झूठ बोल रह हो। कहना चाहते हा कि तुम अपनी उम्र के हिसाब से बुजुर्ग नही, युवक लगत हो। लकिन कभी-कभी लडका के साथ मिलकर शोर शराबा करन, बरसात म भीगन के लिए निकल पडन से क्या युवा बना जा सकता है ? तुम्हारी रचना, तुम्हारा जीवन—इनसे सभी-कुछ जाहिर हो जाता है। जिस सुख और आराम से तुम रहते

हो, वह बुढापे के लक्षण हैं। पिछले दस बरसो में ऐसी दस पक्तियाँ भी तुमने नही लिखी जो कुछ महत्व की हो।

—किन्तु ।

—टोको मत, सुनना भी सीखो। तथाकथित वामपथी रुख अपनाकर लिखते रहने की कला कोई निरापद खेल है, देवादिदेव! हाँ, खेल। देश देश की जनता जिस हालत मे हैं, उसमे विरोध के बजाय समर्थन की कोई गुजाइश नही है। इसीलिए वामपथी विचारधारा पकडना जरूरी है, जिससे साँप भी मर जाये और लाठी भी न टूटे जहर से जहर मारा जाये। काँटे से काँटा निकालना दुनिया का बहुत पुराना दस्तूर है। इसलिए तथाकथित वामपक्ष एक प्रेक्षण का प्रतिमान बन जाता है और उसमे तुम प्रेक्षित बन जाते हो। वामपक्ष जो कि तुम्हारा आश्रय है वह भी अत मे एक व्यवस्था, एक इस्टेब्लिशमट बन जाता है। इसके फलस्वरूप मामला पहुँचा तो कहाँ पहुँचा?

—क्या?

बुजुर्ग खी खी कर हँस रहे थे। कह रहे थे, 'देख नही रहे हो। तुम भी अब एक व्यवस्था हो। तुम सभी वामपथी, जनता के आदमी हो। और तुम्हारी जीवन-यात्रा, जीवनयापन का आदर्श और तौर तरीका—सभी व्यवस्था के सेवक है। तुम लोगो का काम्य उच्चमध्य वर्ग का जीवन है। कपनी के बॉस लोगो की तरह तुम भी देश की ओर से शुतुरमुर्ग की तरह आँखें बद किय रहते हो। वे पार्टी देते हैं बचाव तलाश करते हैं। तुम्हारा पलायन तथाकथित विरोध साहित्य मे होता है। तुम्हारी सतानें कान्वेंट म या अन्य किसी अच्छे स्कूल मे पढती हैं, विदेश जाती है स्वदेश मे अच्छी नौकरी करती है।

—सब ऐसा नही करते।

—क्योकि वे ऐसा नही कर सकत। कर सकने पर जरूर करेंग। वामपथी होन पर दोनो दुनिया के दरवाजे खुले रहते है। आया-जाया जा सकता है।

—आप क्या कह रहे हैं? डर लगता है।

—न न, डर, गुस्सा, दुख—ऐसा कोई भी तीखा अहसास तुम्हारे

लिए समय नहीं है। अच्छा प्रबंध, अच्छी व्यवस्था है। तुम बड़े ही अहम तरीके से अशक्त हो गए हो।

—आप बहुत कटु हो रहे हैं।

—कटुता नहीं। हाँ, आलोचना कर रहा हूँ, आलोचना। निकाम तत्व के बारे में पता है? पमपम-गीत किस तरह चॉकलेट-गीत बन जाते हैं? तुम्हारी विरोध-रचनाएँ भी वैसी ही हैं। ढेरों साहित्य रच डाला। कुछ नतीजा निकला? निकले कैसे? यह क्या साहित्य है? जिस भाषा, जिन शब्दों में साहित्य लिखा जा रहा है, वह अशक्त भाषा, अशक्त शब्द हैं? जिस दिमाग से लिखा जा रहा है, दरअसल वह दिमाग ही अशक्त है। अशक्त से किसे डर लगता है?

—सारा-का-सारा, सभी-कुछ निषेधात्मक—नेगेटिव है?

—नहीं है? मध्यम वर्ग का साहित्यकार, मध्यमवित्तीय सुरक्षा तलाश करता हुआ मध्यमवित्तीय वामपंथ का प्रचार कर रहा है। काठ की तलवार से किसकी नाक कटती है? तुम हमारे हाथों बने हो। कभी ईमानदार थे, अब नहीं हो, स्वीकार कर लो।

—सभी ऐसे हैं?

—नहीं। क्या कोई शंकर या अमिताभ या सानन्द तुम जैसा है? और भी शक्तिशाली लेखक हैं। लेकिन वे सब दायरे से बाहर रहते हैं। वे लिख नहीं पाते, छप नहीं पाते। तुम अपने को युवक कहते हो? तुमको तो युवकों से डर लगता है।

—यह क्या कह रहे हैं आप?

—ठीक ही कह रहा हूँ। इसीलिए भारत तुमको अच्छा लगता है, देवादिदेव! भारतवर्ष तुम्हारी तरह प्रौढ़, मुझ जैसे बुड्ढों के लिए है। मेरे जैसा घाघ, कुचक्री, लोभी, स्वार्थी, अधिकारलिप्सु कौन हो सकता है? महाभारत के धर्मयुद्ध में भी प्रौढ़ युधिष्ठिर कैसे सभी को मारकर सिंहासन पर बैठे थे। उसका यही उद्देश्य था कि जो विरोध करते हैं, कर सकते हैं—ऐसा कोई न रहे।

—नयी व्याख्या है।

—क्यों नहीं, उसमें धर्म तो जीता था। धर्म का—सही उद्देश्य का,

जिताने के लिए सब कुछ किया जाता है। यही महाभारत की शिक्षा है।

—लेकिन, जो बात कही थी ।

—हाँ। मिलेगा, मिलेगा।

—प्रिमैच्योर—अशोभन न होगा, क्या कह रहे हैं ?

—नहीं होगा, व्याख्या कर दी है।

—किन्तु ।

—क्या ?

—घर लौटने की बात ?

—वह तुम्हारा अपना मामला है।

—मेरा !

—बिलकुल। पुरस्कार मिलने पर लोग कहगे कि बच्चू ने बीच-बाजार अपने को बेच दिया।

—न लेने पर ?

—लिये बिना तुम्हारा छुटकारा कहाँ है ? जिन लोगों न तुम्ह परित्यक्त कर दिया है—नकार दिया है, व क्या कहग ? कहग कि यह भी तुम्हारी चाल है।

सहसा शिराओ मे रक्त ने करवट बदली।

अब रक्त का प्रवाह भिन्न था। उसमे आनन्द का नही, डर का अतिरेक था। देवादिदव ने अचानक वृद्ध की अन्तर्भेदी एक्स-रे आखा के भीतर देखा था। कैसा भयकर, भयानक षड्यन्त्र है ! उसे पुरस्कार दिया जायगा और उसे लेना पड़ेगा।

लेन के बाद ही उसकी भावमूर्ति, उसकी इमेज खडित हुई, उसने चोटी से गिरना शुरू किया। घर लौटना न हुआ। लिये बिना छुटकारा भी नही था। अब देश के सारे दस्तावेज वृद्ध के अलक्ष्य अमोघ निर्देश पर लिखे जाते रहेंग। जिस-जिस ने पुरस्कार लिये, उनका विवक सहसा जाग्रत हुआ—इसका कारण क्या है ?

वह क्या करे ? कहाँ जाये ? याद आये—ईप्सिता का मोम जैसा सफेद, पतला, झुर्रियो से भरा चेहरा, सफेद बाल, थकी आँखे। थका-थका स्वर यह

कहता हुआ—'जो सही समझो, सो करो ।' इससे सुख नही मिलता, शाति रहती है । अपने से अकेले मे आमना-सामना हो जाता है। अपना उत्तर भी याद आया, 'उपदेश देती हो ?' ईप्सिता का उत्तर होता, 'नहीं, तुम्हे जरूर वही लगेगा । बहुत समय से तुम सभी-कुछ की शब्दो मे व्याख्या करते हो, हर चीज की व्याख्या करते हो, हर चीज की मीमासा करते हो । तुमने, अपने शब्दो को हर स्थिति मे व्यवहार कर-करके अक्षम, पगु बना दिया है । मैंने उपदेश नही दिया, सच बात कही । मेरी जानकारी म जो कुछ भी होता है, वही कह दती हूँ । प्रतिक्रियावादी, पेटी-बुर्जुआ लोगो की तरह बाते मत करो ।'

ईप्सिता न थकी आँखो से उसकी ओर देखा था । कहा था, 'बत्तीस बरसो मे कितनी बार ये बातें सुनी है । मैं हमेशा अपने साथ अकेली रहती हूँ, इसी से जो ठीक लगता है वही करती हूँ क्योकि मुझे तो खुद के सामन बैठकर दिन बिताने पडते हैं । तुम्हारी जिदगी मे जरूर भीड बहुत ज्यादा है ।'

समझ नही आता कि ठीक क्या है ? क्या किया जाये ? पहले घर लौटन के सकल्प का प्रचार किया जाये । उसके बाद आत्म-विश्लेपण के लिए जनता के जगल मे न जाकर, निर्जन अरण्य म चला जाये । अरण्य सजा सँवरा, निरापद होना चाहिए । अभी भी आम्नाटोक्री के भयानक जगल की बात याद आने पर अदर से सब-कुछ काँप उठता है ।

बरसात । उत्तरी बगाल के भयानक, हिंस्र, विद्वेषी जगल । सड़े पत्ता की कीचड बजबजाती हुई, तरल और चिपचिपी होती है । पैर रखो तो पैर भीतर धँस जाये । पैर निकालो तो जोकें घुटनो से टखनो तक चिपक जायें । जोक छुडाने का वक्त हमारे पास नही है, तिहैया चल रही है । उत्तरी बगाल की भीषण वर्षा मे लोग घरो मे निकल मैदान मे इकट्ठे हो जाते हैं । जिनके साथ चलो, व एक बात भी न करें ।

एक बार तिस्ता नदी के किनारे आकर खडा हुआ था । सम् है, जाना ही पडेगा । देवबाबू, जोक छुडाइये । पर ललछौंही, मार् हुई जोक पैर छोडना ही नही चाहती । नही, आम्नाटोक्री के और दुश्मन जगल की बात सोचकर आज भी डर लगता है ।

तरह के जगलो मे जाऊँ ही क्यो ? तिहैया के बाद से दवादिदेव बहुत रास्ता तय कर चुके है। कालाटोप चलो। चीड, पाइन, फर के जगलो मे पेडो की तरतीब से वडी बेफिक्री रहती है। पहाड और ज़मीन--ऊपर से देखने पर साफ दीखते हैं। भरे-भरे आकाश के तारो की तरह डेजी फूलो के पराग के अलावा और कुछ उसके मूल्यवान पैरो म नही लगेगा।

जगल मे रहेगा, आत्मविश्लेषण करेगा। उसके वाद घर लौटेगा। हाँ, अब वह सब कुछ करेगा। हस्ताक्षर सग्रह के सभी अभियानो म हस्ताक्षर करेगा, असतोष प्रकट करने वाले सभी प्रदर्शनो म सम्मिलित होगा। युवक लोग फिर से उस पर विश्वास करेंगे। अभी तो उनकी आँखो म नकार का गहरा भाव रहता है। सार्वजनिक सभाओ म वे ढेरो सवाल पूछते हैं, शोर मचाकर उसे बिठा देते है। विश्वास खो देने वाला उसने ऐसा कौन-सा काम किया है ? उन्हे क्या पता कि वह कौन है ? उसकी इमेज नष्ट हो गयी है ? फिर युवक यही कर सकते हैं। मूर्ति तोडते हैं, खीचकर गिरा देते है। हाय ! अबोध युवको को यह नहीं पता कि जिस पीठिका पर मूर्ति स्थापित की जाती है, वह कभी खाली नहीं रहती। उसकी मूर्ति ब्रिटिश वायसराय की काँसे या पत्थर की उस मूर्ति जैसी नही है, जिसकी पीठिका मूर्ति हटाने के बाद रास्ते के किनारे करुण क्षमा-याचना करती रहे। मूर्ति जनमानस मे बनानी पडती है। उसकी मूर्ति हटा देन पर अराजकता फैल जायेगी, जीवन असिपत्र वन का नरक बन जायगा। उस अधकार मे मार्ग फूल खिलाकर नही रखता। चलने पर वह चलेगा, असिफलक की तरह तीखी धार के पत्ते उस खून स तर-बतर कर देंगे। रक्तोत्सव तो बहुत हुए हैं। य युवक यह बात समझते क्यो नही ? दवादिदेव घर लौटेगा।

ये सभी बातें उसने ईप्सिता को बतायी थी। वह दिल्ली से कलकत्ता लौटा था। ईप्सिता न पूछा, 'घर लौटोगे ? अपनी, इमेज बरकरार रख सकोगे ? घर तुमने आज तो नही छोडा ?"

—कब छोडा था ?

—अपन मन से पूछो। पूछन के लिए ही तो जगल म जा रहे हो।

—लेकिन ?

—हाँ हाँ मैं तुम्हारी मदद करूँगी हो। मैं बत्तीस बरसों से तैयार हूँ राह देख रही हूँ। एक बार भी तुम्हारे काम आ सकूँ इसके सिवा मुझे जीवन में और क्या चाह है बताओ ?

देवादिदेव वसु ने आँख उठाकर देखा था बावन बरस की इप्सिता ने उस पर व्यंग्य तो नहीं किया ?

—नहीं व्यंग्य नहीं कर रही हूँ।

इप्सिता उसके मन की बात समझ गयी थी। उसके बाद वाली थी सात बरस में तीन बच्चों को जन्म दिया। उसके बाद तुम्हें मेरी जरूरत नहीं रही। लेकिन कभी जरूरत होगी इसीलिए तो तुमने मुझे उठाकर ताक पर रख दिया था ?

—तुम अशोक वाली बात न भूल सकोगी ?

—नहीं। भूलने लायक बात थी ?

देवादिदेव बोला नहीं।

अशोक। डाक्टर। उसके प्रति अनुरक्त। उनकी शादी का पहला और मुख्य गवाह। देवादिदेव जैसा आकर्षण अशोक में तो नहीं था। किन्तु अगर देवादिदेव ने आकर ईप्सिता के पिता की आँखें चौंधिया न दी होती तो इप्सिता शायद । किन्तु देवादिदेव को सब कुछ मालूम है। उसने अशोक की आँखें देखी थी। उन आँखों में नीरव प्रेम था। सहिष्णु कोमल गभीर आँखें थीं। जिसे और लोग प्यार करते हों उसे छीन लेने का दुदमनीय लोभ ईर्ष्या जिद देवादिदेव कभी नहीं छोड़ सका। किन्तु बेटे के पैदा होने के कुछ बरस बाद ही अशोक उसके जीवन से हट गया। अब कहाँ है? कहाँ रहता है? किसी समय पार्टी का डाक्टर था। अब कोई अशोक विश्वास का नाम भी नहीं लेता। इतने लम्बे बिछोह के बाद भी क्या प्यार टिका रहता है? या स्मृति केवल स्मृति शेष रह जाती है? स्मृति! तुम पीड़ा हो। मुझे भूल जाओ मेरा गीत याद रखना। अशोक के स्वर में कविता गाना।

तुम निशि दिन मधुर पवन में
चिर विकसित वन उपवन में

जाना मन के पथ पर,
निज सुख-सरिता में अवगाहन कर।
इस बीच अगर मैं आ जाऊँ,
तो मैं भी बहता-बहता चल दूं,
और दूर रहूँ भी तो क्या क्षति है?
स्मृति का मन से उन्मोचन कर।

ईप्सिता ने नियति के समान सर्वज्ञ नेत्रों को ऊपर उठाकर कहा था, 'मैं तो स्मृति लेकर अपने साथ अकेली रहती हूँ। अशोक की बात कहाँ सोचती हूँ?'

—मैंने कभी नहीं कहा कि उसे भूल जाओ। लेकिन अपनी बात कहो।

—क्या कहूँ?

—अगर सचमुच घर लौट सका तो मेरा जीवन भी सार्थक हो जायेगा। सब-कुछ गया हुआ न लगे।

—बरबादी लगती है?

—लगती है!

बहुत डर लगता है देवादिदेव को। पहचाना हुआ आदमी कैसे अजनबी होता जा रहा है? नहीं, नहीं, वह लौटेगा। लौटने की राह में काँटे-ही-काँटे नहीं हैं। काँटों के बीच राह की लीक जरूर है। हाँ, चोट खाने, खून बहाने पर ही वापसी होगी।

एक प्रेस-विज्ञप्ति प्रकाशित हुई थी: देवादिदेव बसु, प्रसिद्ध भारतीय और विदेशों में ख्यात उपन्यासकार आत्मान्वेषण के लिए निर्जन वास के लिए जा रहे हैं। पिछले बहुत दिनों से उनकी रचनाएँ जीवन, मनुष्य और समाज से विमुख होती जा रही थीं। ऐसा क्यों हुआ, यही जानने के लिए उनका यह स्वेच्छा से निर्वासन है।

चलने से पहले ईप्सिता ने ही थर्डक्लास स्लीपर का टिकिट ला दिया था। अचानक पास आकर उसकी छाती पर हाथ रखकर बोली थी, 'बहुत दिनों बाद घर से बाहर निकलने के लिए तुमने कदम बढ़ाया है।'

—वह 'कभी' जिसकी भूमिका निभाने के लिए तुम 'तुम' हुए थ, तब भी तुम पूरी तरह से ईमानदार नही थे। रोकना मत, आत्मान्वेषण करने जा रहे हो। छाती के भीतर कोना-कोना खोज डालो। देखो, गिरावट कब से शुरू से हुई थी? ईमानदार बनो, इसस बडी कोई और बात नहीं है, कभी भी नहीं है।

—करूँगा ईप्सिता, करूँगा।

—लौटकर पाओगे कि मैं ठीक हूँ। मुझे कभी-न-कभी तो मरना है। आप पर श्रद्धा लेकर मरने दो।

ईप्सिता न बहुत दिनो से इतनी बातें एक साथ नही कही थी। देवादिदेव के भीतर जैसे कुछ टूट रहा था। टूट गया था, गलकर धीरे-धीरे भीतर उतर रहा था।

—यदि य लोग मुझे पुरस्कार दें?

—पुरस्कार लौटा देना। तुम्हारी पुस्तको से काफी आमदनी है। दोनो लडके काम करते है, रुपय भेजते हैं। मैं नौकरी करती हूँ। सुमन को भी पढाई समाप्त करते ही काम मिल जायेगा।

—किन्तु ?

—लौटा देना।

औरतें आखिर औरतें ही रहती हैं। ईप्सिता को देवादिदेव किस तरह समझाता कि कमेटी म रहे या न रहे, यहाँ रहे या विदेश म रहे, वृद्ध द्वारा चुना गया व्यक्ति वही है। सारे शस्त्र उसी के हैं, सारी शक्ति भी उसी की है। बीरू की तरह वह गले की बाईं मुख्य रक्तवाहिनी नली काटकर, मस्तिष्क मे झटका देकर आदमी को नही मारता, कतई नही मारता। बर्बरता से उस सदा से घृणा रही है। किन्तु देवादिदेव बनकर प्रकाश राय, सानन्द मिश्र, पलाश सरकार, नरसिहम् पिल्लई, शकरदयाल, अमिताभ दवे, तमाम लोगो का वह सहार कर रहा है। साहित्य क्षेत्र से वे बहिष्कृत हैं। सशरीर जरूर मौजूद हैं, लेकिन अनुपस्थित हैं। मात्र शरीर की उपस्थिति स तो व्यक्ति उपस्थित नही रहता।

शिव बनकर सहार किया है उसन। ब्रह्मा बनकर सृजन और विष्णु बनकर उसन यत्नपूर्वक पालन भी किया है। दिलीपचद भास्कर, मनीषी

सेन, अरुणिम दास, केक्य कोहेन का। और भी कितने ही लोगो का। अलग से एक सेना ही है। उन्हे हथियारो से लैस कर दिया है। वे आज सर्वशक्ति-सपन्न हैं। युवा लेखकों की पीढी तैयार की जा रही है। पाचजन्य चटर्जी बेईमान निकला, दल छोडकर चला गया।

औरतें औरतें ही बनी रह जाती है। ईप्सिता किस तरह जानगी उनके बारे मे, जिन्हे जीवित रहने दिया गया! उनकी मस्ती देखकर वह बहुत खुशी होती। जिनकी जिन्दा रहने की सभावना नष्ट करके जिन्ह बेकार बना दिया गया था, उनकी आंखो मे पराजय और निराशा दख कर क्या उसे आनन्द मिलता था? सानन्द, नरसिंहम् अमिताभ—य लोग अपनी अशरीरी उपस्थिति के कारण सभी कार्यक्षेत्रो—लेखन-प्रकाशन आत्माभिव्यक्ति, सजीव भ्रामक जगत से बाहर थे। वे भी युवक हैं, वयस मे युवक। उन्हे निकम्मा बना दिया है, यही आनन्द उसके रक्त म थिरकन भर देता था।

लेकिन अब यह सब-कुछ भूलना होगा। घर लौटना पडेगा। बहुत बडी जिम्मेदारी अपने ऊपर होगी। वह किसी दिन बुजुर्ग की कुर्सी पर बैठेगा। टेलीफोन और वायरलैस से सारे देश के विचारो का नियत्रण करेगा। जनता महामूर्ख है। हाइन की उस कविता का अनुवाद किसने किया था? 'जनता नाम का एक विशाल पशु है।' जनता को जो समझाओ वही समझेगी। छापे के अक्षरो मे जो दीखे, वही पाठ है वही साहित्य है। अखबार या पोस्टर—सब मे वही होगा। उस वक्त वह जो चाहगा देश वही करेगा। यह सोचते ही रक्त म क्रान्ति सगीत बजन लगता है। कमजोर तलापात्र? इटरनेशनल' बहुत अच्छा गाते थ। ऐसा गायन फिर कभी नही सुना। वृद्ध ही क्या सब कुछ समझते है? इमज अगर इतनी आसानी स टूटन वाली होती तो फिर सत्तर इकहत्तर बहत्तर मे दवा-दिदव सीमा क उस हार रक्त', 'अरुणाणु, सोये हो?' प्रियतमासु लिखकर क्या वह टिका रह सकता था? वह यह सब कुछ लिखेगा, इसीलिए दिलीप, मनीषी अरुणिम कक्यदेव बनाये गये थे। जिन्दा स्तुति, आलोचना-प्रत्यालोचना के बावजूद 'हमारी एकमात्र आशा' कहानी ने एक आदोलन का सूत्रपात किया है। आदोलन अकाट्य सत्य है। उसके विरोधी

आलोचकों की शक्ति सीमित है, वे दुर्बल हैं। 'हमारी एकमात्र आशा' कहानी उनके चेहरों पर नापाम बम बन कर फूट पड़ी है। नापाम की चोट से कभी कोई जिन्दा बचा हो, किसी ने कहीं देखा है?

देवादिदेव ने ईप्सिता से वादा किया था कि वह जीवन-धारा में लौट कर आत्मान्वेषण करेगा। लोगों के कलेजों में उतर जायेगा। वह भगोड़ा नहीं है, न ही रोमांटिक है। वह चुनौती स्वीकार करेगा। ईप्सिता ने झूठ कहा था। उसकी बेईमानी, उसका घर छोड़कर निकलना उसके उज्जवल अतीत में आरंभ नहीं हुआ था, हो नहीं सकता था। उसे अपना हृदय टटोलना होगा। केवल ईप्सिता के लिए नहीं, हालांकि ईप्सिता और उसके बीच के अन्तर का मिट जाना ही अच्छा है। उम्र बढ़ जाने पर पुरुष अपनी पत्नी के पास पुराने संबंधों के सहारे लौटना और सुख पाना चाहता है। ईप्सिता ने जैसे उसे चेतावनी दी थी - पूरी तरह से ईमानदार बनना। उसने जवाब दिया था न बना तो कहीं और चला जाऊँगा। जो कहना था, अनकहा रहने दिया। लेकिन हूँ' अवश्य की थी। ग़ैर-राजनैतिक औरत और क्या करेगी? शायद लड़कों के पास चली जायेगी। नहीं तो अपने पिता के पास देवघर चली जायगी। लेकिन ईप्सिता को वह दिखा देगा।

यह सभी कुछ कालाटोप आने से पहले घट गया था। उसके बाद आगमन हुआ कालाटोप में। अकेला, बिलकुल अकेला। पेड़, जंगल, फूल, आसमान, पहाड़ कैसे बेचैनी से भरे थे। यह अजीब निस्तब्धता रात की थी। घर, प्रकाश, मनुष्य, बहुत सारी स्कॉच, ढेरों सिगरेटें, अनेक हवाहीन खिड़कियाँ, बंद कमरे, चहरे पर फ्लैश जलने का मज़ा, प्रशंसकों की तारीफ़ें, वृद्ध की सजग आँखों के पहरे में सुरक्षित रहकर तलवार भाँजने का मज़ा— यही तो जीवन है। असहनीय हैं, असहनीय हैं जुलूस में शामिल मूर्ख, प्रजातंत्र के मध्यम, निम्नमध्यवर्गी लोगों, किसानों, मज़दूरों के चेहरे। लड़के भी दूर की याद हैं। कैसा चैन है। वृद्ध के कारण देवादिदेव छोटे बच्चे की तरह शरारती और भला बन कर कॉलिन्स का तम्बूरिन सुनता है। लेकिन कल से हृदय की खोज शुरू करना पड़ेगी। नहीं तो चार-चार दिन अकेले यहाँ रहेगा किस तरह?

रात को चौकीदार खाना लेकर आया। रोटी, उडद की दाल और गुच्छी की तरकारी। इससे बातें की जायें। जनता से सपर्क रहेगा।

—यह किस चीज की सब्जी है ?

—गुच्छी की।

—गुच्छी क्या होती है ?

—बिजली और गरज के साथ बारिश होने पर देवदार पेड की जड मे एक तरह की छतरी पैदा होती है वही गुच्छी होती है। बडी महँगी चीज है। सैकडो रुपये किलो के भाव से यूरोप मे बिकती है। हिमाचल प्रदेश और पजाब के लोग बहुत पसद करते हैं।

—कितना वेतन मिलता है ?

—क्या मिलता है, साब !

—कितने दिनो से काम कर रहे हो ?

—दस बरस से।

—खुश हो ?

—हाँ साहब ! घर पर जमीन खरीद ली है। एक भैंस खरीदी है।

—मन से सुखी हो ?

चौकीदार हँसा। उसने जवाब नही दिया।

—घर पर कौन कौन है ?

—घरवाली, बच्चे, पिता, ताऊ।

—घरवाली कौन ?

—पत्नी।

—इसी वतन म सबका गुजारा चल जाता है ?

—चल ही जाता है।

बातचीत और आग नही बढी। दवादिदव कमरे म चला आया। सिगरेट सुलगाकर लेट गया। शीशे की खिडकी के उस पार तारे दिखायी दे रहे थे। पिता कहा करत थ तेरी मां तारा बनकर देख रही है। उस समय भी देवादिदव समझता था कि पिता झूठ बोले रहे है। विज्ञान पढकर उसे पता चला था कि तारो का प्रकाश जब धरती के लोगो को दिखायी देता है ता उस बीच बहुत मे प्रकाश वर्ष बीत जाते हैं। बहुतरे तारे टूट जात हैं। लोग

सोचते हैं कि तारा विद्यमान है। माँ के लिए आकाश में तारा बनकर टिमटिमाना संभव नहीं है।

दूसरे दिन सुबह-सुबह वह डेज़ी फूलों से आच्छादित पहाड़ पर चढ़ा था।

बँगले से निकलने पर पहाड़ पास ही है। रास्ता घना छायादार और ठंडा-ठंडा था। बड़े-बड़े पेड़-पौधे एक के बाद एक कतार बाँधे खड़े थे। पहाड़ बहुत ऊँचा न था। नीचे जो पेड़-पौधे देवादिदेव को मिले थे, ऊपर जाकर नहीं मिले। मामूली-सी चढ़ाई-उतराई थी। पहाड़ अधिक ऊँचा न था। हरी घास बिछी हुई थी, तारों के-से डेज़ी के फूल शुभ्र हँसी बिखेर रहे थे। इससे पहले देवादिदेव ने डेज़ी फूल कभी नहीं देखे थे। छुटपन में अँग्रेज़ी कविता में इस फूल का नाम पढ़ा था। भारत में डेज़ी खिलते हैं, यह मालूम ही न था। पहले पहाड़ों पर बहुत फूल देखे थे। बाद में फूलों की तसवीरों वाली किताब देखकर जाना था कि बचपन से जिसे पढ़ते आये वह वही बटरकप अज़ेलिया हैं। डेज़ी देखकर उसने मन-ही-मन उन्हें 'तारा फूल' नाम दिया था। विदेशी नाम-वाम उसे अच्छे नहीं लगते, उसे कुछ भी विदेशी पसन्द न था।

चारों ओर पहाड़-ही-पहाड़ थे। बर्फ से ढँके पहाड़ देखने के लिए कौसानी जाने की ज़रूरत नहीं, कहीं भी जाने की ज़रूरत नहीं, डलहौज़ी चले आओ। देख-देखकर देवादिदेव थक जाता। क्लांत, वह क्लांत हो जाता। पहाड़ पर बर्फ में, नीले आकाश-से सफेद मेघों में, ऊँचे देवदार वन में, पहाड़ी आदिवासी शिशुओं की नीली आँखों में उसे क्लान्ति दिखायी पड़ती। मुझे जनारण्य में लौटा ले चलो। लौटा दो लोगों से घिरी हुई वे सभी शामें, शीशे-जड़ी खिड़कियाँ, धुएँ से भरे कमरे, व्हिस्की पर तैरती बर्फ। देख ली, खूब बर्फ देख ली। आसमान-वासमान देखे बिना भी सब कुछ ठीक है। चित्त के इतना प्रकृतिस्थ हो जाने की क्या ज़रूरत है? प्रकृति क्या आदमी की परवाह करती है? सभी इंसान मर जायें, फिर भी चाँद और सूरज

इसी तरह निकलेंगे। कांचनजघा का सूर्योदय, जैसलमेर का मरुस्थल या अन्यत्र समुद्र में सूर्यास्त, वनपक्षी, तितलियाँ, फूल आदि झूठे झमेले वैसे ही बने रहेंगे। प्रकृति मनुष्य के बिना भी चलती है। मनुष्य प्रकृति को अपने दल में खेलने के लिए मिलाने को बेवकूफ की तरह परेशान क्यों है? देवादिदेव चित होकर लेट गया। आँखों पर हाथ रखकर उन्हें बंद कर ली। चौकीदार ने बताया था कि यहाँ की घास में कोई कीड़े-मकोड़े नहीं होते।

बहुत भारी नाश्ता लिया था। लंबे अर्से से सुबह-सुबह इतना अधिक नहीं खाया था। नाश्ते में हाथों से बनी अच्छी रोटियाँ, शहद, मक्खन, उबला अंडा, दूध, क्रीम, दलिया, कॉफी थे। बहुत दिनों से छोटी हाजरी-बाजरी खाने की भी आदत नहीं रही थी। नाश्ता खाने की तबीयत भी नहीं होती थी।

देवादिदेव का सवेरा ही दस-साढे दस बजे होता था। असल में उनकी शराब की मजलिस रात दस के आस-पास शुरू होती। चलती, चलती, चलती रहती। जहाँ भी मजलिस होती, कोई ख़ाली हाथ न आता। बगल में बोतल दबाये आता। शराब के साथ खाने का इंतजाम उसका होता, जिसके घर मजलिस जमती। मजलिस में स्टीवडोर, सेना के ठेकेदार, नामी डॉक्टर, सिनेमा हॉल के मालिक, पुराने रईस लोग होते थे, इसलिए खाना शानदार होता। केकड़े का मांस, कैवियेर, सॉसेज, बीफ़ कबाब, चिकेन रोल। स्टीवडोर की पत्नी मछली की हज़ारहा डिशें बनाती। उन्ही के मकान पर देवादिदेव ने हिल्सा मछली का स्वादिष्ट पकोड़ा खाया था। वे झींगों को पीस कर धनिए के पत्ते मिलाकर बड़े बनाती। वह महिला चपटी मेटकी मछली का जैसा रोल बनाती थी, देवादिदेव उसी से पूरा डिनर खा सकता था।

जहाँ देवादिदेव शराब पीता, वहीं जो होता खा लेता। शायद पीने से पहले वह काफ़ी मक्खन खा लेता था। उसका नतीजा होता कि उस पर शराब का असर न होता। मजलिस ख़त्म होने पर देवादिदेव को घर लौटने में रात के एक-दो-ढाई बज जाते। नींद आते-आते सुबह हो जाती। उसके बाद जब वह उठता तब कॉफ़ी के अलावा कोई और चीज लेता तो तबीयत मिचलाती।

उस समय अभागे कलकत्ता में देवादिदेव को अपनी जान का डर था। उग्रपंथियों के कामकाज भी उग्र रहते हैं। कैसी ताज्जुब की बात है कि उसके घर पर ही नक्सलवादियों का मूलकर बांगलादेश पर लिखने के बारे में टेलीफ़ोन आया ! पहली बात कैसी सत्यानासी थी ! 'आपको खत्म क्या नहीं कर दिया गया, बता सकते हैं ?' नहीं नहीं, उनका फोन नहीं है। देवादिदेव तो सर्वत्र विराजमान टमाटर है—शोरबे में, झोल में, चटनी में। देवादिदेव उनका भी दोस्त है। यह फोन उनका नहीं है ' वह फोन जरूर किसी अभागे ईर्ष्या करने वाले ने किया है। जो भी हो, इस उम्र में इस तरह का फोन आने पर होशियार होना ही पड़ता है। दवकी बनर्जी को इस बारे में बताया। दवकी बनर्जी कौन क्या क्या कब-कहाँ है, देवादिदेव से अच्छी तरह जानता था। लेकिन जिस मजलिस में तुम जाते हो, वहाँ अगर रोज उससे मुलाकात हो तो। वह बगल में व्हिस्की दबाये ऊँचे स्वर में एवतुशेंको की कविता पढ़ता हुआ मिलता। जितनी देर मजलिस में रहता, उच्छ्वसित आवाज में नक्सलवादी लड़कों के बारे में कविता सुनाता। वही पश्चिमी बंगाल के खतरा और समाप्त करना (ए० ए० आई०) और खोजकर नष्ट कर दो (एस० ए० डी०) जैसी जरूरी गड़बड़ों की धुरी है। यह धारणा दिमाग में कहीं पीछे-पीछे चलती रहती थी। वही भरोसे के लायक लगता था। उसी से फोन पर आये संदेश की बात कह देते हो। नतीजा यह होता है कि दूसरे दिन तुम्हें नींद से जगाकर कहता है 'सुबह-सुबह उठा करो, देव ! मैंने कल रात एक बजे तक शराब पी, लेकिन फिर भी पाँच बजे उठ गया हूँ। कच्चे चने खाये, यौगिक व्यायाम किया। अपने दोस्त और पहरेदार रोवर को यानी अपने अल्सेशियन को लेकर लेक तक दौड़ा, घर लौटा। अब छह बजकर दस हो रहे हैं। सुना, फोन पब्लिक-बूथ से किया गया था। इसी से उसका पता न चला। तुमको प्रोटेक्शन दे दिया गया है। रात के समय हमेशा दो आदमी तुम्हारे साथ रहेंगे पीछे-पीछे चलेंगे। नहीं, कोई आपत्ति नहीं। तुम मूल्यवान व्यक्ति हो। तुम्हारे पाँव में काँटा चुभने पर विपुल मुझे क्या सही सलामत छोड़ देगा ?'

देवादिदेव दोनों आदमियों के कारण कैसी मुसीबत में पड़ गया है—उनकी शक्ल पर ही डिटेक्टिव लिखा है। देखते ही थप्पड़ मारने की

तबीयत होती है। लेकिन यह इच्छा भी खतरनाक है। चूंकि सरकारी तौर पर देश म कही भी हिंसा न थी चूंकि 'हिंसा' शब्द नक्सलियो का घडा हुआ था इसलिए य सारे मछलीखोर सग्रहणी ग्रस्त भेदिये अहिंसक मौका पाते ही इनसानी टार्गेट पर दनादन गोली चला देते है। दो दिन बीतते ही देवादिदेव न दवकी बनर्जी से कहा, 'मेरी गरदन पर से इन्हे हटाओ।'

—घर पर पुलिस लगा दूं ?

—नही, कुछ नही चाहिए।

—देखता हूँ।

'दखता हूँ' कहकर देवकी नक्सल सबधी गोपनीय सम्मेलन म दिल्ली चले गय और इसीलिए दोनो कॉटे और कुछ दिनो तक देवादिदेव के पीछे कुत्ते की चीचडी की तरह चिपके रहे। देवकी दिल्ली से ही हरिद्वार चले गय और परमपिता देवर्षि के जन्मोत्सव म सम्मिलित हुए। शरारत के लिए उन्हान देवर्षि का प्रसाद लाकर देवादिदेव को दिया। प्रसाद खाने योग्य नही, दो बार सूंघने लायक था। एक बार सूंघने मे आधा और दो बार मे पूरा समाप्त। दो बार पेडा सुंघाने के बाद उसी पेडे से देवकी काक-भोजन कराता और कहता, 'ठीक है।'

इतना सब करने के बाद ही उन रक्षको को गरदन से उतारा गया। लेकिन कलकत्ता बहुत रद्दी जगह है। ईप्सिता की एक बहुत दूर के रिश्ते की मौसरी बहन सुन्दरी इमा थी। एक दिन वह अपनी बगल मे स्पेनिश कुत्ता दवाय देवादिदेव के घर आकर कह गयी, 'हाऊ फनी ! देव दा पुलिस के पहरे मे चलते हैं ? सुनकर हँसी आ गयी। सबब भी अजीब मजेदार था। तुमने क्या किया है कि नक्सली तुम्हे मारेंगे ? तुम्हारी किताबें पढते है हम लोग। जिसकी किताबो के पाठक हजारो लडके लडकियाँ हो, उसके लेखन से नक्सलियो का क्या बनता-बिगडता है ?'

जो लडकियाँ सुन्दर नही हैं, जिनके पास स्पेनिश कुत्ता नही है, जिनके कानों मे बाल और सिर पर फोडे हैं, ऐसे लोग भी बातें कह जाते हैं ! अदिति न एक दिन यह बात सुनकर अपनी स्वाभाविक जोरदार हँसी हँसते हुए कहा था 'यह बात हुई, इस जमाने की सबसे मजेदार चीज।'

देवादिदेव को लगा था कि अब मच से हट जाना ही अच्छा है। और

देवादिदेव विफल क्यो होगा ? पाचजन्य के बारे म सोचने पर थोडा डर जरूर लगता है लेकिन वह उम्र का दोष है। वय का डायबिटीज ऐसिडिटी का दोष है। असल म डरने की कोई बात नहीं है। वृद्ध का रुख देखकर लगता है कि देवादिदेव को उन्होने ही बताया है। कैसे बताया ? देवादिदेव क्या उन्ही के लिए बैठा था ? वह जब नहीं थे जब वह अपनी बस्ती म किसानों को चरखा चलाना सिखा रहे थ उस समय भी देवादिदेव लिख रहा था। वृद्ध की बातें बहुत आपत्तिजनक थी। हेमाद्रिराजन ! हेमाद्रिराजन न होता तो क्या होता ? देवादिदेव भी जनता का आदमी है।

पाचजन्य और देवादिदेव। देवादिदेव का अपना एक अतीत है वसा अतीत पाचजन्य का कहाँ है ? देवादिदेव को कितनी सुविधाएँ थी ! तैंतालीस साल से वह कम्युनिस्ट फ्रट का समर्थक है।

पहले वह बगाल के किसान पत्र का प्रत्यक्ष सवाददाता था। अखबार का प्रतिनिधि बनने का उस समय तीस रुपये महीना मिलता था। उसी वक्त देवादिदेव खूब घूमा था। कहाँ कहाँ नही गया ? कभी चटगाँव कभी बरीसाल कभी हाजग इलाका कभी जलपाईगुडी-बदवान मेदिनीपुर बाँकुडा बीरभूम—सभी जगह घूमा है। पुरानी फिल्मो के बारे मे जिस तरह मोह रहता है उन दिनो के लिए देवादिदेव के मन म भी उसी तरह का मोह है। बीरभूम के एक गाँव मे एक किसान औरत ने उसे वशाख की धूप म बाहर नही निकलने दिया था। सहजन के डठल की सब्जी और दाल के साथ लाल चावल का भात सामने रखकर बोली थी जाडो म आइयेगा उस समय खाने को चीजें मिलती है।

पबना के किसी गाँव मे जडहन धान काटने के मामले मे वह मुसल मान किसानो की लडाई के बीच पहुच गया था। कैसा दगा हुआ था ! दोनो दल हाथो म बर्छे लेकर धान कटाई के समारोह मे उतर पड थे पदमा के जल म लाशो पर लाशें तैर रही थी।

एसी बहुत सी बातें और भी हुई थी। खुलना म नारियल के तल म तली पूरी और भागन मछली खायी थी। जिस घर म ठहरा था उनके पास नारियल के हजार पेड थे। भिखारी साधु के आने पर भिक्षा म नारियल दिया जाता था। बगाल के किसान अखबार मे काम करते

करते देवादिदेव कृषक आदोलन से जुड गया था। बर्दवान के गांव म कृषक-समिति बनाने के प्रयत्न मे पहली बार जेल गया था। जेल म ही साम्यवाद के प्रति आस्था, अनुराग उत्पन्न हुआ था और तभी स वह उसका अनुगत हुआ। अनुगत होने की जडें बहुत गहरी हो सकती है। आँखो से जो ऊपर ऊपर देखते हो, मन उसे अलग एक तरफ रख सकता है। इसीलिए बयालीस के आदोलन ने मन को छुआ तक नही। तेंतालीस मे देवादिदेव तैयार हो गया था। तेंतालीस का वर्ष उसके जीवन के प्रारभ का द्योतक था। एक मन्वन्तर था।

स्वप्न! लगता कि सब स्वप्न है। कलकत्ता की हर सडक पर लाश। कालीघाट के ट्राम डिपो मे देखा था कि मृत माँ के नगे ककाल की छाती मे बच्चा दूध तलाश कर रहा है। जैनुल आब्दीन का चित्र—मरी लडकी का शरीर पडा है, हरसिंगार के पेड से फूल झर रहे है। नीचे लिखा है, 'उसके बाद भी आया शरद। मन्वन्तर।' काले बाजार से पैदा हुआ काला धन जिसके फटकर बरसने से अचानक बना धनी नगर की राहा पर गांव के लोग मरे पडे हैं। सवेरे लारियां मे लक्डी की तरह कठोर पड गये शवो को उठाया जा रहा है। ठक ठक ठक बेजान आवाजें हा रही हैं। वे लाशें कहाँ जलायी जाती थी? उस दौरान दो तीन बरस मे एक के बाद एक कई नाटक हुए—'आग', 'जबानबन्दी', 'लैबरटरी'। सबके बाद सब से ऊँची लहर बनकर आया 'नवान्न'। उस एक नाटक न इस महानगर मे जो तूफान खडा कर दिया था, वह आज भी याद है। अब तो सब-कुछ सपना हो गया है। बगाल मे मनुष्य द्वारा उत्पन्न किय गय दुर्भिक्ष को सहायता के लिए भारत के हर प्रदेश मे आश्चर्यजनक प्रतिक्रिया हुई थी। भूखा है बगाल!

उन दिना के गीतो मे कितन बधन टूट गये थे! मृत्यु के सिरहान मत्रणा करके किस तरह जीवित रहा जायगा? 'नवान्न' म नाविको का गान, 'ओ हुसेन भाई, दामुकदिया चाचा'। उस समय क गीत ऐसे थे—'अब कमर बाँधकर तैयार हो जाओ', 'जागो, जागो, जागो सर्वहारा।' मवका लग रहा था कि क्राति आ गयी है। इतन दशक बीत जान पर भी यह विश्वास नही जाता। देवादिदेव जानता है, इस दशक के विश्वास

से, विप्लव के रक्तसूर्य की प्रथम रश्मि से आध्र तट सबस पहने रजित हुआ था। उस विश्वास के बाद भी क्राति नही आयी है। इस देश म क्राति क्यो नही आती है ? कहाँ कौन सी कमी रह जाती है ! उन्ही दिनो देवादिदेव की मुलाकात सुकान्त से हुई थी। खूब चमकती आँखें थी, विनम्र किशोर था वह। हँसता तो चेहरा प्रकाश से भर उठता था।

सस्कृति फ्रट। साहित्य-फ्रट। तभी देवादिदेव रिपोर्ट लिखना छोडकर कहानिया के क्षेत्र मे उतरा था। उसकी पहली कहानी 'भूख' को आज भी हर कथा सकलन मे स्थान मिलता है। वह कहानी चुनौती के साथ लिखी गयी थी। साहस उसमें सदा से था। पार्टी के समाचारपत्र में शशि साँतरा सहकर्मी थे। वह शशि से कहता, 'दुर्भिक्ष पर जो लिखा जा रहा है, वैसा कुछ हो नही रहा है।'

'भई, आलोचना से क्या लाभ ? कुछ लिखकर दिखाओ न ! कहानी लिखो। कहानी होगी, पढने मे अच्छी लगेगी। रिपोर्ताज तो न होगी।'

उस समय देवादिदेव ने यह नही सोचा था कि वह एक सही कहानी लिख सकेगा। किन्तु लिख डाली। कहानी जब पढी गयी तो माणिक बद्योपाध्याय ने स्वय उसकी प्रशसा की थी। देवादिदेव को लगा कि माणिक बाबू का सहारा पाकर वह धन्य हो गया है।

माणिकबाबू ने कहा था, 'तुम लिखा करो।'

—लिखूँ ?

—लिखो।

तब उसने एक के बाद एक कई कहानियाँ लिखी—'भूख', 'किसे कठघरे मे ले आय हो ?', 'आसामी'। प्रत्यक कहानी हीरे-सी चमकदार, तफसील म खून से भरी। उसके बाद उसका पहला उपन्यास आया 'आर्त शताब्दी'। ताराशकर बद्योपाध्याय ने उसे घर से बुलवा भेजा। बाल, 'बडा अच्छा लिख रहे हो भाई, मन बहुत खुश हुआ।' उस समय के सभी बुजुर्ग साहित्यिको ने उसका अभिनदन किया था।

देवादिदेव कथा साहित्य मे अकेला है, नयो म। और कोई नहीं है। नया होन पर भी सारे प्रतिष्ठित पत्रो का रविवासरीय पृष्ठ उसकी कहानी के बिना पूरा न होता था।

रहना जैसी बातें देखकर पार्टी के लोगों की आँखें सर पर चढ जाती थी। शायद फूल देखकर, ईप्सिता को देखकर बलवत पर कोई प्रतिकूल असर हुआ हो। ईप्सिता के चेहरे पर 'लडकर अधिकार लेंगे' जैसी धमकी का भाव न था। वह बहुत साफ किस्म की थी, उसका चेहरा देखते ही पता चल जाता था। साफ गोरा रग, सुडौल नाक, बडी बडी आँखें। फैशन नही, आभिजात्य है।

—ईप्सिता, यह बलवत है।

—नमस्कार भाभी!

—नमस्कार। तुम लोग बैठो।

—जरा चाय ?

—हा, भेज रही हूँ।

ईप्सिता ने साफ वस्त्र से ढँकी एक ट्रे मे चाय, तला हुआ चिवडा, नमकीन भेज दिया। देखकर बलवत और भी असमजस मे पड गया। प्लेट मे चाय उँडेलकर सुडक-सुडककर पीने लगा। मैले हाथो से उसने ढेर-सा चिवडा उठा लिया।

—दादा, मकान आपका अपना है ?

—नही किराये का है।

—बहुत बडा है।

—अरे, मामूली सा किराया है।

—कितना ?

—पचास रुपये।

—पचाऽऽस रुपये! कितने कमरे हैं ?

—छह।

—दादा, हैसियत से बाहर नही जाना चाहिए। छोटा परिवार है, छोटे मकान में चले जाइये।

—क्या इससे छोटा मकान आज पचास रुपये में मिलेगा ?

—नही मिलेगा ? क्या कह रहे हैं ? बस्ती के पास अभी भी बीस रुपये में मकान मिलते हैं। बहुत से लोग रहते हैं।

तब देवादिदव ने सारी बात अपने पिता पर टाल दी। कहा,

बीमार हैं इस मुहल्ले में जान पहचान के डाक्टर हैं। मैं रह पाता हूँ। बाबा को कुछ हो जाने पर तुम्हारी भा के लोगों की मदद मिल जायेगी। इसीलिए छोड़कर जान नहीं सोची।

देवादिदेव मन ही मन बहुत चिढ़ गया था कम्युनिस्ट पा सबको एकता के बंधन में बाँध दिया है लेकिन यह भी सच के सभी लोग सबके व्यक्तिगत जीवन को लेकर शुभेच्छा सकते हैं। कामरेड तुम यह नहीं कर सकते कहकर सब एक आलोचना कर सकते थे। व्यक्तिगत जीवन का इतना जन देना देवादिदेव को अच्छा नहीं लगता था। लेकिन बलवंत को समझाना संभव न था।

—यह तो है ही।

—मकान का किराया कौन देता है ?

—अभी बाबा ही देते हैं।

—उसके बाद क्या करेंगे ?

—क्या पता ?

—कौन कौन रहता है ?

—मैं ईप्सिता और बाबा।

—तीन आदमियों के लिए तो दो कमरे ही काफी हैं। बाकी कमरा में पार्टी कम्यून बना दीजिये न। सत्येन दा ने तो यही किया है।

—उस समय तक किरायेदार मकानमालिक के बीच सौ किस्म के कायदे कानून नहीं आये थे। तिस पर यह भी था कि कलकत्ता में एक के बाद एक कम्यून बनाए जा रहे थे।

—यह बात ध्यान में है बलवंत।

—हर जिले में यही किया जा रहा है।

—पता है।

...प बहुत तकदीर वाले हैं।

?

...देने लायक ... पास कितना कुछ है।

रहना जैसी बातें देखकर पार्टी के लोगों की आँखें सर पर चढ जाती थी। शायद फूल देखकर, ईप्सिता को देखकर बलवत पर कोई प्रतिकूल असर हुआ हो। ईप्सिता के चेहरे पर 'लडकर अधिकार लेंगे' जैसी धमकी का भाव न था। वह बहुत साफ किस्म की थी, उसका चेहरा देखते ही पता चल जाता था। साफ गोरा रग, सुडौल नाक, बडी बडी आँखें। फैशन नही, आभिजात्य है।

—ईप्सिता, यह बलवत है।

—नमस्कार भाभी!

—नमस्कार। तुम लोग बैठो।

—जरा चाय ?

—हाँ, भेज रही हूँ।

ईप्सिता ने साफ वस्त्र से ढँकी एक ट्रे म चाय, तला हुआ चिवडा, नमकीन भेज दिया। देखकर बलवत और भी असमजस मे पड गया। प्लेट म चाय उँडलकर सुडक सुडककर पीन लगा। मैले हाथो से उसन ढेर-सा चिवडा उठा लिया।

—दादा, मकान आपका अपना है ?

—नही किराये का है।

—बहुत बडा है।

—अरे, मामूली सा किराया है।

—कितना ?

—पचास रुपये।

—पचाऽऽस रुपये! कितने कमरे है ?

—छह।

—दादा, हैसियत से बाहर नही जाना चाहिए। छोटा परिवार है, छोटे मकान में चले जाइये।

—क्या इससे छोटा मकान आज पचास रुपये में मिलेगा ?

—नही मिलेगा ? क्या कह रहे हैं ? बस्ती के पास अभी भी बीस रुपये में मकान मिलते है। बहुत से लोग रहते है।

तब देवादिदेव ने सारी बात अपन पिता पर टाल दी। कहा, 'बाबा

बीमार हैं, इस मुहल्ले में जान-पहचान के डॉक्टर है। मैं घर पर कम ही रह पाता हूँ। बाबा को कुछ हो जाने पर तुम्हारी भाभी को मुहल्ले के लोगों की मदद मिल जायेगी । इसीलिए छोड़कर जाने की बात कभी नहीं सोची।'

देवादिदेव मन-ही-मन बहुत चिढ़ गया था, कम्युनिस्ट पार्टी ने सचमुच सबको एकता के बंधन में बांध दिया है, लेकिन यह भी सच है कि पार्टी के सभी लोग सबके व्यक्तिगत जीवन को लेकर शुभेच्छा दिखा सकते हैं। 'कामरेड, तुम यह नहीं कर सकते' कहकर सब एक दूसरे की आलोचना कर सकते थे। व्यक्तिगत जीवन को इतना जन जीवन बना देना देवादिदेव को अच्छा नहीं लगता था। लेकिन बलवंत को यह बात समझाना संभव न था।

—यह तो है ही।

—मकान का किराया कौन देता है ?

—अभी बाबा ही देते हैं।

—उसके बाद क्या करेंगे ?

—क्या पता ?

—कौन-कौन रहता है ?

—मैं, ईप्सिता और बाबा।

—तीन आदमियों के लिए तो दो कमरे ही काफी हैं। बाकी कमरों में पार्टी कम्यून बना दीजिये न ! सत्येन-दा ने तो यही किया है।

—उस समय तक किरायेदार-मकानमालिक के बीच सौ किस्म के कायदे कानून नहीं आये थे। तिस पर यह भी था कि कलकत्ता में एक के बाद एक कम्यून बनते जा रहे थे।

—यह बात ध्यान में है, बलवंत !

—हर जिले में यही किया जा रहा है।

—पता है।

—आप बहुत तकदीर वाले हैं।

—क्यों ?

—पार्टी को देने लायक आपके पास कितना-कुछ है।

—मकान की बात कह रहे हो ?

—मकान है, फिर अपने-आपको भी तो आपने दे ही दिया है।

—जब तक बाबा हैं, तब तक मकान का कुछ नहीं किया जा सकता।

—वह तो है ही।

—यही तो सारा झंझट है।

—अच्छा, दादा ?

—कहो।

—एक बात कहूँ, बुरा मत मानियेगा।

—कहो न।

—क्या यह बात सच है कि भाभी कतई गैर-राजनैतिक हैं ?

—हाँ।

—भाभी से ब्याह करने से पहले क्या आपसे नहीं कहा गया था कि आप एकदम गैर-राजनैतिक लडकी से क्यों शादी कर रहे हैं ?

—कहा गया था।

—फिर क्यों की ?

देवादिदेव बहुत चिढ गया था, फिर भी शुभ्र मुसकान के साथ बोला था—'प्यार अंधा होता है, भाई ! प्यार के आगे कुछ नहीं चलता'

—निश्चय ही।

लेकिन असल मामला यों क्षण-भर मे नहीं सुलझ गया था। बाकायदा विचार-समिति की बैठक हुई थी और देवादिदेव को बताना पडा था कि उसने ईप्सिता से शादी क्यों की ? डॉक्टर अशोक पार्टी के विश्वासपात्र थे। वह ईप्सिता को पहचानते थे। ईप्सिता अवकाश-प्राप्त सिविलसर्जन की लडकी थी। अशोक ही देवादिदेव को उस घर मे ले गया था। यहाँ तक तो पार्टी ठीक-ठीक समझती रही थी। लेकिन उस घर की लडकी से 'शादी'? शुद्ध शादी ? क्यों ? ललिता ने क्या क़सूर किया था ? सभी का यही खयाल था कि देवादिदेव की शादी ललिता से होगी। पार्टी का आदमी, पार्टी की लडकी के साथ क्यों नहीं शादी करेगा ? पार्टी के लड़के पार्टी की लडकियों से शादी करेंगे, उनके वंशधर भी पार्टी के आदमी होंगे...आदि-आदि।

देवादिदेव ने कहा था कि 'पार्टी की लड़की से शादी करने से क्या

फायदा ? ईप्सिता अच्छी सामग्री है। उसका हृदय-परिवर्तन करने पर मुझे बहुत खुशी होगी। इसकी भी ज्यादा जरूरत है।'

शशि सांतरा ने कहा था, हम ही अच्छे है। शादी किये बहुत दिन हो गये। पत्नी पार्टी को नही जानती, पति को जानती है। पति अगर पार्टी का काम करता है तो पार्टी निश्चय ही अच्छी चीज है उसका ऐसा विश्वास है।'

चन्द्रनाथ मौलिक ने ठडी सास लेकर कहा था, तुम ही ठीक हो। मेरी पत्नी इतना सब कुछ नही समझती। उस दिन पूछ रही थी—पार्टी का काम करत हौ तौ का मिलत है ? फटा जूता पहन काह घूमत हौ ? तुमरी पार्टी मा वतन नाहीं बढत है क्या ?'

मोहन दा समझदार बुजुर्ग आदमी हैं। बोले, 'कामरेड, समझा बुझाकर पत्नी के मन म पार्टी के प्रति सहानुभूति पैदा करना ही उचित रहेगा।'

चन्द्रनाथ न कहा, 'सहानुभूति सन का होई ? ले ही बनावै उही की। पोस्टर साँटै क जित्ता लेही चहै उही बनाय देई। ना न कही।'

मोहन-दा जोशीले आदमी थ। बोले यह भी तो एक तरह की सहानुभूति है। हमारी बहना के यें सब काम क्या कम कीमती हैं ?'

अत म देवादिदेव की शादी को स्वीकृति प्रदान कर दी गयी। कलाकार साहित्यकारो को पार्टी उस समय बहुत स्नेह की नजरो से देखती थी।

बलवत के साथ बातें करते हुए यही सारी बातें उसे बार बार याद आ रही थी। सभी बातें। लेकिन बलवत क्या याही छोडने वाला था !

—दादा, एक बात और बतायेंगे ?

—कहो।

—हम सभी पार्टी के वकर है कार्यकर्ता हैं हम सभी बराबर है। और मैं तो सबसे बडे घर का बेटा हूँ—मजदूर का बेटा। फिर भी शरीफ कामरेडो के घर आने पर शरम लगती है। क्या ?

—दूर हो जायेगी, बलवत ! कामरेड कामरेड ही हैं। कामरेड कामरेड म कोई फर्क नही। इस पर तुम्हे विश्वास करना ही पडेगा।

—दादा वही विश्वास विश्वास होता है जो भीतर की जानकारी स,

अनुभव से आये। क्यों, सही है न ? बताइये।

—नहीं, बलवत, यह थ्योरी, यह सिद्धान्त अब नहीं चलते।

आज देवादिदेव को लगता है कि बलवत की बात ही सच थी। लेकिन यह भी सच है कि यह अनुभव होता है ढेरों गलतियाँ करने के बाद प्रौढ आयु तक पहुँचने पर, बुजुर्ग बनने पर। बलवत उस समय कैसे यह बात कह सका था ? बलवत को क्या पता था कि आयु उसके हाथ की चीज नहीं है ? इसीलिए वह बडी जल्दी-जल्दी जअनुभव बटोरता जा रहा है ?

—दादा, जब सभी कामरेड एक-से हैं तो क्या उन सबका जीवन एक-सा होना उचित नहीं है ? यह बात मुझे बहुत खटकती है।

देवादिदेव को हँसी आयी थी। राजाओं, ज़मींदारों, कलकत्ता के बडे-बडे पुराने रईस घरानों के लडके आज पार्टी-कामरेड हैं। दिन-भर पार्टी का काम कर शरीर उसी घर म वापस जाना चाहता है जहाँ सुख, रोशनी-दार कमरा, मुलायम बिस्तर, सिल्क का पैजामा सूट, मुलायम चप्पलें राह देख रही होती है। देवादिदेव राजा या ज़मींदार का बेटा नहीं है। लेकिन घर तो घर है। घर लौटने पर वह भी यही चाहता है कि सब-कुछ तुरन्त सामने हाज़िर हो जाय, हाथों के पास चटपट। खाना, चाय, सभी कुछ।

—देखो बलवत, इसमें कोई अर्तावरोध नहीं है।

—किसम ?

—हर आदमी अलग अलग परिवेश से आता है। तुरत परिवेश बदल जाये, ऐसा क्या तत्काल हो जायेगा ?

—बदलने स ही होगा।

—घर के लोग कैसे मानेंगे ?

—जो अपने घर के लोगों को पार्टी की बात नहीं समझा सकते, जो अपने घर के लोगों का मत परिवर्तन नहीं कर सकने, व समझा बुझाकर बाहरी लोगों का मत-परिवर्तन कैसे करेंगे ?

—देखो, मध्यम वर्ग के परिवारों के कामरेडों को देखकर ही तुम ऐसी बातें कह रहे हो। मध्यम वर्ग का तो अपना कोई चरित्र ही नहीं है। मजदूर और किसान सबसे अधिक मूल्यवान है। समझा-बुझाकर उनका मत-परिवर्तन करते स ही पार्टी का काम आगे बढाना ठीक रहता है।

—वे सही उद्देश्य, राइट कॉज, को खूब समझते है, दादा ! व कब आदोलनो मे आगे नही रहे है मरे नही है ? नेता ही उन्हे धोखा देते हैं।

—तुम सब समझते हो ?

—ठीक है दादा आपका मैं बहुत आदर करता हूँ। आप ही मुझे क्यो नही समझा देते ?

—अच्छा, बताता हूँ।

—कहिये।

—तुमको लगता है कि मध्यम वर्ग और उच्च-मध्यम वर्ग के कामरेड घर पर एक तरह का जीवन बिताते हैं और पार्टी मे दूसरी तरह का। इन दोना बातो में कही परस्पर विरोध है।

—हाँ दादा ! उस तरह का जीवन तो खतरे स बिलकुल खाली होता है। लेकिन अब इस समय कोई सच्चा कम्युनिस्ट क्या खतरे से खाली रह सकता है ? उन्हें देखिये तो ।

—किसकी बात कह रहे हो ?

—दीपक दा राजा आदमी हैं। अपना घर, जमीन जायदाद, सब पार्टी को दे दिया। जब सब दे दिया तब उनका कुछ नही रहा न ? सुना है कि उनका बडा भारी मकान सानीपार्क मे है। नौकर-चाकर, माली-दरबान बडा कारोबार है। सो क्या सच है ? सब दे देने के बाद भी जो कुछ नहीं है, उससे तो एक हजार गरीब कामरेडो को आराम से रखा जा सकता है !

देवादिदव को अन्दर ही-अन्दर बेचैनी हो रही थी।

—उसके बाद देखिय, बैरिस्टर कामरेडो की कारसाजियाँ। किसी के बाप न मकान दिया है तो किसी के और रिश्तेदार ने ।

—बलवत, सुना !

—कभी कभी लगता है कि हम वर्गहीन समाज की सिर्फ बातें ही करते हैं। लकिन ध्यान से देखन पर देखेंगे कि पार्टी मे भी वर्ग-भेद आ गया है।

आज देवादिदेव को लगता है कि उस समय बलवत भविष्यद्रष्टा की तरह बोल रहा था। कम्युनिस्टो म उस समय भी वर्गभेद था। रईस दुलाल,

दीपक नन्दी, बैरिस्टर कामरेड बंकिम राय, सुधीन्द्र गुह—इन्हें कभी ऐसा कोई काम नहीं करना पडा जो पार्टी के पूरे वक्त के कार्यकर्ताओं को बिना खाये-पिये मजदूरों का सहारा लेकर करना पड़ा था। आधका प्रशात महेंद्र उत्तरी बगाल के चायबागान के मजदूरों मे काम करते हुए तपेदिक से मर गया। उसकी मृत्यु के बाद एक गलत पते की चिट्ठी प्रशात के नाम आयी थी। प्रशात की बुआ ने लिखा था, 'श्री चरणे निवेदनम् कम्युनिस्ट पार्टी सघम्। तिरुपति भागवत के आदेश से प्रार्थना करती हूँ कि बिना माँ के मेरे भतीजे प्रशात अनतम् महेंद्र को वापस भेज दो।'...ऐसे बहुत-से कामरेड संकट की हालत मे लाचार मर गये, हमेशा के लिए समाप्त हो गये, और बडे घर के कामरेड भिन्न रूपो मे आज भी दिखायी पड रहे है। कौन बडे घरो के बड़े-बडे कामरेडो को बायें हाथ से दाहिने मे लेता है, और दाहिने से बायें मे, दाहिने से दाहिने मे, लेकिन इन्हे बाये-से-बायें मे नहीं देखा जाता। वहाँ और दूसरे कामरेडो का मजमा रहता है।

देवादिदेव को बलवत की बातों से बहुत उलझन हो रही थी। उसने कहा, 'बलवत, जनयुद्ध चल रहा है। इस युद्ध मे फ़ासिस्ट शक्तियों का पतन होगा। इसलिए यह लड़ाई बहुत ही महत्वपूर्ण है।'

बलवत ने तब गुनगुनाकर गाया था, 'अतिम युद्ध शुरू आज कामरेड।'

उसके बाद देवादिदेव ने कहा था, 'भारत क्या हमेशा ऐसा ही रहेगा ? यहाँ भी समाजवादी क्राति आयेगी। हम सभी उसके कारीगर हैं, बलवत ! यह समय क्राति का स्तुति-पर्व है।'

—पता है, दादा...?

—पार्टी के होलटाइमरों को जो मजदूरी मिलती है इसमे सत्तू खाकर पार्टी-दफ्तर की मेज पर ही सोया जा सकता है। कौन घर लौटकर आराम करता है ? ऐसी सारी छोटी बातें सोचकर मन खराब मत करो। मै कहता हूँ कि सोचने का यह तरीका ठीक नहीं है।

—अच्छा, नहीं सोचूंगा।

बलवत ने मुसकराकर जवाब दिया था। उसके बाद बोला था, 'पेशाब करूँगा, दादा !'

देवादिदेव ने उसे बाथरूम दिखा दिया। साफ बाथरूम देखकर बलवंत

ने कहा, 'न दादा, आदत नहीं है। मैं सड़क पर निबट लूँगा। ऐसे साफ़ बाथरूम में पेशाब करना बहुत ही ज्यादा बुर्जुआ काम है।'

आज कलुषहीन पहाड़ों की हरी घास पर लेटे, शरीर को डेज़ी फूलों को छूकर आयी हवा लग रही है। देवादिदेव ने दोनों हाथ ढीले छोड़ दिये और करवट ली। चेहरे को डेज़ी फूलों की पंखुड़ियाँ परस रही थीं, जैसे फूल उससे कुछ कह रहे हों। शायद उनका यही संदेश हो कि जब तक यहाँ हो, हमारी तरह रहो। लेकिन देवादिदेव यह नहीं कर सकता कि फूलों की भीड़ में खो जाये, तरंगों के समान बर्फ़ीले पहाड़ों में समा जाये। देवादिदेव को क्षमा करो। देवादिदेव कितना अभागा है कि फूलों से क्षमा माँग रहा है!

याद आया कि उस दिन ईप्सिता कह रही थी कि 'तुममें अंतर्विरोध है। तुम्हारी तरह तुम्हारा जीवन अंतर्विरोधी है।' लेकिन उस दिन देवादिदेव क्या कर सकता था? ईप्सिता के शब्दों में उस दिन उसने अपना विरोध अपने-आप किया था। सतु का गीत था 'महाजीवन का गान!' 'चलो मुक्ति पथ पर', सतु की यह गीत उसके अपने स्वर में कितना विचित्र लगता था! निरीह, विनीत, सभ्रांत। कौन कहेगा कि जमींदार का लड़का है! इस सतु के बारे में ही देवादिदेव आदि ने क्या ठीक निर्णय लिया था? उसे संगीत-निर्देशन के लिए सिनेमा में क्यों भेजा गया? कभी वह दिल्ली था, अब कलकत्ता में है। आँखों में और चेहरे पर बच्चों की-सी सरलता। खिली मुसकराहट। हमेशा वह एक जैसा ही बना रहा।

क्या देवादिदेव ही अंतर्विरोधों से ग्रस्त था? देवादिदेव के साथ के और भी तो साथी थे। 'साथी! साथी! कंधे से कंधा मिलाओ', गीत क्या कहता था? कभी जो साथी थे, उनमें से कितने ही आज समाज के स्तंभ हैं, विभिन्न संस्थाओं में सर्वोच्च पदों पर बैठे हैं। एक्जीक्यूटिव लोगों की पार्टी में सभी लोगों ने देवादिदेव के हर कदम का समर्थन किया। उनके समर्थन ने ही देवादिदेव को खुलकर साँस लेने के लिए वायु-मंडल की रचना की। पश्चिम बंगाल के रक्तोत्सव की ओर से मुँह फेरकर देवादिदेव बांगलादेश के मुक्ति-संग्राम की सहायता के लिए बुद्धिजीवियों की

बनाता है। उसके लिए उसे समर्थन भी मिलता है। जयप्रकाश नारायण के पक्ष मे हस्ताक्षर के लिए भी उनका समर्थन उसके साथ है। जयप्रकाश क विपक्ष म हस्ताक्षर करने हों तो उसम भी उनका सहयाग प्रस्तुत है।

अकेला बलवत ही सडक पर बैठकर पेशाब नहीं करता। उसका आचरण स्वाभाविक था। आज क तमाम ऊँचे ऊँच अधिकारी तब अपन को जनता का पक्षधर सिद्ध करन के लिए देवादिदेव क साथ जनता क सामन ही बैठ सू सू कर बहुत आनन्दित होत। उनक निकट यह एक सर्वहारा चेष्टा थी। आज क एक नेता न बचपन तक म कभी 'बदर' शब्द का उच्चारण नही किया था। 1944 म एक सभा के अत म उन्हान दमकत चेहरे से कहा भाई देवू! आज मर मुँह स एक गदा शब्द निकल गया—साला। जानते हो यह शब्द कहकर मैंन आपन का बहुत हलका महसूस किया—लिबरेटेड होन का भाव।

देवादिदेव न कहा था, 'अपने एक रिश्तेदार का नाम लकर ही लिबरेटेड हुए, दादा !'

बलवत को इन सब पर विश्वास था। लेकिन नही, देवादिदेव मे काई कपट-भाव न था। उक्त आचरण भी विश्वास के कारण था। उनका विश्वास था कि वह ठीक काम कर रहे है। मणि प्रामाणिक असहयाग आदोलन के समय से ही घाट कुघाट रहता आया था। वह कहता था, 'अर इस तरह जनता क पास नही जाया जायगा। इससे कुछ नही होगा। बहुत ही सिनिक था। वह आँता क कैंसर स कब का मर-खप चुका है।

बलवत! बलवत लाल! उसके दिमाग म लाल सूरज था, उसी गान की तरह, देखो सुख सवेरा आता है, आजादी का, आजादी का।' 1944 म देवादिदेव की उम्र बत्तीस थी—और उसकी उन्नीस। बस्ती के इलाक का समाचार लिखता था कामरेड। बस्ती बलवत का कर्मक्षेत्र था—चौरासी नरकों का कुड। वह अब भी ज्यों की त्यों है। उस बस्ती मे भी इसान घर म रहता है, जहाँ चाहे मलत्याग करता है, गदा और दूषित पानी पीता है। शराब पीकर जिस किसी का पीट देता है। हमार यहाँ का काई बलवत वहाँ कभी न रहन जाता।

लेकिन वह बलवत वहाँ रहता था। यह सोचकर देवादिदेव अपन को

बहुत निश्चित-सा महसूस करता। गाँव वालों के बीच रहकर ही उनके बारे में लिखना ठीक होता है। यह बात वह भी मानता है, लेकिन वह स्वयं उनके बीच रहकर काम न कर सकता। इसीलिए मन कचोटता रहता। बलवंत वहाँ उनके बीच रहकर काम करता है, यह सोचकर उसे बड़ी बेफ़िक्री भी होती। यह सोचकर देवादिदेव सो सकता था, बशर्ते बलवत उसे सोने देता।

वह बीच-बीच मे आ पहुँचता। इसी बीच वह ईप्सिता के साथ बहुत घनिष्ठ हो गया था। उसे देखते ही ईप्सिता कहती, 'कोई बात नही, पहले चाय पी लो। उसके बाद पेट भर खाना खाना। बाद में बाहर के कमरे में लेट जाना।'

बलवत के पिता ने एक बार ईप्सिता के लिए कांच की चूड़ियाँ और एक पुड़िया सिन्दूर, गेहूँ के दलिये के कुछ लड्डू भेजे थे। बलवंत की माँ नही थी।

देवादिदेव को देखते ही बलवत हमला करता, 'क्यों, आदमी इस घृणित ढग से क्यो जीये? उसका क्या कसूर है? ऐसे आदमी की कहानी कौन लिखेगा? कब वह कहानी लिखी जायेगी?'

—तू लिख।

इस बीच बलवत देवादिदेव के लिए 'तू' हो गया था, लेकिन देवादिदेव 'आप' ही बना रहा था। 'तू लिख' की बात ने बलवत को अंतिम परिणति की ओर ढकेल दिया। कभी-कभी शब्द कैसे शक्तिशाली बन जाते हैं!

—हाँ, जरूर लिखूँगा।

—क्या लिखेगा, कहानी?

—न दादा, कहानी नही लिखूँगा। जो देखूँगा वही लिखूँगा। कहानी मे ऐसा नग्न यथार्थ नही आ सकता।

—गोर्की की 'लोअर डेप्थ्स' पढ़ी है?

—भूल गया। 'लोअर डेप्थ' रोज देखता रहता हूँ न।

—मैंने कहा, कहानी मे सच्ची बात लिखो।

—अंग्रेजी में?

—क्यों नही?

—अँग्रेज़ी में लिखने से बहुत लोग पढ़ेंगे।

—ज़रूर।

—दादा, खयाल बहुत अच्छा है।

—लिख सकेगा ?

—देखूंगा। अँग्रेज़ी में लिखना ठीक रहेगा।

—इसके लिए खास पेशे वालो की बस्ती मे जाना बहुत अच्छा रहेगा।

—वाह दादा ! राह दिखा दी। आज मैं भाभी को गाना सुनाऊँगा। भाभी मेरे लिए पूरियाँ बनायेंगी।

बलवत ने भरपेट पूरियाँ खायी। ईप्सिता और बलवत एक-दूसरे के साथ कितने सहज थे, यह देखकर देवादिदेव को आश्चर्य होता। उसी दिन देवादिदेव को पता चला कि ईप्सिता बलवत के लिए एक लाल स्वेटर बुन रही थी।

—क्यो ईप्सिता ?

—क्यो नही ? कहाँ-कहाँ घूमता फिरता है। उसका शरीर भी ऐसा है कि ठड लग सकती है।

देवादिदेव कोताज्जुब हुआ। उसी दिन उसे पता लगा कि बलवत को ठड बहुत जल्दी लग जाती है। यह भी मालूम हुआ कि ईप्सिता ने बलवत को विन्कानिस टॉनिक की दो शीशियाँ खरीद दी थी।

बलवत ने पूरियाँ खायी। स्वेटर पूरा बुन जाने पर उसने उसे पहनने के लिए आने का वादा किया। उसके बाद कहाँ डुबकी लगा गया कि फिर दिखायी न पड़ा। ईप्सिता ने उसके लिए स्वेटर बुना। उसके आगमन के लिए ईप्सिता कैसी परेशान थी ! लेकिन देवादिदेव के पास परेशान होने का वक्त नही था। वह बहुत-से बडे-बडे कामो मे व्यस्त था। उसने ईप्सिता को समझाया भी कि उसके लिए इस तरह परेशान मत हो ! लेकिन बलवत तो जैसे लापता ही हो गया था।

एक दिन घर लौटने पर अजीब दृश्य देखा। बलवत शायद स्नान कर रहा था। बहुत कमज़ोर हो गया था। लेकिन उसकी शक्ल स्याही रंगे बुद्धुओं-सी हो गयी थी। कपडे भिखारियो-से भी गये-गुज़रे पहने था। आँखें उत्तेजना से, खुशी से चमक रही थी। यक्ष्मा ! बलवत चहक कर

बोला, 'दादा, कमाल कर दिया।'

—क्या किया?

—'फाम द लोअर डेप्थ्स' नाम कैसा लगता है?

—किसका नाम?

—चमार बस्ती के डेढ़ सौ औरत-मर्द-बच्चों-कच्चों के बारे में सीधा एक रिपोर्ताज लिखा है। दादा, कहानी मुझसे बनी नहीं। उनके जीवन ही कहानी बन गये हैं। दादा! देखो मैंने यह लिखा है। देखिये न।

देवादिदेव के हाथों में पृष्ठ देकर बलवत ने खाँसना शुरू किया। खाँसी की आवाज बहुत भयानक रूप से खोखली-थी। सुनकर ईप्सिता चौंक पड़ी। सुनते ही समझ में आ जाता था कि जहाँ से खाँसी आ रही है, वह जगह एकदम खोखली हो गयी है।

उसकी अँग्रेज़ी में एक विशेष स्वाद था। मेधावी होने के कारण एक हिन्दी स्कूल में फ्री पढ़ा था। पिता दशरथ लाल ट्राम के होशियार कर्मचारी थे। बड़ा दुलारा बेटा था उनका। बेटे को पढ़ाने-लिखाने में पिता की बहुत रुचि थी। उसकी अँग्रेज़ी साहिबी अँग्रेज़ी न थी, निजी अँग्रेज़ी थी।

उसके जीवन की परिधि बहुत छोटी थी। उसने कुछ लेख ही लिखे थे। थोड़े-से समय में ही बलवत ऐसा पा गया था कि गर्व किया जा सके। जिस चमार बस्ती पर बलवत ने लिखा था, वहाँ आज पिकनिक गार्डेन्स नाम की कालोनी बन गयी है। ढेरों घर बन गये है। देवादिदेव हाल ही में वहाँ गया था। सतु राय के घर। मकानों के समूह को देखकर उसे लगा था कि यह वही जगह है। अब वहाँ कोई नीची बस्ती नहीं है। नये-नये मकान बन गये है, लेकिन अब चमड़ा मज़दूरी करने वाले वहाँ नहीं रहते।

आज बलवत के बारे में सब कुछ लिखा जा चुका है। बहुत कुछ तो देवादिदेव ने स्वयं लिखा है। उसकी अँग्रेज़ी की कलिंघम ने बहुत प्रशंसा की है। 'मैं तल की गहराइयों से लिखता हूँ।' बलवत की रचना के प्रथम अनुच्छेद को पढ़कर ही देवादिदेव ने कुर्सी का हाथा पकड़ लिया। वह हार गया था, बिलकुल हार गया था। बलवत की रचना जीवन-यंत्रणा में पीड़ित शरीर से काटा हुआ खून से लथपथ टुकड़ा था। देवादिदेव के यथा-

साध्य प्रयत्न करने पर भी क्या होता ! उसकी रचना तो मध्यवर्ग की नफासत से सजा लिवास है, यह बात देवादिदेव तभी समझ गया था। बलवत ही उसका प्रतिद्वंद्वी है।

ईमानदार बनो, ईमानदार बनो देवादिदेव ! इंजी फूलो की गध मे डूब कर उसने अपने से कहा—ईमानदार बनो। ईप्सिता, इस निर्जन मे, पहाड पर लेट कर मै बहुत-सी सच्ची बातें अपने से कह रहा हूँ।

बलवत की रचना की पहली पक्ति पढते ही मुझे गार्की की पक्तियाँ याद आने लगी थी। युवक गोर्की की आत्मकथा का प्रथम खड इस सहज वाक्य से समाप्त होता है, 'और ससार मे प्रवेश किया।' बलवत हमारा गोर्की है। वह भी बाहरी दुनिया मे निकल पडा था। भारत मे बाहर की दुनिया देखने के लिए अपना जीवन का दायरा छोडकर आम आदमी के जीवन मे प्रविष्ट हो जाओ, श्रमजीवी मानव के जीवन म। बलवत वही गया था। वहाँ जाकर उसकी हालत बहुत खराब हो गयी थी। एक इसान अचानक ब्रह्माड मे प्रवेश कर जाये तो उसे वहाँ सब-कुछ देखने को मिल जाता है। शुरू मे उसे डर लगता है। वह देखेगा कि वह जिस आयाम मे आ पहुँचा है, वहाँ करोडो सूर्य खेल रहे है। वह ग्रहो के ससार का मानव है। धरती के मनुष्य के निकट एक सूर्य ही विस्मय की चीज है। सूर्य की प्रतीकात्मक शक्ति ऐसी दुर्दमनीय है कि वेदो के ऋषियो से लेकर रवीन्द्रनाथ तक सभी सूर्य को तरह-तरह मे देख गये हैं। आज भी सूर्य कवि-लेखको को नये-नये रूपो म दिखायी पडता है। ब्रह्माड मे पहुँच कर इसान देखता है कि करोडो सूर्य जल रहे हैं, करोडो योजन तुषार जमा हुआ है।

बलवत ने जाना था कि उसने अभी तक जो जीवन देखा है उसकी अभिज्ञता बहुत सीमित, बहुत तुच्छ है। चमारो की दुनिया ब्रह्माड के समान भय पैदा करती है। कच्चे चमडे की दुर्गंध, बस्ती को जाने वाली सडक पाखाने और कीचड-फिसलन से भरी है, हर कोठरी का फर्श कीचड से गीला है, छत टूटी है। एक ही गढैया के कीचड-भरे दुर्गंधयुक्त पानी से नहाना, रसोई बनाना, पानी पीना होता है। सुअरो के साथ इसान रहता है। हर घर मे यक्ष्मा-कुष्ट कृमि-प्लीहा-रक्तालपता है। मालिक महाजन से बयाना लेते वक्त चमार डरे-डरे रहते थे कि कही उनकी छाया महाजन

पर न पड जाय। देखा था कि दूकानदार इह पल्ल मे दूर स सौदा दत है कि कहीं छू न जायें। बलवत जिस दिन वहाँ गया था उसके दूसरे दिन गोकुल चमार की लडकी आग स जल गयी। नन्ही बच्ची थी। डाक्टर न उसका मुआयना छूकर नही किया। वलवत का साथ म देखकर बोले, शायद कम्युनिस्ट है? ऍ! तभी तो कह रहा हूँ कि किसी शरीफ क मन म चमार के लिए एसी दया कैस हागी?

डॉक्टर जानत थ कि कम्युनिस्ट शरीफ आदमी नही होते। बलवत मरहम वरहम खरीद लाया। बच्ची जी उठी और इसी तरह की बहुत सी घटनाआ क बाद बलवत को उन लागा न अपना आदमी मान लिया और बलवत उस ब्रह्माड क हृत्पिण्ड म पहुँच गया। चमारो का चमडा मजदूरो का जीवन महाजन के यहाँ बधक है। उनका दशा सबकी नजरो म घृणित है। इस कारण दूकानदार स लेकर सभी लोग उन्हे दुरदुरात रहते हैं। लेकिन आश्चर्य की बात है कि किस्सा कुछ और ही है। ये सब बिहार के एक विशेष अचल के निवासी है। वहाँ उनका जीवन और अस्तित्व दो महाजनो के हाथा बिका हुआ था। कलकत्ता भाग आकर जीते रहन की विवशता उनक दस क महाजन की भूख सूद दर सूद मिटा रही है। लेकिन व तो आये बग भाग्य आया सग। उन्ही दो महाजनो के बेटे यहाँ आकर महाजन बन बैठ। इसका फल यह हुआ कि जानवरो का चमडा कमान के साथ साथ उनका चमडा भी कमाया जा रहा था। कलकत्ता के महाजन देस के महाजन की भूख मिटाकर वे कलकत्ता म हवा खाकर जी रहे हैं। इस चक्कर से उन्ह निजात दिलान की सामर्थ्य किसी म नही। यह सब जानन के बाद बलवत को विश्वास हो गया कि इनका, लँगोटी वाले हर चमार का अपना अलग सौर जगत है। प्रत्येक को केंद्र बनाकर सूदखोर महाजन उनक गिर्द चक्कर लगा रहे हैं लगाये जा रहे है। देस की तरह यहाँ व महाजन स ऐसे डरते हैं मानो यमराज हो। यहाँ के महाजन बडे वाजार क बनिये हैं।

उसकी बातें सुनकर देवादिदेव समझ गया था कि बलवत के हाथ मूल्यवान चीज लग गयी है। उसने कीमती चीज लिखी है। तभी उसने चाहा था कि बलवत का मर जाना ही ठीक है। ऐसा उसने क्यो

चाहा था ?

खाँसी रुकने पर बलवत मुँह पोंछ कर हाँफ रहा था। देवादिदेव को खाँसी का खोखलापन अच्छा नहीं लगा।

—कई दिनों से खोज रहा हूँ। कहाँ थे, दादा ?

—बाहर।

—कान्फ्रेंस कर रहे थे ?

—हाँ, लेखकों कलाकारों की कान्फ्रेंस चल रही है।

—इस तरह शरीफ आदमियों के संगठना-कान्फ्रेंसो से क्या होने वाला है ? दरअसल आपके हमारे लिखने से ही क्या होगा ? पढ़ेंगे तो शरीफ लोग ही ?

—तुम ये सब बातें नहीं समझोगे।

—वाह दादा, वाह ! ऐसे बिगड़ रहे हो कि 'तुम' कहने लगे। सो कहिये, पर आपके लिए भी यह सब समझना संभव नहीं है। आप भी तो शरीफों में से है। आप सभी का लेखन बहुत अच्छा है। आपका, सुकान्त का, सुभाष-दा का, और शायद मेरा भी, मुझे भी तो आप लोग लेखक कहते हैं। लेकिन हम सबकी लिखी चीजें मध्यमवर्ग के पाठक ही पढ़ते हैं, उस मध्यमवर्ग के जो कुछ नहीं करने वाला है। मध्यमवर्ग अपनी मेहनत से कोई रचनात्मक काम तो करता नहीं। यह वर्ग तो इस व्यवस्था मे उत्पादक-शोषक-शासक, किसी श्रेणी मे, किसी वर्ग मे नहीं आता। उनका जीना बहुत ही सेकेंडहैंड, बहुत ही बेकार-सा है। वे किसान नहीं है, कारखाने के मजदूर नहीं हैं, मेरे देखे हुए चमड़े के मजदूर भी नहीं। वे यह सब प्रतिबद्ध लेखन पढ़ें या नहीं, क्या फर्क पड़ता है ? जिस लेखन के पढ़ने से कुछ हो, क्या वे उसे पढ़ते हैं ?

—नहीं।

—क्यों नहीं पढ़ते ?

बलवत न जाने कैसे ऐसा दुस्साहसी हो गया था। पार्टी के नन्दलाल, दुलारे, देवादिदेव बसु को अभियुक्त बनाकर बलवत सहसा बोला, 'क्या नहीं पढ़ते ? किसान-मजदूरों के आंदोलनों से क्या होगा ? उन्हें पढ़ना-लिखना क्यों नहीं सिखाया जा रहा है ? बिना सिखाये वे अपने अधिकारों

को कैसे जान पायेंगे ? दरअसल बात कुछ और ही है। शरीफ लोग उनसे खिलवाड कर रहे है। किसानो के लिखना पढना न सीखने से नेतागिरी शरीफ आदमियो के हाथो मे ही रहेगी।

—तुम क्या इन सभी बातो को समझते हो ?

—तो आप समझाइये। यह भी तो एक काम है, है न दादा ? हा बलवत बिहारी बुद्धू है टाम मजदूर का लेखक बेटा। उसका सोचने का तरीका गलत हो सकता है। ठीक है। लेकिन बलवत ने तो आपको दादा कहा है। छोटे भाई को समझ न हो तो आप समझा दें। समझा देंगे न ? ठीक ! खुद भी समझिये और जिससे सभी कुछ ठीक ठाक रहे वह कीजिये। मै चला।

—कहाँ जा रहे हो ?

—घर जाऊँगा। बहुत दिनो से नही गया।

—सब तुमने खुद किया है। बताया भी नही कि क्या कर रहे हो ? पार्टी क्या तुम्हे रोक रही थी ?

—किससे कहता ?

—अखबार के आफिस मे कह सकते थे।

—क्या दादा, क्योकि मैं बलवत हूँ। मैं भी तो कल्चरल फ्रट सास्कृतिक मोर्चे का कार्यकर्ता हूँ कलाकार हूँ ! कलाकार लेखक तो स्वतत्र रूप से काम करते हैं। कल्चरल फ्रट मे शामिल जो लोग नाटक लिखते हैं गीत बनाते हैं उनसे कोई पूछता है ?

—ऐसा कहने से तो कुछ भी नही कहा जा सकता।

—काम करता था रिपोर्ट नही दी बस।

—लिखा हुआ रख जाना।

—क्या ?

—पढकर देखूँगा।

—उसके बाद ?

—उसके बाद बताऊँगा कि उसका क्या किया जाय ?

—नो दादा !

—क्या ?

—इसे हेमन दा ने पढा है, और वही छाप भी रह हैं। बबई भेज भी दिया है। यह तो प्रारभिक पाडुलिपि है, आपको दिखा दी।

—*पहले हेमेन को क्या दिखाया ?*

—अशोक-दा ने कहा था।

—अशोक को कैसे मालूम हुआ ?

—उसे पता था कि मैं क्या काम कर रहा हूँ। वही तो वहाँ जाते थे, मुझे दवाई देते थे, बस्ती के आदमियो को दवा देते थे।

—मुझे तो इस सब का कुछ भी पता नही है।

—अशोक-दा से ही तो भाभी को मालूम हुआ।

—*मुझे यह भी नही पता।*

—भाभी बडी ग्रेट है, दादा! ममसाहब तो वह बाहर के लिए हैं। शी इज ए ट्र मदर—सच्ची माँ।

बलवत चला गया। देवादिदेव का कलजा अजीब आक्रोश से जला जा रहा था। अशोक ही सारी बुराई की जड है। वह न होता तो बलवत अपनी पाडुलिपि पहले देवादिदेव को ही देता। अशोक देवादिदेव पर विश्वास नही करता है, इसीलिए उसने पाडुलिपि हेमेन को देने को कहा था। *हेमेन के हाथो मे जाने का मतलब तत्काल प्रकाशन होगा।* प्रकाशित होने पर बलवत का नाम एक बडे विस्तृत पाठक समाज म स्वीकृति पा जायेगा। बहुत ही बुरी बात है। अशोक के पास अभी जाना होगा। अशोक बलवत को देवादिदेव की उपेक्षा करना क्यो सिखा रहा है ?

अशोक अकेला मिलता तो देवादिदेव उससे क्या कहता, नही कहा जा सकता। लेकिन वहाँ बैठा था हेमेन। हेमेन म किसी भी व्यक्ति मे गुण खोज निकालने की आश्चर्यजनक सामर्थ्य थी। हेमेन ने ही वरुण से कहा था कि 'जनयुद्ध बेचने के लिए और लोग भी हैं। जाओ, बटुक या जॉर्ज के पास रहो। तुम्हारा गला गाने के लिए बडा अच्छा है।'

वरुण को यह सुनकर बडी खुशी हुई। यह सही है कि उसने 'जनयुद्ध' और 'पीपुल्स वार' बचना बद नही किया, लेकिन गाने भी गाता रहा। गान वह बहुत अच्छे गाता था। क्यूर कामरडो क फाँसी का गीत था

'लौटा दे लौटा दे हम क्यूर बधुओ को,

मलाबार की कृषक संतान,
कृषक सभा के प्राण,
जीते रहेंगे वे देशवासियों के हृदय मे।'

इस गीत को कई प्रसिद्ध गायकों ने भी गाया था, लेकिन वरुण इसे गाकर रुला सकता था। क्या इन सबको याद करना अच्छा लगता है?

जो भी हो, हेमेन बैठा हुआ था। देवादिदेव को देखते ही बोला—'लो, द्रोण और एकलव्य की कहानी आज उलटी हो गयी।'

—क्या हुआ?

—एकलव्य द्रोण को हराने जा रहा है।

—यह सब क्या कह रहे हो?

—अरे, मजाक कर रहा हूँ। न तो तुम द्रोण हो, और न यह बलवत एकलव्य। लेकिन लडका तुम्हारा भक्त है, तुम्हे गुरु मानता है। उसका एक लेख मिला है। लगता है कि लडका बहुत ऊपर उठेगा।

—जानता हूँ देखा है।

हेमेन अकसर दुविधा मे पडा सोचता था कि क्या यह सारा प्रजातान्त्रिक साहित्य प्रगतिशील साहित्य है? दरअसल इसमे कुछ भी नही है। नही तो उसकी बातो म इतनी खुशी, ईर्ष्यामय उल्लास उस दिन क्यो था? वैसे शात इसान है बहुत ही शात। इसान को जानना बहुत मुश्किल है। हेमेन 1948 49 मे रणदिवे की लाइन को बुरा भला कहता था। वह समय भी कैसा था! पार्टी के कार्यकर्ताओ के पीछे पुलिस लगी रहती थी। कार्यकर्ता छिपे छिपे—अडरग्राउड—रहते। शाम को अँधेरे म हैंड प्रेस पर छपा पार्टी का अखबार बाँटने क लिए कैसी व्याकुलता रहती थी! पुलिस की गोली से कौन कौन गया? कातरता, व्याकुलता, उद्वेग और उत्कठा थी! अखबार म तसवीरें निकलती, बडी भद्दी तसवीरें होती थी। देवादिदेव हेमेन को खबर लेने गया था। दीप ने अचानक हाथ पर एक कागज रख दिया। उसकी आँखे पीडा से भरी थी। 'पता है? खबर मालूम है? नही पता? सबसे महत्वपूर्ण खबर नही मालूम?'

दीप की आँखें जैसे जल उठी हो। आप लोग एक ही जाति क आदमी है, मोशाय! पार्टी म क्यो आये? शुद्ध कला, शुद्ध साहित्य तो कही भी रच

सक्त थ ? सभी कुछ सभव था ।

इस तरह का कुछ भी देग्कर दीप असहिष्णु हा जाता था । उस समय देवादिदव को लगता कि यह ज्यादती है । काम स वचन का पार्टी कामरडा का ढग देखकर दीप इतना असहिष्णु क्यो हो उठता है ?

हमन कहता— आर्टिस्ट भी आदमी होता है ।

—कैसा आर्टिस्ट ?

देवादिदव समझ नही पाता था कि दीपक को कोई गभीरता से क्या नही लता था ? दो एक बरस बाद सुना कि अनक लोगो से बडी मुश्किल से रुपये जमा कर करके वह फिल्म की शूटिंग करता रहा । फिल्म का नाम था मानुप । कहानी पटकथा और निर्देशन दीप का ही था । दवादिदेव न सुना था लकिन दखा नही दिया । फिल्म के बारे म उसे भीतर स ही कोई उत्सुक्ता न थी । बहुत सी चीजें एक साथ समातर चलती रहती हैं । प्रथम अतराष्ट्रीय फिल्म समारोह हुआ था । हर फिल्म दखकर बाहर निकलन पर लगता था कि फिल्म बहुत ही शक्तिशाली माध्यम है लकिन इस दश का सिनमा अतर्राष्ट्रीय क्षत्र म कभी भी ऊपर न उठ सकगा । उसक बाद ही बनी पथेर पाचाली । उसी दौरान मानुप देखकर सहसा देवादिदेव को लगा कि फिल्म बनाते वक्त दीप बहुत ही युवा था ।

हेमेन बहुत ही स्नेह स दीप को सहारा देता था । जोशी काल रणदिवे काल उसक बाद और दूसरे काल—एक के बाद एक काल व्यक्ति के नाम से चिन्हित होता जा रहा था । चिह्नित काल का एक जैसा रहना जरूरी नही था । उसी रणदिव काल म देवादिदव हेमेन का पता लेने के लिए उसक घर भागा भागा गया था । तभी वहाँ दीप भी अप्रत्याशित रूप से घुम आया । लबोतरा चेहरा दुबला शरीर उस पर अलवान हाथा म एक भद्दा सा छपा कागज था ।

—खबर सुनी ? कुछ पता है ? नही पता ? ण अहम खबर भी नही मालूम ?

सोचने पर देवादिदेव को सहसा एसा महत्वपूर्ण खबर रहती है । जिस खबर पर

जाता है, वह मोटे तौर पर सामान्य ही होती है।

1976 वर्ष का अंत भी इसी तरह का था। 25 दिसबर की पार्टी। प्रेमानन्द का मकान। देवादिदेव सज धजकर निकला तो तीन लडके उस एक भद्दी सी पत्रिका थमा गये। उसमे 1976 के महत्वपूर्ण समाचारो की सूची थी। साथ ही लडको ने उसमे कई भोंडे मजाक किये थे। लिखा था '1976 का वर्ष अतर्राष्ट्रीय महिला वर्ष है। इस उपलक्ष्य म महिला वर्ष के शुरू मे ही पश्चिमी बगाल मे, उग्रपथियो की सहयोगी होन के सदेह म एक महिला को गोली स मार डाला गया है। जनवरी का जरूरी समाचार यही है। दिसबर की पहली तारीख की खबर थी कि तलगाना के प्रसिद्ध भूमैया गौड को हैदराबाद जेल म फाँसी। इन दोनो समाचारो के साथ टिप्पणी लगी थी इन दानो व्यक्तियो म से किसी को भी दोस्ताएवस्की के बारे म पता था या नही, कोई नही जानता। जैस रूस के जार निकोलस ने दोस्तोएवस्की को प्राणदड से अतिम समय म क्षमा कर दिया था उसी तरह फाँसी के एस सजायाफ्ता लोगो को अतिम समय म राष्ट्रपति के सामने क्षमा की अर्जी पेश करन की छूट है ताकि कोई यह न कह सके कि जार निकोलस भारतीय प्रभुसत्तासपन्न प्रजातान्त्रिक गणतत्र स अधिक दयावान थे। महत्वपूर्ण समाचार यह भी है कि शायद राष्ट्रपति को भी दोस्तोएवस्की के बारे मे पता नही।'

आमतौर पर महत्वपूर्ण समाचार राजनैतिक हत्या से सबधित होते थे। उसी रणदिवे काल की बात है। अभागा हमेन हरिण के घर गया है, यही पता लगाने क लिए जब वह हेमेन के घर पहुँचा तो दीप महत्वपूर्ण समाचार लिये मिला था। समाचार पत्र बहुत ही भद्दा छपा हुआ था। उसन वह उसे थमा दिया था।

प्रमुख समाचार चिल्लाकर कह रहा था 'लतिका सन पुलिस की गोली स मारी गयी।

मर गयी लतिका, सपूर्ण रूप स मृत। 'नही, वे मरी नही' जैसी बातें अपन को समझान भर की थी। मौत तो मौत ही होती है। भद्द तरीक स छपा अखबार बिकता है कलकत्ता म बिक्ता है। लतिका सन का छोटा बेटा माँ की बात लिखना है। वह बाजार स्ट्रीट मे गोली

चली। उस समय यही लगता था कि समय खून से लथ-पथ है। चारो ओर ऐक्शन-ही-ऐक्शन—मुठभेड-ही-मुठभेड। 'यह आजादी झूठी है—भूलो मत, भूलो मत।' गुस्से से भरा नारा था। वामपथी दलो के कार्यकर्ता या तो जेल मे थे या अडरग्राउड। अतुल गुप्त न छूटने तक हेबिअस कॉर्पस के आधार पर जेल मे बद था। लेकिन अत लतिका का ही आया। दूसरे ही दिन सडक पर से खून के दाग मिट चुके थे। स्वतत्रता के फौरन बाद ही। उस समय कार्पोरेशन का जमादार बहुत तडके सडक धो देता था। वे सब बातें अब दूर का सपना हो गयी हैं। एस्प्लेनेड पर कभी बडी-बडी रगीन टैक्सियाँ और अभिजात फिटन गाडियाँ थी। सपना-सा लगता है।

हेमेन रणदिवे-काल को कडम करता था, बहुत बुरा-भला कहता था। वह कहता था, ऐसा करने से कुछ नही होगा। यह वायलेंस, यह हिसा ठीक नही है, समझे। अभी जरूरत है गाँवो मे जाकर काम करने की।

1972 के शुरू-शुरू मे, बरानगर-काशीपुर की जन-हत्याओ से बहुत पहले, हेमेन की लाश मैदान मे पडी मिली थी, बहुत तडके।

पार्टी-विभाजन के समय हेमेन देवादिदेव के मुकाबले मे अधिक वाम का पक्षपाती बना और वाम होने पर वाम होता चला गया। हेमेन सब-कुछ गहरे मनोयोग के साथ करता था। यह काम भी उसने उसी तरह किया। उग्र से उग्रतर वामपथी बन रहे लोगो का क्या परिणाम होगा, यह बात देवादिदेव से अधिक कौन जानता था? हेमेन के लिए देवादिदेव बहुत ही परेशान हो उठा। मित्र को समझाने के लिए भागा-भागा उसके पास पहुँचा।

—हेमेन, यह हिसा की राजनीति है।

—क्या आपत्ति है इसमे?

—क्या कह रहे हो?

—अरे, प्रजातत्र मे सब चलता है। देव, अगर यही हिसा की राजनीति है, तो कहना होगा कि तुम्हारी अहिंसा की राजनीति ने ही यह

रास्ता चुनने के लिए मजबूर किया है।

— नही हेमेन यह तुम ठीक नही कर रहे हो।

—तुम तो कठपुतली हो। जैसे नचाया जाय वैसे नाचते हो। तुम जो कहना चाहते हो वह भी तुम्हारी नही किसी और की बात है।

—मैं तुम्हारा दोस्त हूँ।

—तुम किसी के दोस्त नही बन सकते देव!

—हेमन यह बात क्या तुम दिल से कह रहे हो?

—घर लौट जाओ देव!

—हेमेन!

देवादिदेव हारता जा रहा था। उस हेमन को समर्थन का आदेश मिला था। इसके अलावा वह स्वयं भी भीतर से परेशान था। लेकिन हेमन के चारो तरफ था एक अदृश्य और चीन की दीवार की तरह दुर्भेद्य प्रतिरोध। देवादिदेव ने कभी ट्राम वालो की हड़ताल पर प्रतिरोध नाम का एक उपन्यास लिखा था।

—तुम हम का समझओगे? हम हिंसा की राजनीत करत हैं? और इ राजनीति का दमन करत है गौरमेन्ट अहिंसा के तरीका से? बेटवन का गोली से मारत हैं। आंध्र मा तौ खूब डर का राज है। जेल मा हत्या चलत है ई कसे होत है? अहिंसा से?

—तुम तो बोलने ही नही देते।

—कौनो कुच्छ नाही। हम तुमरी भांत पार्टी का दुलरुआ नाही, देव! रहे किसान फ्रंट पर। यहिके बाद कलकत्ता पार्टी छाँडि के कुच्छौ नाही जानत हई। तोहरी मतन पार्टी के विमान पर नाही चढ़त हइ। विल्लैती सराब नाही पियत हइ। दिल्ली मा ससुरार नाही बनउली।

—तुम्हे अपना राजनैतिक मत बदलने की ऐसी कौन सी बात आ पडी है?

—तुम कौन जो तुमका बतायें? बदलना कैसा? बेहद लाजिकली, बहुत सोच समझकर स्टेज बाई स्टेज धीरे धीरे हम इस मत मे आय है।

—नही तुम।

—घर जाओ।

1971 से ही हेमेन शायद अडरग्राउड था। 1971 के अन्त मे कलकत्ता मे एक खबर फैली। आश्चर्य है कि उस समय सभी गोपनीय खबरें वारदात होने के साथ-साथ पूरे कलकत्ता को तुरत मालूम हो जाती थी। समाचार मानो अपनी शक्ति से अपने-आप ही फैल जाते थे। समाचार इस तरह था—'कल मध्यरात्रि को मध्य कलकत्ता के डिगामागा लेन से पुलिस ने अनुपम दास गुप्त नाम के एक मध्य वय के व्यक्ति को गिरफ्तार किया। यह व्यक्ति घोर आतकवादी है।' मध्य शब्द का तीन बार प्रयोग सभी की नजरो मे आया और सवेरे का अखबार हाथो म आने मे तीन घटे के बाद ही देवादिदेव से गोपी नाम का एक गुडा कह गया, 'सुना है, हेमेन बाबू को पुलिस ने पकड लिया है ?'

अनुपम ही हेमेन है या नही, यह जानन के लिए देवादिदेव भागा, लेकिन देवकी बनर्जी ने जरा-सा भी सहयोग न दिया। वह देवादिदेव को पिकासो के एक चित्र का प्रिंट दिखाने मे लग गया। हेमेन के बारे मे 'कुछ पता नही' कहने से ही सब पता चल गया। हेमेन ही गिरफ्तार हुआ है, इसमे अब सदेह नही रहा। देवादिदेव के घबराहट-भरे प्रश्नो को विपुल ने सस्नेह सुना और बोला, 'अगर पता चला तो जरूर बता दूंगा।' उसके बाद ही विपुल का सदेशवाहक एक बद लिफाफा लेकर आया। उसमे क्रिकेट के मैच का एक टिकट था और एक सफेद कागज। इस पर विपुल न कोई सबूत न छोडने के इरादे से टाइप किया हुआ था 'कभी के सहपाठी की याद मे।' बिना दस्तखत, टाइप किया हुआ मजाक था। यह भी लिखा था कि 'लाइफ इज बट ए गेम ऑफ क्रिकेट।' जीवन क्रिकेट का खेल ही है। देवादिदेव समझता था कि विपुल क्या कहना चाहता है। मानो हेमेन के बारे मे जो भी खबर मिले, उसे खेल-सा मानो, खेल म क्या अफसोस ! देवादिदेव ने गहरी सास ली और पैक-लच लेकर क्रिकेट देखन चला गया।

1972 के जाडो की एक सुबह घटी वह घटना जादू की कहानी हो गयी। उत्तर भारत के जो गडरिये मैदानो मे भेडें चराते हैं, उन्हे ही हमन की कटी-फटी देह मैदान मे मिली। उस जमाने म कलकत्ता म गोली लगी लाशें बदगोभी की तरह पडी मिलती थी, वह भेडें ही जानती हैं। भेडें बिदककर हट जाती, भेडो के बच्चे भागन लगते और पुलिस का स्वर

सुनते । बाग जाओ बाग जाओ गोरखा पुलिस कहती और उनके भागन पर पुलिस का वही हाक लगाने वाला कहता अरे भागता काहे ? तभी एक जीप मैदान म आ जाती और एक दुबली पतली औरत को पुलिस हाथ पकडकर जीप से उतारती। हेमेन की पत्नी उस लाश को हेमेन कहकर शिनाख्त करती। अब पुलिस निश्चित हो जाती। लेकिन वे तब भी लाश हेमन की पत्नी को न देते ।

—क्यो नही दोग ?

पुलिस अफसर हँसकर बोले अब हमको पक्का हो गया कि वही हेमेन बाबू है। लेकिन सरकारी तौर पर ऑफिशयली वह अनजान व्यक्ति की लाश है। अनजान आदमी की लाश आपको कैसे दे दें ?

—क्यों नही दगे ?

पुलिस अफसर सोच नही पाते कि न देन का तक इसके दिमाग म क्यो नही घुस रहा है ? अभी यह सोच रहे होते कि क्या कहे कि अचानक हेमेन की पत्नी का कुछ याद हो आता है। वह चि ला उठती हैं नाखून उखाड लिए है ? नाखून ? इसके नाखून कहा है ?

चीखना रुक नही रहा है। महिला बेहोश हो जाती है और लाश लिये बिना घर लौट जाती है। पूरी घटना की अविश्वसनीयता एक सरकारी चिट्ठी पूरा कर देती है। चिट्ठी म लिखा है जेल म जाकर हेमेन से मिलन क लिए महिला ने जो प्रार्थना की थी वह मजूर हो गयी है।

यही हेमेन सैंतालीस चवालीस पैंतालीस म पार्टी का अनुभवी व्यक्तित्व था। बलवत क बारे म बात करने के लिए देवादिदेव जब अशोक के घर गया तो वहाँ हेमेन बैठा था। हेमेन के सामन देवादिदेव अशोक स कुछ न कह सका। उनकी बातचीत ही सुनता रहा। बातें बलवत के बारे मे था।

—दखो अशोक जो करना हो करो। खर्चा वर्चा ? हमारे पास रेड एड फड नही है ? पीपुल्स रिलीफ कमेटी है। छुटकन का बचावै का होइ। दिन मिलै तो मास्को भेज आयो।

—सब करूँगा।

—सबही परीक्षा कराय ल।

—करा लूगा।

—पुष्टई खाय क जरूरत है।

—सबसे पहले जरूरत है पूरे आराम की। मैंने उस डिस्पांजल से मक्खन दूध का पाउडर, अंडे का पाउडर ला दिया है।

—खाना पर तो कौनो नाहीं हो।

—दशरथ जी खाना बना देंगे।

—हस्पताल का इतजाम ?

—कोशिश कर रहा हूँ।

देवादिदेव के मन म सदेह गहरी जड पकड गया। बोला, 'हेमन, अशोक तुम लोग बलवत के बारे म बातें कर रह हो ?

—हाँ, देव !

—बलवत को क्या हो गया है ?

—क्यो ?

—बताओ न।

—टी० बी० का शक हो रहा है—अशोक बोला।

—टी० बी० ?

हेमेन बोला, हां। अरे छुट्टी देना पडगा। इलाज करावे होई, नही त बची न।'

—सच ही टी० बी० है क्या, अशोक ?

—हाँ।

—तुम तो डाक्टर हो, अशोक !

देवादिदेव की खुली ईर्ष्या से हेमन भी आश्चर्य म पड गया। बोला 'देव ई हमार घर है। झगडा जिन करा।'

—रहन दो अपना घर। अशोक तो जानवर है। टी० बी० कहत हो और मुझे कुछ नही बताते।

—तुमको क्या बतायें ?

—तुमको क्यो बतायें ?

—बलवत मरे घर आता है, मरा बच्चा ।

—मैंने उसस जान को नही कहा। मुझे पता नही कि वह तुम्हार यहाँ जाता है।

—इसी आधार पर बता दो कि उसका रोग क्या है ?

'नही।' अशोक बहुत सख्त आवाज में बोला, 'उसे कोई भी कारण बताकर या बिना बताये, अपने घर से निकाल दो। लेकिन कभी यह न बताना कि उसका संदिग्ध रोग क्या है।'

—क्यों ?

—क्यों नही, 'यक्ष्मा' नाम ही उसका दिल तोड़ देगा। उसके ओरियें-टेशन मे, उसकी समझ मे यक्ष्मा माने ही मौत है। उसकी जीने की इच्छा और सक्रिय सहयोग की हमे जरूरत है, क्योंकि उसका जीवित रहना जरूरी है।

—वाह, अजीब दलील है।

हेमेन बोला—'तुम चले जाओ।'

अशोक ने कहा, 'अभी एक्स-रे नही हुआ है। थूक की परीक्षा नही हुई है। अभी कहा नही जा सकता कि उसे क्या रोग है!'

—तुम लोग जानवर हो, अशोक!

घर लौटकर देवादिदेव ने ईप्सिता को खूब गालियाँ दी। कहता रहा—'बलवत!! उसको लेकर साधुई करनी हो तो बाहर करो। पता है, उसे यक्ष्मा हो गया है?'

—यक्ष्मा!

—हाँ। उसे लाड लड़ाने में मेरे बेटे की जान खतरे मे पड़ सकती है। मैं ऐसा नही होने दूँगा।

अशोक ने बलवंत को अच्छा करने का पक्का इरादा कर लिया था। वैसे तो दशरथ का मकान उतना अच्छा न था, लेकिन काफ़ी बड़ा था। लंबे दालान के बाद कतार-की-कतार कोठरियाँ थीं। ट्राम-सेवा के सभी कर्मचारी बलवत को बहुत चाहते थे। किताब लिखकर बच्चू ने उनका सम्मान बढ़ा दिया है। उनकी माँएँ बच्चों को ठेलकर स्कूल भेजतीं। कार्पो-रेशन के स्कूल में। अगर बलवंत पढ़ गया, तो तुम भी पढ़ सकते हो।

अशोक ने बलवत की छाती का एक्स-रे लिया, थूक की परीक्षा की। उस समय तक सर्वरोगनाशक ऐंटीबायोटिक नही आयी थी। इंजेक्शन चलते थे, दवाइयाँ भी चलती थीं। उसने दशरथ से कहा था, 'इसके बाद

अस्पताल भेज दूंगा।

—उसे क्या हो गया है ? छाती रोग न ?

—आप तो सब समझते हैं।

दशरथ ने बड़े विश्वास के साथ कहा अस्पताल जाते ही ठीक हो जायगा। उसकी जान की मुझे फिक्र नहीं है। ज्योतिषी ने बताया था कि सत्तर बरस तक जीवित रहेगा।'

बलवंत को देखने के लिए पार्टी के लोग अक्सर आते रहते थे। छपना शुरू होने के साथ ही फ्राम द लोअर डेप्थ्स लेख पर कलकत्ता दीवाना हो रहा था। बलवंत चाहिए बलवंत। युवा लेखकों में असली मेहनतकश घर के इस लड़के में सबसे अधिक संभावनाएँ हैं। अशोक रोज जाता था। उसके घर आना बंद हो जाने से देवादिदेव भी बेफिक्र था। एक दिन कहने लगा अशोक उस दिन अचानक बेमतलब शोर मचा बैठा। वह तो ठीक है।

—लड़का कैसा है ?

—अब तो अच्छा ही बता रहे हैं। लेकिन ।

—लेकिन क्या

—अस्पताल में उसे जल्दी ही सीट मिल जायगी। वहाँ साल भर के करीब रहने से ठीक हो जायगा।

—बड़ी छुतही बीमारी है ना ?

—मैं तो रोज जाता हूँ। बहुत से लोग जाते हैं। घर लौटने पर कपड़े उतारकर कार्बोलिक से हाथ पाँव धोने पड़ते हैं।

—जाड़ा भी बहुत पड़ रहा है।

—तुम क्या कहीं जा रहे हो ?

—हाँ जा सकता हूँ।

कँपकँपी वाला जाड़ा पड़ रहा था। देवादिदेव का चटगाँव जाना निश्चित हो गया था। धनबाद में कोयले की एक खान में मीथेन गैस से आग लग गयी थी। मज़दूरों मालिकों में तनातनी पैदा हो गयी। देवादिदेव बलवंत के घर पहुँचा। बलवंत ने बैठने को कहा। वह बलवंत से काफी परे हटकर बैठ गया। धनबाद कालियरी पर विस्तार से बात करने लगा।

लडाई चल रही थी। 'युद्ध मे मित्र शक्तियो को जीतना चाहिए। लडाई के लिए कोयले की बहुत जरूरत है। मजदूर दिन-रात कोयला खोद रहे है, लेकिन उन्हे ढग की मजदूरी नही मिल रही है। तिस पर खान मे आग लग गयी। गैस साँस घोट देती है। खान की छत गिरने स नो वे मरते ही रहते हैं। कितने अफसोस की बात है कि जो इस सबक बारे मे लिख सकता है, बीमार पडा है।

—मैं चलूं।

—नही, नही, यह कैसे हो सकता है?

दशरथ को अटपटा लग रहा था। वह बोला, ये सब बातें उससे मत कहिये। पहले ठीक हो जाये तो वह यह सब काम करेगा।'

—मैं भी यही चाहता हूँ। उसे अच्छा होना ही होगा।

उसके बाद देवादिदेव ने एमिल ज़ोला के बारे मे बातें की। उस आदमी ने कोयले की खानो म जाकर 'जर्मिनल' लिखा था। वैन गॉग? वह भी तो कोयला-खानो मे गया था। चित्र बनाने क लिए बलवत के जाने से जोला और वैन गॉग दोनो का काम एक साथ होता। वह लिख सकता है, चित्र भी खीच सकता है। लेकिन नही, पहले बलवत ठीक हो ले। बलवत ने यह बातें सुनते-सुनते देवादिदेव का चित्र स्केच कर डाला। उसके बाद खाँसना शुरू किया। दशरथ प्यार स बोला, सो जाओ, बेटे!' बलवत ने साफ चिथडे से बलगम पोछ कर कार्बोनिक धले पानी के बर्तन मे कपडा फेंक दिया। पानी लाल हो गया।

दशरथ देवादिदेव को गली के मोड तक पहुँचा आता है। देवादिदेव अन्यमनस्क और गभीर था। दशरथ समझ गया कि वह बलवत के लिए चितित है। बोला, 'खाँसी मे खून देखकर चिता मत कीजिय।'

—चिता न करूँ?

—अशोक बता रहा था कि लाल ठीक हो जायगा। लेकिन आराम की जरूरत है। क्या अस्पताल वाले उसे ले लेंगे? मैंने कह दिया है कि जरूरत हुई तो बेड के लिए पैसे दे दूंगा। जो कमाई कर रहा हूँ, वह उसी के लिए तो है। फिर उसके लिए मैं अकेला ही तो नही हूँ। पार्टी भी तो है।

अस्पताल भेज दूंगा।'

—उसे क्या हो गया है ? खोखी रोग न ?

—आप तो सब समझत है।

दशरथ न बडे विश्वास के साथ कहा, 'अस्पताल जाते ही ठीक हो जायगा। उसकी जान की मुझे फिक्र नहीं है। ज्योतिषी न बताया था कि सत्तर बरस तक जीवित रहगा।'

बलवत को देखन के लिए पार्टी के लोग अकसर आते रहत थे। छपना शुरू होन के साथ ही 'फ्राम द लोअर डेप्थ्स' लेख पर कलकत्ता दीवाना हो रहा था। बलवत चाहिए, बलवत। युवा लेखको मे असली मेहनतकश घर के इस लडके मे सबसे अधिक सभावनाएँ हैं। अशोक रोज़ जाता था। उसके घर आना बद हो जान से देवादिदेव भी बेफिक्र था। एक दिन कहन लगा, अशोक उस दिन अचानक बेमतलब शोर मचा बैठा। वह तो ठीक है।'

—लडका कैसा है ?

—अब तो अच्छा ही बता रहे है। लेकिन ।

—लेकिन क्या

—अस्पताल म उसे जल्दी ही सीट मिल जायगी। वहाँ साल भर के करीब रहन से ठीक हो जायगा।

—बडी छुतही बीमारी है ना ?

—मैं तो रोज़ जाता हूँ। बहुत-से लोग जात हैं। घर लौटन पर कपडे उतारकर, कार्बोलिक स हाथ पाँव धोन पडत है।

—जाडा भी बहुत पड रहा है।

—तुम क्या कही जा रहे हो ?

—हाँ, जा सकता हूँ।

कँपकँपी वाला जाडा पड रहा था। देवादिदेव का चटगाँव जाना निश्चित हो गया था। धनबाद में कोयले की एक खान मे मीथन गैस स आग लग गयी थी। मजदूरा मालिका म तनातनी पैदा हो गयी। देवादिदेव बलवत के घर पहुँचा। बलवत न बैठन को कहा। वह बलवत स काफी पर हटकर बैठ गया। धनबाद कालियरी पर विस्तार स बातें करन लगा।

लड़ाई चल रही थी। 'युद्ध मे मित्र शक्तियो को जीतना चाहिए। लडाई के लिए कोयले की बहुत जरूरत है। मजदूर दिन-रात कोयला खोद रहे है, लेकिन उन्हे ढग की मजदूरी नही मिल रही है। तिस पर खान मे आग लग गयी। गैस सांस घोट देती है। खान की छत गिरने से तो वे मरते ही रहते हैं। किनन अफसोस की बात है कि जो इस सबके बारे मे लिख सकता है, बीमार पडा है।

—मैं चलूं।

—नही, नही, यह कैसे हो सकता है?

दशरथ को अटपटा लग रहा था। वह बोला, ये सब बातें उससे मत कहिये। पहले ठीक हो जाये तो वह यह सब काम करेगा।'

—मैं भी यही चाहता हूँ। उसे अच्छा होना ही होगा।

उसके बाद देवादिदेव ने एमिल ज़ोला के बारे मे बातें की। उस आदमी ने कोयले की खानो मे जाकर 'जर्मिनल' लिखा था। वैन गॉग? वह भी तो कोयला खानो मे गया था। चित्र बनाने के लिए बलवत के जान से ज़ोला और वैन गॉग दोनो का काम एक साथ होता। वह लिख सकता है चित्र भी खीच सकता है। लेकिन नही, पहले बलवत ठीक हो ले। बलवत ने यह बातें सुनते सुनते देवादिदेव का चित्र स्केच कर डाला। उसके बाद खांसना शुरू किया। दशरथ प्यार से बोला, सो जाओ, बेटे!' बलवत ने साफ चिथडे से बलगम पोछ कर कार्बोनिक धले पानी के बर्तन मे कपडा फेंक दिया। पानी लाल हो गया।

दशरथ देवादिदेव को गली के मोड तक पहुँचा आता है। देवादिदेव अन्यमनस्क और गभीर था। दशरथ समझ गया कि वह बलवत के लिए चिंतित है। बोला, 'खाँसी मे खून दखकर चिंता मत कीजिय।'

—चिंता न करूं?

—अशोक बता रहा था कि लाल ठीक हो जायगा। लेकिन आराम की जरूरत है। क्या अस्पताल वाले उसे ले लेंगे? मैंने कह दिया है कि जरूरत हुई तो बेड के लिए पैसे दे दूंगा। जो कमाई कर रहा हूँ, वह उसी के लिए तो है। फिर उसके लिए मैं अकेला ही तो नही हूँ। पार्टी भी तो है।

—बलवत ने कैसी उग्र किताब लिखी है !

यूनियन का पुराना कार्यकर्ता दशरथ झा सहज आभिजात्य से बोला, 'वह मजदूर का बेटा है, वही तो चमडा-मजूरों की बात लिखेगा। आप तो लिखने से रहे कामरेड ! मजदूर का दुख मजदूर ही समझता है।'

देवादिदेव लौट पडा था। फिर चटगाँव चला गया था। पुराने गायक से मिलने, गीत लिखवाने के लिए। बलवत पिता से छिपकर, किसी को बताये बिना ही धनवाद चला गया था।

जाडे के दिन थे। बरसात हो रही थी। उसके पास अधिक गरम कपडे नही थे। पिता की *ट्राम कपनी मे मिला स्वेटर उसके पास था।* वह देवादिदेव का स्केच मोडकर रख गया था। अत्यन्त रोमाटिक भाव मे, बीस बरस के प्रबल उद्वेग से, अपनी खाँसी के जैसे रक्त भरे ब्रुश से लिख *गया था 'माई मास्टर, ऐज आई सी हिम (मेरे गुरू, मेरी दृष्टि मे)।* वह तसवीर बाद मे उसे ही दे दी गयी थी। वही तसवीर सारे फ्री वर्ल्ड (मुक्त ससार) के देशो मे उसकी किताबो के पिछले आवरण पर छापी जा रही थी। बलवत ठड लगने से यक्ष्मा मे निमोनिया होने स धनबाद के अस्पताल *मे ही मर गया था।* उसकी स्मृति मे आयोजित सभा मे देवादिदेव ने रोते हुए कहा था, 'वह धनवाद क्यो गया था ? क्यो ? आखिर क्यो ?' स्मृति-सभा मे दशरथ झा न था। जन्म और रक्त का सस्कार। वह धनबाद से बलवत की अस्थियाँ लेकर गया जिले के नेरुन्दा गाँव मे फल्गू नदी मे प्रवाहित करने गया था। उसकी सात पीढियो के फूल फल्गू नदी मे ही प्रवाहित किये गये थे।

स्मृति सभा के बाद अशोक न उससे कहा था, 'देव, तुम राक्षस हो। *तुम्हारे साथ मेरा सबध आज से समाप्त होता है।'*

ईप्सिता ने कहा था, तुमने ही उसे मार डाला है। वह अशोक को लिख कर दे गया था कि दादा ने मुझे राह दिखा दी है' ईप्सिता बहुत-*बहुत रोयी थी।*

उसके ठीक नौ महीने बाद उसके यहाँ मँझला बेटा पैदा हुआ। अशोक फिर उसके जीवन मे कभी नही आया। उसने अपने को एकदम अलग कर

लिया। ईप्सिता ने कहा था उम्र से तीस के कोठे मे होने से क्या होता है ? तुमन तो जैसे तय कर रखा है कि युवको का खन पीकर जियोगे। यह तुमन क्या किया ! जान बूझकर बलवत को तुम खुद क्या नही गय ? भागकर चटगाव क्या चले गये ? क्या ?—उसन कहा था क्या कहा था ? क्या वह ईप्सिता स बात करन का मौका था ? उस समय बलवत के बारे म लगातार लिखा जा रहा था। बलवत के बारे म उससे अधिक कौन जानता था ? सयुक्त बगाल म जहाँ कही भी उसे बुलाया जाता वही बलवत की स्मृति सभाओ मे उसे जाना पडता।

धूप गम होती जा रही थी। सूरज तप रहा था। डजो की पखुडियाँ झुकी जा रही थीं। हा अभी शुरुआत थी। उसी दिन स ही उसन घर छोडा था। वह य सभी बातें स्वीकार करेगा। तभी यहा स जायगा।

दोपहर को ईप्सिता का टेलीग्राम लेकर डलहौजी से आदमी आया था फौरन चले आओ। जरूरी काम है। ईप्सिता।

कालाटोप से डलहौजी। इस बार पैदल वापसी। रास्ता सुदर था। दो घटे म हा पहुँच गया। डलहौजी से टूरिस्ट लाज। दूसरे दिन पहली बस से पठानकोट। भाग्य भी ऐसा कि पठानकोट आते ही कलकत्ता का टिकट मिल गया। आजकल टिकट मिलना मुश्किल हाता है। लकिन एक भल आदमी रिजर्वेशन टिकट के साथ टिकट वेच रहे थे। व कश्मीर जा रह थे।

देवादिदेव स्टशन पर ही रुक गया। पठानकोट म बहुत गर्मी थी। लू चल रही थी। हवा म जितनी धूल थी उतनी ही आग भी। स्टशन पर बैठे रहना ही अक्लमदी थी।

जिस भले आदमो न टिकट बेचा था, वह उसस बातें करना चाहत थ। दवादिदेव सुनता जा रहा था।

—फैमिली लेकर आया था।

—आह !

[illegible] जाएंगे।

[illegible]

[illegible] टिकट बेचकर वजीर

[illegible]

[illegible] किया। बाकी,

[illegible]

[illegible] लिया।

[illegible]

बोली।

[illegible]

रेडिएशन की अदृश्य उपस्थिति को जानकर अनजान व्यक्ति चिढ जाता था। इसी रेडिएशन ने सभी को उसका दुश्मन बना दिया था। सब उसे दुश्मन समझते हैं, यह सोच-सोचकर ही देवादिदेव आत्मविश्वास खोता रहता था। उसे डर लगता था, बहुत डर लगता था।

बहुत डर लगता था। आँखो से आत्मविश्वास की कमी स्पष्ट झाँक रही होती थी। लगता था कि किसी भी क्षण बाजार मे मछली बेचने वाला कह बैठेगा, पैसे ले जाइये, मछली लौटा दीजिये, मोशाय। सभी ने जिसे नकार दिया हो, ऐसे आदमी को मैं मछली नही बेचता।'

बहुत डर लगता था। लगता कि यह जैसे हिटलर का जर्मनी हो। देवादिदेव को छोडकर सभी गेस्टापो हो। सभी उसका पीछा कर रह हा। ढूँढते फिर रहे हो। चौकन्ने शिकारी की तरह देख रहे हो, कब वह गुप्त बात बता दे यह यहूदी।

कभी लगता कि सम्मानित और सभ्रात देवादिदेव को नीच और जलील कहते हुए किसी दिन कोई गाडी रोकेगा और उस पर थूक देगा। धक्का मारकर चश्मा गिरा देगा। कोई युवक उसका चश्मा चूर-चूर करता हुआ चला जायेगा। बस स्टॉप पर बस आन पर कोई उसकी टेरीशर्ट पर जलती सिगरेट फेंककर बस मे चढ जायेगा।

लेकिन इन लोगो की आँखो मे कोई शत्रुता नही है। ये उसके पाठक हैं। उस पर श्रद्धा करते है, उससे स्नह करते हैं। फैसला नही करते। अखबार मे जिसका नाम वे हर रोज देखत हैं, सोचते हैं कि वही श्रेष्ठ साहित्यिक है।

य लोग बारीकी से हिसाब मिलान नही बैठत हैं। वे यह नही सोचते कि देश और देश की जनता जब दुखो स मर रही है तो वह उस जोरदार शोर को न सुनकर सपनो की चोटी पर आ बैठा है और पलायनवादी साहित्य लिख रहा है।

य लोग इस सोच मे भी नही पडते कि देश म दुर्भिक्ष, बेगार, हरिजनो की हत्या, दुर्दशा, भुखमरी और बेईमानी फैले होन पर देवादिदेव कैसे यौन-व्यभिचार, अवैध रक्त-सबध, वेजान वामपथी कार्यकलापो पर कलात्मक कहानी लिखता है।

ये लोग भी पलायन की तलाश में हैं। देश और जनता के मर कर जहन्नुम चले जाने पर भी इनके तई कुछ आता जाता नहीं। अरे, जेल में कुछ गुंडे आवारा मर गये तो उससे क्या हुआ ? इन्हें सुखी जीवन के अपने-अपने दायरे में आँखमिचौनी खेलना ही अच्छा लगता है। देवादिदेव को उस मित्र की पत्नी की बात याद आती है फलां जगह इतने लड़के मर रहे हैं इससे क्या हुआ ? अभी तो बाबा हम सेकेंड शो में सिनेमा देखकर अपने मुहल्ले को लौट सकते हैं।

देवादिदेव का सहारा अन्न और आश्रय यही हैं। लेकिन केवल इनकी श्रद्धा से तो काम चलेगा नहीं। औरों की श्रद्धा की भी जरूरत है। उनकी श्रद्धा की ज़रूरत है जिनकी श्रद्धा पर लेखक टिका रहता है। उस उन्हीं विचारशील न्यायनिष्ठ तेज़-तर्रार विचारवान युवकों की श्रद्धा चाहिए। देवादिदेव घर लौट रहा है। घर लौटकर उसे सब कुछ मिल जायेगा। ईप्सिता का अनुसरण भी। ईप्सिता को भी नहीं लगेगा कि उसका सारा विवाहित जीवन व्यर्थ है।

लड़की जैसे कुछ कह रही थी।

—मुझसे कुछ कहा ?

—जी हाँ, मैं आपको पहचानती हूँ। मान, अपनी माँ से मैंने आपकी कहानी खूब सुनी है।

—आपकी माँ ? क्या नाम है ?

—आप नहीं पहचानेंगे। माँ की छोटी बहन, मेरी छोटी मौसी उज्ज्वला दत्त थी। आपने उन पर एक सुंदर सी छोटी किताब लिखी थी। अब पहचाना ?

कठोर कठोर आघात ! अंदर-ही-अंदर जैसे कुछ विदीर्ण हो गया हो। मन में आया कि अभी लड़की को हाथों से मसलकर खत्म कर दे, मार डाले। कभी बहुत दिनों पहले, जवानी में अनचाहे आवेग के प्रभाव में उसने अपनी बड़ी-सी हथेली में एक गौरैया को मसल डाला था।

उज्ज्वला दत्त ! देवादिदेव को उबकाई आने लगी। धुएँ से सब तरफ अँधेरा हो गया बम के धुएँ से। उसके बाद देवादिदेव को दिखायी पड़ा कि खून में लथपथ उज्ज्वला भाभी लेटी हुई हैं। उज्ज्वला भाभी मरने के

तैतीस बरस बाद उठ बैठी हैं। देवादिदेव की ओर उनकी आँखें हैं। उज्ज्वला भाभी ने विचित्र मायावी आँखें उठाकर पूछा, 'केवल बलवंत ही घर लौट सकेगा ? मुझे याद नहीं करेगा ? मैं भी तो तेरे लौटने की राह में तेरा ही बोया काँटा हूँ।'

देवादिदेव ने लड़की की ओर पीड़ा-भरी आहत आँखों से देखा। अभी तक उसकी आँखों में प्रशंसा मुग्ध प्रशंसा का भाव था। किंतु देवादिदेव को भीतर ही भीतर आत्म तिरस्कार कचोट रहा था। नहीं, उसे इन लोगों की प्रशंसा नहीं चाहिए। लड़की ने देवादिदेव को बड़ा आघात पहुँचाया था।

लगता था कि देवादिदेव यांत्रिक आवाज में बोला हो। उसके बाद उठ खड़ा हुआ। बोला, 'मैं जा रहा हूँ।'

सूटकेस लेकर वह उठ खड़ा हुआ। सब लोग उसे देखकर ताज्जुब में थे। देवादिदेव आगे बढ़ गया। दूर बेंच पर जगह न थी। अखबार बिछाकर स्टेशन के फर्श पर ही बैठ गया। सिर घुटनों पर टिका लिया।

उज्ज्वला भाभी !

कौन सा वर्ष था वह ? बयालीस, बयालीस, बयालीस। याद है, उस दिन सुबह सुबह ही देवादिदेव निकल गया था। उन दिनों सुबह से ही सत्य विश्वास उसके पीछे लग जाया करता था। आदमी होशियार था। ब्रिटिश कर्मचारियों से उसे ट्रेनिंग मिली थी। ट्राम हो बस हो, देवादिदेव कभी भी उसे अपने पीछे से झटक न सका।

उन दिनों वह सुबह शाम लेक पर टहलता था। उस दिन लेक पर ही उससे मुलाकात हुई थी।

—कहिए मिस्टर बोस अच्छे तो हैं ?

—आप !

—अच्छा, पहचान गये, पहचानते हैं न ! सब लोग कहते हैं कि आप किसी का चेहरा नहीं भूलते।

—ओह आप ! कैसे हैं ?

—जैसा आप रखें।

—मैं आपको रखूँगा तभी आप रहेंगे ? कह क्या रहे हैं, मोशाय ?

ये लोग भी पलायन की तलाश मे हैं। देश और जनता के मर कर जहन्नुम चले जाने पर भी इनके तई कुछ आता जाता नहीं। अरे, जेल में कुछ गुडे आवारा मर गये तो उससे क्या हुआ ? इन्हे सुखी जीवन के अपने-अपने दायरे म आंखमिचौनी खेलना ही अच्छा लगता है। देवादिदेव के उस मित्र की पत्नी की बात याद आती है, 'फलां जगह इतने लडके मर रहे हैं, इससे क्या हुआ ? अभी तो बाबा, हम सेकेंड शो म सिनेमा देखकर अपने मुहल्ले को लौट सकते हैं।

देवादिदेव का सहारा, अन्न और आश्रय यही है। लेकिन केवल इनकी श्रद्धा स तो काम चलेगा नहीं। औरो की श्रद्धा की भी जरूरत है। उनकी श्रद्धा की जरूरत है, जिनकी श्रद्धा पर लेखक टिका रहता है। उसे उन्ही विचारशील, न्यायनिष्ठ तेज-तर्रार विचारवान युवको की श्रद्धा चाहिए। देवादिदेव घर लौट रहा है। घर लौटकर उसे सब कुछ मिल जायगा। ईप्सिता का अनुसरण भी। ईप्सिता को भी नहीं लगता कि उसका सारा विवाहित जीवन व्यर्थ है।

लडकी जैसे कुछ कह रही थी।

—मुझसे कुछ कहा ?

—जी हां, मैं आपको पहचानती हूँ। माने, अपनी मां से मैंने आपकी कहानी खूब सुनी है।

—आपकी मां ? क्या नाम है ?

—आप नही पहचानेंगे। मां की छोटी बहन, मेरी छोटी मौसी उज्ज्वला दत्त थीं। आपने उन पर एक सुदर-सी छोटी किताब लिखी थी। अब पहचाना ?

कठोर, कठोर आघात ! अदर-ही-अदर जैसे कुछ विदीर्ण हो गया हो। मन मे आया कि अभी लडकी को हाथो से मसलकर खत्म कर दे, मार डाले। कभी बहुत दिनो पहले, जवानी मे अनचाहे आवेग के प्रभाव मे उसने अपनी बडी-सी हथेली मे एक गौरैया को मसल डाला था।

उज्ज्वला दत्त ! देवादिदेव को उबकाई आने लगी। धुएँ से सब तरफ अँधेरा हो गया बम के धुएँ से। उसके बाद देवादिदेव को दिखायी पडा कि खून मे लथपथ उज्ज्वला भाभी लेटी हुई हैं। उज्ज्वला भाभी मरने के

तैंतीस बरस बाद उठ बैठी है। देवादिदेव की ओर उनकी आँखें हैं। उज्ज्वला भाभी ने विचित्र मायावी आँख उठाकर पूछा केवल कलकत्ते ही घर लौट सकेगा ? मुझे याद रखा करेगा ? मैं भी तो तेरे लौटने की राह में तेरा ही बोया काँटा हूँ।

देवादिदेव ने लड़की की ओर पीड़ा भरी आहत आँखों से देखा। अभी तक उसकी आँखों में प्रशंसा मुग्ध प्रशंसा का भाव था। किंतु देवादिदेव को भीतर ही भीतर आत्म तिरस्कार कचोट रहा था। नहीं उसे इन लोगों की प्रशंसा नहीं चाहिए। लड़की ने देवादिदेव को बड़ा आघात पहुँचाया था।

लगता था कि देवादिदेव यांत्रिक आवाज में बोला हो। उसके बाद उठ खड़ा हुआ। बोला मैं जा रहा हूँ।

सूटकेस लेकर वह उठ खड़ा हुआ। सब लोग उसे देखकर ताज्जुब में थे। देवादिदेव आगे बढ़ गया। दूर बेंच पर जगह न थी। अखबार बिछाकर स्टेशन के फर्श पर ही बैठ गया। सिर घुटनों पर टिका लिया।

उज्ज्वला भाभी !

कौन सा वर्ष था वह ? बयालीस बयालीस बयालीस। याद है उस दिन सुबह सुबह ही देवादिदेव निकल गया था। उन दिनों सुबह से ही सी०आई०डी० विश्वास उसके पीछे लग जाया करता था। आदमी होशियार था। ब्रिटिश कर्मचारियों से उसे ट्रेनिंग मिली थी। ट्राम हो बस हो देवादिदेव कभी भी उसे अपने पीछे से झटक न सका।

उन दिनों वह सुबह शाम लेक पर टहलता था। उस दिन लेक पर ही उससे मुलाकात हुई थी।

—कहिए मिस्टर बोस अच्छे तो हैं ?

—आप !

—अच्छा पहचान गये पहचानते हैं न ! सब लोग कहते हैं कि आप किसी का चेहरा नहीं भूलते।

—ओह आप ! कैसे हैं ?

—जैसा आप रखें।

—मैं आपको रखूँगा तभी आप रहेंगे ? कह क्या रहे हैं मोशाय ?

यह तो तिलस्मी रहस्य हो गया।

—अरे आप लोग !

—अच्छा, चलूं।

—जा रहे हैं चले जाइयेगा। मोशाय, जाना तो सभी को है, मैं भी जाऊँगा। लेक पर क्या कोई रहने आता है ? मुझे रिटायर हुए बहुत दिन हो गये। अब आप तो मशहूर आदमी हैं। लड़कों से कहता हूँ कि उस देवता समान आदमी का मैं कभी पीछा किया करता था, ब्रिटिश राज में। अभागी नौकरी थी। क्यों ? लड़कों को उस काम में नहीं लगाया। वे लोग आपके बड़े भक्त हैं मोशाय !

—अच्छा !

—उसी मकान में हैं ? पुराना-धुराना जैसा भी है, पचास रुपये में ऐसा मकान कुछ भी हो, दो-मंजिला मकान है। सारा आपका है ?

—सब खबर रखते हैं। ऐसा नहीं लगता कि रिटायर हो गये हैं ? मेरी बस आ गयी, चलूं।

—हाँ, फिर भेंट होगी।

जो भी हो, अजीब आदमी है। देवादिदेव उसे काटकर बस पर चढ़ गया। इस पर वह जरा भी अपमानित या विचलित न हुआ। वह अगर देवादिदेव को काटकर बस में चढ़ जाता तो देवादिदेव की उँगलियाँ काँपने लगतीं। थैला हाथ में लिये वह आदमी हँसकर जैसे कुछ बोला हो। लगता था कि सौदा लेकर लौटने की बात कर रहा हो। उसकी नाक पर मस्सा था। दूर से ही साफ नजर आने वाला चेहरा लेकर भी शान के साथ सादा वर्दीधारियों का काम करता रहा।

वह बयालीस वर्ष का था। हाँ, बयालीस। देवादिदेव 'बंगाल का किसान' अखबार में काम करने के समय से ही मणि प्रामाणिक को पहचानता था। वह किसान फ्रंट पर काम करने वाला पक्का कार्यकर्ता था, कट्टर कांग्रेसी। बाद में रास्ता और विचारधारा जरूर बदल गयी थी। लेकिन बयालीस में मणि प्रामाणिक कांग्रेस कार्यकर्ता था, छिप कर काम करने वाला, अंडरग्राउंड। बाबू लोगों पर विश्वास नहीं करता था। बात बात में कहता, 'इनके किये कुछ न होगा।'

बयालीस मे देवादिदेव के पेट में फोड़ा हुआ था। बहुत बड़ा घाव हो गया था। इसी कारण उसे घर मे पड़े रहना पड़ता था। उबले आलू, ठंडा भात, मक्खन, ठंडा दूध पीता खाता था। घर में सिर्फ़ बाप और बेटा थे, तीसरा आदमी कोई न था। सुबह-शाम नौकरानी काम करके चली जाती, ब्राह्मणी खाना बनाकर रख जाती। पुराना नौकर गोलोक मिदनापुर का था। मिदनापुर में उन दिनो बड़ी अशान्त स्थिति थी। उन दिनो गोलोक के उसके अपने इलाक़े तमलुक में ख़ास आज़ादी थी। गोलोक अपने घर चला गया था। बाद में देवादिदेव के सुनने में आया कि उसका बाप और चाचा दोनों ही गोली से मारे गये। गोलोक की माँ और चाची को जीवनभर के लिए पेंशन मिली।

बयालीस का सन्त्रस्त, शंकाकुल और विक्षुब्ध समय। देवादिदेव का कान ख़ाली था। दुछत्ती कमरा था। फ़र्श पर लेटे-लेटे खिड़की की तलमिली से देखने पर पूरी सड़क दिखायी देती थी। शाम से ही कलकत्ता ना रोशनी का हो जाता। अँधेरे में आने-जाने में सुविधा रहती। सत्य श्वास को मणिबाबू के बारे में कुछ पता था या नहीं, कौन जाने? किन देवादिदेव के पीछे वह फोड़े की तरह लगा रहता था।

मणिबाबू अडरग्राउंड थे। बयालीस के अंत में पकड़े गये। बयालीस अगस्त से देवादिदेव का उज्ज्वला भाभी के यहाँ आना-जाना बहुत बढ़ा था। वह उनकी देख-रेख करता था। मणिबाबू ने एक बार बताया कि उज्ज्वला उसके साथ अडरग्राउंड होने के लिए तैयार थी...। रेल पटरियाँ उखाड़ने, टेलीग्राफ़ के तार काटने को भी तैयार थी। लेकिन णबाबू ने उसे घर में ही बने रहने के लिए कह रखा था। इसी कारण ज्वला भाभी घर ही मे बनी हुई थी। उसके जीवन में सब-कुछ मणि ही थे। मणिबाबू के निराश्रय जीवन मे योग देने के लिए, वह बेटे-यों को आराम से माँ-बाप के पास रख कर कलकत्ता में भवानीपुर क अँधेरी गली के छोटे-से बैरकनुमा मकान के एक-मंजिले पर दो ो में रहने लगा था।

उस कमरे मे धूप नहीं आती थी। कमरे को उज्ज्वला भाभी की हँसी ल और प्रकाशित रखती थी। मणिबाबू बाहर-बाहर ही फिरते

रहते थे। उनके जिले के कार्यकर्ता कलकत्ता आने पर मणिबाबू के घर पर ही ठहरते थे। उज्ज्वला भाभी सबके लिए भात पकाती, चाय बनाती। उनके घर मे कार्पोरेशन का नल लगा हुआ था। लेकिन नल मे हर समय जल न रहता। 'भात चढा दिया है, देखना तो देबू,' कहकर उज्ज्वल भाभी पानी भरन के लिए आँगन मे चली जाती। बाल्टी मे भरकर पानी ला-लाकर वे ड्रम-टीन-कलसी घड़ा—सभी को भर रखती। कहती, 'नल का कोई भरोसा है? टाइम, बे-टाइम आ जाता है, तभी नहा लूँगी।'

उज्ज्वला भाभी को कोई शौक न था। फैशन मे भी उन्हे दिलचस्पी नही थी। सिर्फ साबुन से बहुत देर तक रगड-रगडकर नहाना अच्छा लगता था।

भाभी का स्वभाव शात, बहुत सहनशील था। खुशी से हमेशा खिली रहती थी। इतने सुख का स्रोत होन पर भी मणिबाबू क्यो चिढकर बड-बडाया करते हैं, यह सोचकर देवादिदेव को आश्चर्य होता। मणिबाबू कहते, 'देबू, तुम उसकी हँसी ही देखत हो, मिजाज नही देखते। कैसा सख्त मिजाज है!'

भाभी हँसती। उनके हँसने पर उनकी आँखें भी हँसती। गहरी काली-काली आँखें चमकन लगती, जैस कि गहरे पोखरे के काले पानी के नीचे से लहरें उठ रही हो। पलकें झुक जाती। बडी-बडी आँखो पर घनी और काली पलकें थी। लगता कि तूलिका से बनी हुई हो। उन आँखो के अलावा उज्ज्वला भाभी के चेहरे में और कुछ विशेष न था। साँवली देह, दुबला-सा शरीर, गले मे झालरदार ब्लाउज, टाट की तरह खद्दर की साडी पहनती। ब्लाउज कभी-कभी राख के रग का होता। बरसात के दिनो म भाभी रसोई मे ही डोरी बाँधकर चूल्हे की गर्मी मे धोती ब्लाउज सूखने के लिए डाल देती थी। वरना इतनी मोटी चीज सूखती ही नही।

मणिबाबू कहते— उन आँखो को दिखाकर ही धोखे मे डाल दिया था।'

—किसे? तुम्ह?

—मेरे फूफा को।

मणिबाबू के अभिभावक उनके फूफाजी ही थे। उन्होन उनकी शादी करायी थी। भाभी के पिता की हालत अच्छी थी, देवादिदेव को

पता था। फिर उस भले आदमी न क्या दखकर मणिबाबू के साथ भाभी की शादी कर दी थी, यह वह समझ नही पाता था। उन स बातें करन के लिए वह अक्सर रसोई म ही बैठ जाता। उज्ज्वला भाभी का ईप्सिता की तरह लिखना पढ़ना न आता था वीणा की तरह गाना भी नहीं आता था। उन्हे खाना बनान क अलावा कुछ भी नही आता, एसा कहा जा सकता था। राजनीति का ता उन्हे कुछ भी अता पता न था। मणिबाबू जो कहत-करत उसी पर विश्वास कर लती थी।

इसीलिए वह कार्यकर्ताओ के लिए भात रांध देती जो आता उसे टिका लेती। कभी कभी समिति म भी जाती थी। उज्ज्वला भाभी किसी भी तक्लीफ म पीछ न रहती। मणिबाबू की तरह किसी विचारधारा मे उनकी भी आस्था थी, यह कहना शायद ठीक नही। चूकि मणिबाबू का किसी म आस्था थी, किसी पर विश्वास था इसीलिए वह भी विश्वास करती थी, यही कहना ठीक होगा। उज्ज्वला भाभी म खुद कुछ साचन और विश्वास करन की सामथ्य न थी।

उस समय इसान क्या बहुत विश्वास करन योग्य था? देवादिदेव आदि को विश्वास था कि बयालीस म या तैंतालीस से क्राति आ जायेगी। मणि-बाबू न बयालीस म तार काटन, लाइनें उखाडन आदि का काम किया था। उन दिना कभी-कभी देवादिदेव क घर की दुछत्ती के फश पर लेटे लेटे कहते, समझे देवू! ये सब काम अभी के लिए है। किंतु अहिंसक सग्राम मार्ग से ही अन्त मे स्वतनता आयगी।' देवादिदेव को मणिबाबू की बातो पर कतई विश्वास न था, किंतु परस्पर श्रद्धा और प्रेम का सबध बनने उससे असुविधा न होती। मणिबाबू अडरग्राउड थे, छिपकर काम कर रहे थे। उज्ज्वला भाभी अकेली थी दवादिदेव पेट के फोडे के कारण घर पडा रहता। वह भाभी की बहुत देखभाल करता। देवादिदेव उन्हे बहुत प्यार करता था। आज भी याद है कि भाभी ही एकमात्र ऐसी स्त्री थी, जिन पर उसे सचमुच श्रद्धा थी।

भाभी की नजरो मे दवादिदेव की साहित्यिक प्रतिभा, उसके व्यक्तित्व का कोई मूल्य न था। पुरुप क रूप म देवादिदेव का व्यक्तित्व बहुत आकपक था। लकिन उनके लिए यह भी मूल्यहीन था। मणिबाबू क अलावा वह

किसी पुरुष को, पुरुष ही नहीं मानती थी। अगस्त-क्रांति के दौर में देवादिदेव ने *विशेष रूप से जाना कि मणिबाबू से सबंधित सभी कुछ* उसके लिए अत्यन्त पवित्र है। उस दिन की वात याद आती है। आले मे एक बड़ा-सा ब्रश रखा था। देवादिदेव ने उसे लिया और उसके दस्ते से अपनी पीठ खुजलाने लगा। भाभी ने झट-से ब्रश उसके हाथ से ले लिया था। एक पखा देकर बोली, 'इसके दस्ते से पीठ खुजला लो।'

—वह भी तो ठीक था।

—नहीं बाबू ! घर छोड़ने के पहले तुम्हारे दादा मुझे वह ब्रश दे गये थे। कहा था, 'टूनी, मैंने यह नारे डबल लाइन मे लिख रखे हैं—अँग्रेजो ! भारत छोड़ो। क्विट इंडिया। नेताओ को आजाद करो। तुम अक्षरो के बीच आलता भर देना।' ब्रश मैंने इसीलिए उठाकर रख दिया है।

—भाभी ! *वह पोस्टर क्या तुमने घर मे रखे है ?*

—और कहाँ रखूं ?

—कहाँ ?

—रसोई के आले मे। डिब्बो और घड़ो के पीछे।

—चलो तो देखें।

देखकर देवादिदेव ने कहा था—'चार-पाँच तो हैं, जला डालो।'

—पचास थे।

—बाक़ी के कहाँ गये ?

—बीच-बीच मे ले जाते हैं।

—कौन ?

—ननी।

ननीबाबू पुलिस के साथ मेलजोल रखते हैं, यह सदेह देवादिदेव को ही नहीं, औरों को भी था। ननीबाबू, मणिबाबू की जान-पहचान के थे। पहले अकसर आते थे, लेकिन अगस्त-आदोलन शुरू होने के समय से नही आते। लेकिन भाभी का कहना था कि आते-जाते रहते है।

देवादिदेव ने कहा था—'मैं मणिबाबू से पूछूंगा। इससे पहले ननीबाबू को कोई चीज मत देना, भाभी !'

देवादिदेव मणिबाबू की बीच-बीच मे मदद करता रहता था। भाभी

न उस समय देवादिदेव की बात मान ली। भाभी बोली सो पूछ लेना।"

बरामदे के खंभे से टिकी भाभी बैठी थी। दूर कहीं षष्ठी पूजा का ढोल बज रहा था। भाभी जिस गली में रहती थी वहा की जमीन हवा में नाली में सड़ती मछली की आँतें और फंदे में फँसकर मरी बिल्ली की दुर्गंध फैली हुई थी। क्वार की हवा में उस दुर्गंध ने भाभी की अँधेरी कोठरी को भर दिया था।

देवादिदेव बोला— खाना नही बनाओगी भाभी ?

—आज मंगलवार है।

—कुछ खाओगी नही ?

—सत्तू गुड़ खाऊँगी।

सहसा भाभी ने अपनी विस्मय भरी आँखें देवादिदेव की ओर उठाकर कहा वह कितने दिन भागते रहेंगे देबू ? उनके बाद उसका क्या होगा ? कब तक मैं उनके लिए बैठी रहूँगी ?

—एक बार मिलने चलोगी ?

—नही देबू उन्हें वचन दिया है ! फिर पुलिस के लोग तुम पर नजर रखते हैं मुझ पर भी। मेरे तुम्हारे साथ जाने पर सीधे तुम्हारे दादा को पकड़ लेंगे।

—हाँ यह तो सच है।

—वह कैसे हैं देबू ? बहुत कमजोर हो गये हैं ?

—नहीं बहुत कमजोर नही हुए हैं।

—होते भी तो मैं क्या कर लेती ?

उसके बाद प्यार से भरी आँखों से बहुत गहरे में देखती हुई भाभी बोली पूजा का ढोल सुनकर मन कैसा हो जाता है ! उनके लिए पूजा भी तो नहीं करती हूँ। उन्होंने मना कर रखा है।

—क्यों ?

—भारतमाता के अलावा किसी की भी पूजा करने की मनाही है। एक ही जिद्दी आदमी हैं। गँवार की जिद ठहरी। समझ लो कि जो बात एक बार दिमाग में घुस गयी तो घुस गयी। सिंदूर दासता की निशानी है नहीं लगाने देंगे। मुझे देस में अपने मकान में रखें और यही सब कुछ वह सुन,

स्वय जेल चल गय। मै सब धो पाछकर बैठ गयी। देस म शोर मच गया। सभी न मुझ ही भला बुरा कहा। मैंने कह दिया म कुछ नही जानती। वह आकर लगान को कहेगे तो लगाऊँगी।

—अब तो लगाती हो !

—लगाना पडा। फुफिया ससुर न खाना पीना छोड दिया। तीन दिन तक पड रहे। तब मुझ लगा कि मर सिर बडा पाप चढ जायगा। उनक लौटन पर लगा लिया। मां रे मा ! पता है कि जेल स लौटकर क्या कहा था उन्होन ? कहा तीन तीन दिन तक खाना नही खाया ? खाता था। लकिन अन्न नही खाता था चिउडा खीर और कला खाता था। तुम तो बेवकफ हो।

—मगलवार का व्रत करती हो ?

—झगडा करके करती हूँ। यह तो व्रत है देवता क सामन बठकर तो पूजा नही करती। व कहत हैं यह सब बेवकूफी क काम हैं।

ननीबाबू की बात मन म कचोट रही थी। दवादिदेव का याद है पिछली बार मणिबाबू स मिला था तो वह सन 42 की जागरी पूजा[1] की रात थी। अतिम भेंट थी।

मणिबाबू बोले—देखू ननी को घर म मत घुसन देना। वह भेदिया है। पहल तो कभी नही आता था। अब क्या चक्कर लगाता है ? उज्ज्वला यह बात नही समझती है।

—क्यो ?

मणिबाबू एक मिनट तक कुछ सोचत रह। उसके बाद बाल सूखी घास म पक कर बिस्कुट के बड डिब्ब म दुलाल दा बम रख गया है। ननी इसीलिए आता है कि उज्ज्वला उन्ह नष्ट कर द।

—किस तरह से ?

—मौका पाकर कहा फक आय।

—भाभी ?

यह सोचकर देवादिदेव का कष्ट हुआ था कि उज्ज्वला भाभी उन

---

1 आश्विन मास की पूर्णिमा।

दोनों बमों को कहीं नष्ट करने जाय। भाभी बहुत ही सख्त किस्म की औरत थी। उनका सभी कुछ प्यार पर टिका हुआ था। लेकिन मणिबाबू ने कहा था उज्ज्वला कर सकती है। कह देना मैंने कहा है।

दवादिदेव न भाभी से सभी बातें कह दी। भाभी घबरायी नहीं। सोड से कपड़ धो रही थी। कपड़ो को पीटते पीटते बोली कृष्ण पक्ष आन दो। अभी तो ब्लैक आउट मे भी राह-बाट खूब दिखायी पडत है।

कृष्णपक्ष के अँधरे के लिए कैसी प्रतीक्षा थी! दवादिदेव भाभी क लिए परेशानी आतक से मरा जा रहा था। लेकिन वह अविचलित और निर्विकार थी। जिस दिन वह मनचाही प्रतीक्षित अँधेरी रात आयी थी उसी दिन भाभी ने कहा था चलो पानी मे फेंक आयें।

—कहाँ ?

—चलो न। वडल गेट के उस पार निजन मे एक गड्ढा है। पिंटू के घर जात वक्त देखा था।

—चलो।

—तुम मुझ अकेला नही छोडोगे। तुम भी साथ चलोगे!

—चलूगा।

बातचीत के बीच म भाभी पानी ला लाकर टीन के ड्रम म भर रही थी। गीले कपडो म देवादिदेव के आगे आ खडी हुइ। मुसकराती हुई अपनी विचित्र आँखें मटकाकर बोली डर किस बात का है जी? तुम्ह इतना सोच क्यो हो रहा है? जिसे सोच होना चाहिए वह तो फिकर कर नहीं रही है। तुम सोच सोचकर क्यो मरे जा रहे हो?

—वह न सोचे तो।

—इसम तुम्हारा क्या आता जाता है?

भाभी न जसे अपनी चमकती आँखो से देवादिदेव के अन्तर की सचाइ जान ली थी उस अन्तर की बात जान ली थी जिसके अस्तित्व का देवादिदेव को भी पता न था। कहा था शादी कर लो ना। बूढ बाप की भी देखभाल हो जायेगी तुम्हारा भी एक ठिकाना हो जायेगा।

—तुम भी तो शादी न करने को कहती थी?

—हाँ। शादी कर लेन पर तमाम बातें सुनती हूँ। फिर तुम तो पढी

किसी लडकी से शादी करोगे। मुझ जैसी लडकी कहाँ मिलेगी ?

उस दिन उज्ज्वला भाभी आश्चर्यजनक रहस्यमय लगी थी। जैसे भाभी के अंदर प्रकाश जल रहा हो। देवादिदेव के समान आकर्षक पुरुष की निकटता से उस प्रकाश की एक किरण भी कभी नही फूटी। मणि बाबू के हुक्म से उनका काम कर रही है उसी आनन्द से भाभी दमक रही थी।

फिर वे एक साथ घर से निकले। भाभी दरवाजा बंद करके ऊपरी मंजिल में चाबी रख आयी। वे बस के बजाय पैदल ही बडेल गेट तक गये। भाभी बोली, 'देबू ! हाथो में पसीना आ रहा है। बक्सा खोल। एक तुम लो, एक मैं लेती हूँ। टीन हाथ से फिसल गया तो मुसीबत होगी।

अँधेरा। अँधेरा रास्ता अँधेरी रात। वे पैदल ही चले जा रहे थे। चलते जा रहे थे। लाइन के पास तक आ गये। भाभी के मुँह से अरे निकला। पाँव में शायद ठोकर लग गयी थी। चप्पल की आदत न होने से पैर घसीट-घसीटकर चल रही थी। अचानक हलकी सी गरज हुई— हाल्ट !

वे लोग ठिठककर रुक गये।

लाइन के उस पार हल्मेट पहन कतार के कतार सिर ऊपर उठ आये। रेल पटरियो की निगरानी हो रही होगी—यह बात भाभी को नही देवादिदेव को पता होनी चाहिए थी।

टार्च की रोशनी भाभी पर पड रही थी।

—देबू पुलिस मिलिटरी !

—हाल्ट नही तो गोली मार दूंगा।

सामने हथियारबंद संतरी। पसीने भरी हथेली में बम का स्पर्श। अँधेरी रात। देवादिदेव के मन और शरीर पर ये सभी बातें हावी थी। मन ने उससे कुछ नही कहा। जो करना था, हाथ कर रहे थे। उसने अपने हाथो में बम दबा रखा। पसीने से हथेली चिकनी हो रही थी। हाथ आगे बढा ऊपर उठा। उज्ज्वला भाभी को भी बम तुरंत फेंकना होगा। हलचल मच जायगी, वे भाग निकलेंगे।

हाथ ने बम छोड़ा।

विस्फोट, तेज़ धमाका हुआ। उज्ज्वला भाभी आगे गिर पड़ी थीं। उनके हाथ लाइन पर जोरों से टकराये थे। फिर विस्फोट, धुआं और सामने से गोलियां चली। 'नो, ए वोमन, औरत है।'

—औरत ?

—हां।

देवादिदेव पीछे की ओर भाग रहा था। भागा जा रहा था। गोली—बायीं ओर झुक गया। बायें, फिर दाहिने, धन्यवाद, अंधेरे को धन्यवाद। सड़क पर भाग दौड़। वह भी कुछ देर के लिए। उसके बाद एक दरवाज़ा खुला और उसे अंदर कर लिया गया।

असलम था। बढ़ई। बोला, 'लेट जाइय, चिपककर लेटे रहिये।' मणिबाबू या देवादिदेव, किसी न भी असलम को अपनी विचारधारा की दीक्षा नहीं दी थी। गरीबी और अपने धर्म के कारण असलम इस महानगरी में सात पुश्तों से बाहरी व्यक्ति और दूसरों के गुलाम के रूप में रह रहा था। बिना किसी शिक्षा दीक्षा के अपने मन के आवेग से ही उसने अपन खयाल से स्वदेशी बाबू को बचाया था, बस। दूसरे दिन एक हिन्दू दुकान से चाय ला दी थी। देवादिदेव ने मांगकर उसके हाथों से पानी पिया था। देवादिदेव का धर्म नष्ट हो जायेगा, सोच सोचकर असलम परेशान हो रहा था। फिर सवेरा हुआ। दोपहर हुई। तीन बजे देवादिदेव घर लौटा। लौटते ही बुखार में पड़ गया। बुखार के साथ उल्टियां भी थीं। बीमारी की अचेतनता में एक के बाद एक तसवीर उभरती, मिटती—धुआं, उज्ज्वला भाभी, रेल लाइन ।

बहुत समय बाद। मणिबाबू के अनुरोध पर उज्ज्वला भाभी के जीवन पर एक छोटी सी सोलह पन्नों की किताब लिखी।

उज्ज्वला भाभी गोली से मरी ? या देवादिदेव की अनिच्छुक हथेली से छिटक पड़े बम से ? बम से अगर मरी तो कंधे पर, कॉलर बोन में गोली क्यों थी ? इंसान कॉलर बोन और कंधे के बीचोबीच, लगने वाली बुलेट से मरता है, या बाद में बम के फटने से शरीर के चिथड़े उड़ने स ?

किसी ने कुछ नहीं पूछा, जवाब भी नहीं मांगा। उज्ज्वला भाभी

शहीद हो गयी।

स्वाधीनता क बाद तो निश्चय ही शहीद का दर्जा मिला था उन्हे।

सारे प्रश्न और सदेह केवल उस अकेले मन मे ही थे।

देवादिदेव न सिर उठाया।

मन मे कही गहरे मे अपराध-भाव था, गहरा अपराध-भाव। अन्यथा अवचेतन न गहराइयो मे उज्ज्वला भाभी की स्मृति सहेज कर क्या रख रखी थी?

क्यो था यह अपराध-भाव? क्या वह अपने हाथो को रोक नही सका था, इसीलिए? बयालीस की उस दीपकहीन सध्या मे उसके हाथो ने बम को क्यो नही नियत्रित किया था? उसने बम-सहित अपने हाथो को नियत्रित क्यो नही किया था? क्या इसीलिए यह अपराध-भाव था?

उज्ज्वला भाभी की आँखें आश्चर्यजनक रूप से मायावी रहस्यमयी आँखें थी। उनकी हँसी निमल थी। उनके चित्र के गिर्द फूलो की माला। मणिबाबू की घुटी घुटी रुलाई। 'मोरे देखे बिना नाही रहि सकत रही, आज हमे केकरे हाथे छोड गइल?'

उज्ज्वला भाभी रहती तो कहती, 'इनके ढग देख रहे हो, देवू?'

आज उज्ज्वला भाभी की स्मृति को दूर हटाना है। घर लौटने से पहले एक काँटा और हटा देना है। उस स्मृति का सामना नही कर रहा था, क्या मन इसीलिए भाग रहा था? अनेक बातें, अनेक घटनाएँ। बलवत की याद। उज्ज्वला भाभी की याद। इन सबसे दूर चले जाने की इच्छा थी।

उसन अपन चेतन म नही, अवचेतन मे धीरे-धीरे दूसरी तरह स अपनी इमज बडी कर ली थी। धीरे-धीरे वह बुरा बनता गया। होते-होते आज इस स्थिति तक पहुँच गया है। ईप्सिता न उसके पतन की हर अवस्था को दखा था। ईप्सिता को लगता था कि प्रसिद्ध लेखक देवादिदेव से सबध होन स उसका सारा जीवन बडी सी बरबादी बनकर रह गया है।

—सुन रहे हैं?

शीला आकर खडी है।

—कहिय।

—छोटी मौसी का ज़िक्र करते ही आप अचानक इस तरह क्यों चले आये ? कब से सिर झुकाये बैठे हैं ! मुझे बहुत बुरा लग रहा है।

देवादिदेव ने उस स्त्री की ओर स्वच्छ आँखों से देखा। उसे गौरैया की तरह मसल डालने की तबीयत न हुई। लेकिन वह घटना कहाँ हुई थी ?

—नहीं, बुरा लगने का कोई कारण नहीं है। बैठिये न ! नीचे बैठिये।

लड़की बैठ गयी।

—उज्ज्वला भाभी आपकी मौसी लगती थी ?

—हाँ।

—उसके लड़के-लड़कियाँ कहाँ हैं ?

—मिताली और जया की शादी हो गयी है। सोना और बाबुल नौकरी कर रहे हैं।

—उनका मामा घर पर ही था ?

—हाँ, मौसी मर गयी। मौसा को जेल से निकलने के बाद कैंसर हो गया। इस बीच मौसा, बाबा, नाना सभी मर गये। वे मेरी माँ के पास रहते थे।

—वहीं लिखना-पढ़ना हुआ ?

—हाँ, मेरे पिता की लोहे दूकान थी। अभी भी है। कोई मुश्किल नहीं हुई। जानते हैं, सोना और बाबुल बहुत बदल गये हैं। पिता नहीं है। माँ उन्हें देखना चाहती है। इस कलकत्ता में ही रहती है, पर हमारे घर बिलकुल नहीं आते।

—भाभी के पिता क्या करते है ?

—खड़गपुर में ठेकेदार थे।

—मणिबाबू के साथ भाभी की शादी क्यों की थी ? मणिबाबू तो राजनीति करते थे।

—बुआ की जायदाद मिली थी, इसीलिए मौसा के पास काफी जमीन-जायदाद थी। काली होने के कारण मौसी की शादी नहीं हो रही थी। दादा जानते थे कि, फूफा के मरते ही सारी जमीन-जायदाद बेचकर रुपये फंड में दे दिये जायेंगे। फिर मौसा के सारे घरवाले स्वदेशी आंदोलन में

थे। इससे समाज मे बड़ा सम्मान था।

देवादिदेव को मणियारू के शहर वाले घर की याद आयी। दो कमरे, टीन की रसोई, टीन-छता स्नानघर, उठौआ पाखाना।

शीला बोली—'मोसी भी तो कम नही थी। दादा ने पचास तोले सोने दिया था। सभी आदोलन मे डाला।'

शीला ने कुछ देर और बातें की। उसके बाद उठ गयी। वे लोग कल सवेरे की बस से काश्मीर जायेंगे।

ट्रेन आयी, देवादिदेव ने शीला को नमस्कार किया। गाडी पर बैठ गया।

ट्रेन ठीक वक्त पर चल दी।

थ्री टायर मे नीचे की बर्थ पर बहुत घुटा-घुटा-सा लगता है। नीद मे भी सांस फूलने लगती है। मन बहुत ही विचलित था। देवादिदेव स्वप्न देख रहा था, दु स्वप्न। आजकल उसे पहले जैसे सपने नही दिखायी देते।

शायद रात का भोजन भी शरीर को माफिक नही आया। थाली के खाने मे मिर्च-मसाला ज्यादा होता है। भात, रोटी थोडी-सी दाल खायी थी। याद आया कि आते समय ईप्सिता ने खाना साथ बाँध दिया था। देवादिदेव न जिस तरह मे प्रोग्राम बनाया था, खाना उसे पठानकोट मे मिलना था। वह तो हुआ नही। टलीग्राम पाते ही चलना पडा। ऐसी क्या बात हो गयी कि अचानक तार करना पड गया?

क्या तपोधन या धीमान अचानक बीमार पड गये हैं? क्या सुमन को कुछ हो गया है? देवादिदेव अपन छोट लडके सुमन को नही पहचानता। लबे बाल, गभीर चेहरा, रगीन कपडे, भारी सैंडल। दिन-रात पढता रहता। नेशनल स्कॉलरशिप पा जान पर दिल्ली पढन जायगा।

पिता से उसकी छह छह महीनो मे छह बातें भी हो पाती हैं या नही, इसम भी सदेह है। लडक सेंट जेवियर्स मे पढे थे। इन लडकों की वजह से बहुत शर्मिंदगी उठानी पडी थी। अँग्रेजी ऑनर्स और बॅंगला मे

एम० ए० परीक्षा देने के प्रस्ताव पर उसमें बड़ा उत्साह था। उच्चशिक्षा का माध्यम मातृभाषा बंगला हो, इसके लिए यह बहुत समय से लगा हुआ था।

ईप्सिता ने कहा था—नौकरी के बाद मैं चार-चार ट्यूशन क्यों करती हूँ ? तुम्हें नौकरी-ओकरी की जरूरत नहीं पड़ी, अंग्रेजी पर जोर देने की जरूरत नहीं हुई। तुम जीनियस हो, प्रतिभाशाली हो। वे जीनियस नहीं हैं।

—मेरे बेटे उन स्कूलों में पढ़ेंगे ?

—तुम्हारे कौन से नामी दोस्त के लड़के-लड़कियाँ बंगला स्कूल में पढ़ते हैं ?

—मैं क्या उनकी तरह हूँ ?

—नहीं हो, इसका सबूत भी तो नहीं दिया।

गृहयुद्ध में देवादिदेव ने बराबर हार मानी है। कलकत्ता में उसका रहना ही कितना होता है ! बराबर घूमता ही तो रहता है। लड़के क्या पढ़ेंगे, कहाँ पढ़ेंगे—इस सब बातों का भार उठाने में अपने को असमर्थ जानकर ही देवादिदेव चुप हो जाता। तीनों लड़के पढ़ने-लिखने में अच्छे थे। लेकिन किसी ने भी रचनात्मक दृष्टि से एक अक्षर तक नहीं लिखा। किसी की भी ललितकला या संगीत में रुचि नहीं थी। इस बात का उसे बहुत दुख था। नौकरी मिल जाय, इसी में वे खुश थे।

लेकिन किसका क्या बना ?

यही बात मन में बैठ गयी थी, शायद इसीलिए देवादिदेव जागते-सोते वही सपने देखता।

हाथ में एक गौरैया है। देवादिदेव का हाथ स्थिर है, वह बिछी हुई चटाई पर लेटा है। गौरैया को उसने अपनी बड़ी सी हथेली से मसल दिया है। तभी जैसे कोई रो पड़ा हो।

देवादिदेव उठ बैठा। सिर झुकाये उठा। एकबार बाथरूम हो आया। कंडक्टर गार्ड किसी के साथ बैठा ताश खेल रहा था। देवादिदेव लोगों के सामान को उलाँकता हुआ, पैसेज में से होता हुआ धीरे धीरे पर लौट आया। झुककर सिर नीचा कर सीट म ु क

सपना उनसे घर लौटने को कह रहा था। पतन या असफलता या मार्ग छोड़कर दूसरे मार्ग पर कदम रखने के पीछे एक और भी स्मृति थी।

लेटे-लेटे ही उसने सिगरेट सुलगायी। हृदय के भीतर कहीं गहरे में छिपा सभी कुछ दिखायी दे रहा था। बहुत-सी स्मृतियाँ अवचेतन में बंद और बंद थी। बलवत की याद आते ही दरवाजा झटके से खुल गया था।

अमनाटोकरी ! हाँ, अमनाटोकरी का जंगल था। तिहैया चल रहा था। मोहित-दा ने कहा था, सत्यशरण जा सकता था लेकिन जा नहीं पा रहा है, उसके पिता बीमार है।'

उस समय देश आजाद नहीं हुआ था। आजादी आयेगी, कहकर आजादी चल पड़ी थी। देवादिदेव पहले जलपाईगुड़ी हो गया था। हारूराय के घर पर टिका था। जाने की बात थी पुलकबाबू के साथ। पुलकबाबू कब कहाँ रहते हैं, कोई नहीं जानता था। बरसात खूब हो रही थी। करला नदी ने किनारे तोड़ दिये थे।

हारूराय के घर पर वह दो दिन रहा। वर्षा रुक गयी। रात में पुलकबाबू आये। उसी रात को रवाना होना पड़ा। बहुत अंदर जाना होगा,' पुलक बाबू बोले, 'नोटबुक मत लेना। जो कुछ नोट करना हो, आँखों से देखकर मन में नोट करो। बाद में लिखियेगा। मुझे पहला मसौदा भेज दीजियेगा। चेक कर दूँगा।'

बात सुनकर देवादिदेव चिढ़ गया था। लेकिन कुछ बोला नहीं। पुलकबाबू की बात पर कोई कुछ नहीं कहता था। वह आदमी तिभागे के पीछे पड़ा था। उसके कहने पर हजारों लोग इकट्ठा हो जाते थे। उस पर बहुत ही विश्वास था लोगों का। सथाल भुईदास पहरा देते रहते थे।

उस समय भी पुलकबाबू के साथ दो सथाल थे। वे दोनों पुलकबाबू के अलावा किसी दूसरे से बात नहीं करते थे। उनके सिर पर पत्ता का बना छाता था, पुलकबाबू के सिर पर भी वही था। उनके पैर नंगे थे, बदन पर तिरछे डोरिये की कमीज, नीची धोती। पुलकबाबू भी उसी वेष भूषा में थे। पुलक बाबू की कमर में बँधी छोटी थैली में रखी टीन की डिबिया में चूना था।

पुलकबाबू के कहने पर देवादिदेव ने रबड के जूते पहन लिये सिर पर रबड की टोपी लगा ली। बदन पर बरसाती पहन ली। यह सब सामान डिस्पोज़ल म बिकता था। वे लोग तिस्ता के किनारे किनारे चल रहे थ। नदी के किनारे लाल सिगनल था। पानी ने खतरे का निशान पार कर लिया था। एक खास जगह आकर कल्लालिनी तिस्ता क सामने खड़े होकर पुलकबाबू न कहा— पैदल पार होंगे।

—पैदल ?

अविश्वसनीय लग रहा था। थोड थोड अतराल के बाद प्रतिस्पर्धा म टील की तरह ऊची पानी की दीवार उठकर आती थी चली जाती थी। फिर नीची हो जाती थी फिर पानी की दीवार बनती थी।

आकाश म तारे थे एकादशी का चद्रमा था। शुक्लपक्ष का। दूर आकाश मे क्षीण बकिम चद्रमा चमक रहा था। पुलकबाबू बोले— एक ही जगह है जहा स पार हुआ जा सकता है। एक दूसरे क हाथ पकड लीजिये।

—कि तु ।

— म चलो। कोई डर नही है।

—मुझे तरना नही आता है।

—तरना आता भी तो बरसात की तिस्ता मे क्या कर लते ? सुना नही है जगल स बाघ गड बहे चले आते हैं ?

व हाथ म हाथ पकडकर नदी म उतरे थे। पानी की दीवार के आने पर समुद्र स्नान के नियम का सहारा लेकर उसम डूब जाते थे। सथाल और पुलकबाबू मढी हुई लाठी बालू मे धँसाकर और झुककर जोर सभाल रहे थ। लेकिन पानी की दीवार के परे चल जान पर पानी छाती तक ही था। एक जगह नदी का तल बहुत ऊँचा था। सथाल बता रह थे चल कर चल और घस कर चल। दो स्थानीय नदियाँ था तज बहाव वाली।

तिस्ता के उस पार ऊपर स खुलने वाली ऊँची सी पुराने जमाने की गाडी खडी थी। जो आदमी उस चला रहा था उसे देवादिदव न पिछले दिन हारूराय क घर देखा था। गाडी न उन्हे सवेरे क लगभग नहारबाडि पहुचा दिया।

चहारवूडि जगल की हद पर था। चहारवूडि मे वे लोग दिन भर एक दूकानदार के घर ठहरे। धान के ढेर के पास दो मकान बन हुए थे। ऊपर टोप की तरह का छाजन था। ढेर देखकर लगता था कि किसी राक्षस वर के मौर को लकडी की खूंटी पर किसी ने रख दिया है। मचान के नीचे धान था। मचान लकडी का था। बीच मे खाली था। सीढी पर खाली जगह से वे ऊपर के मचान पर चढे। दिन-भर वही रहे।

ग्यारह बजे जोरो की वर्षा हुई। पुलकवाबू बोले—'अब चार-पांच दिन चलेगी।'

बरसात चलती रही। सिरो पर छाता लगाकर एक-एक कर वे नीचे उतरे, बांस के झुरमुट मे निपटे और गढैया मे हाथ पाँव धो आये। फिर दूकानदार की रसोई मे बैठकर भात खाया। दूकानदार की सूखे पीले चेहरे वाली आसन्नप्रसवा पत्नी ने मिट्टी की हँडिया म दाल पकायी थी, अरबी के पत्तो की अगली नोकें पीसकर सरसो के तेल की कडाही मे तल दी थी। पुलकवाबू ने मांगकर खायी। बोले—'मिर्च क्यो नही डाली ?'

—बाबू खायेंगे !

—पुलिस की गाडी कैसे चक्कर लगा रही है ?

—बहुत। लेकिन हाथियो का झुड इधर निकल आया है। इसीलिए कल से पुलिस को इतना चक्कर लगाते नही देखा। झुड मे ढेरो हाथी थे।

—देखे थे ?

—चलने की आवाज सुनी थी।

—हू ! हाथियो का झुड।

दूकानदार बोला—हां बाबू ! हाथी उतरे थे।'

पुलकबाबू दूकानदार की पत्नी से बोले—'मचान का धान खेत मे आयेगा तो तुझे पकड लेंगे।'

पत्नी हँसने लगी। पुलकबाबू भी हँसे। वही हँसी। इसके बाद देवादिन पुलकबाबू को एक बार भी हँसते नही देखा।

दिन-भर बारिश का शोर सुनते सुनते देवादिदेव अपने को बहुत

असहाय और विपन्न महसूस कर रहा था । प्रकृति का यह वरोक और वन्य रूप इसके पहले उसने नही देखा था । इसीलिए अच्छा भी लग रहा था ।

रात का वे आमनाटोकरी के जगल में घुसे । घुसने से पहले पुलक बाबू ने कहा था जगल के उस पार तिस्ता व उस पार मैदान है । वहाँ जमाव हो रहा है । जगल म चलते समय आपस म जरा भी नही बोलेंगे ।

—क्यो पुलिस है ?

—जगल म जानवर हैं । बरसात म वे भी घूम फिरकर बड पेडो का आश्रय खोजते हैं । पुलिस तो जीप के रास्ते स जाती है । जगलो म जीप नही चलती ।

—जानवर !

—हाँ । और सुनिये पैरो म जोकें चिपक जायेंगी । चलते समय पैरो की ओर मत देखियेगा डर जायेंगे । छुडायेंगे भी नही छूटेंगे । बाद म छुडा कर पैरो म चूना लगा दूगा । सथाल कह रहे थे—हाँ रे इक्कल है या चला गया ?

—जायेगा कहाँ ? घूम रहा है ।

—इक्कल क्या पुलकबाबू ?

—नर हाथी को झुड से अलग कर देने पर वह इक्कल हो जाता है । यह बुड्ढा होता है और इसके दात होते है । बहुत दिनो तक घूमता फिरता रहता है ।

आमनाटोकरी सुरक्षित वन है । उत्तरी बगाल का भयानक हिंस्र जहरीला जगल । चारो ओर बड-बड पेड । छोटे पेड भी हैं । धरती दिखायी नही पडती । वर्षा के जल से खरपतवार ने फलकर सब हरा ही हरा कर दिया है । एक विचित्र ढग स लताए इस पेड से उस पेड पर चढकर जगलो जाल स बुन देती है । पुलकबाबू और सथाल छोटे से हँसुए स बेलो को काटते हुए आगे बढ रहे थ । यह जगल देखकर लौटा तो वह अरण्य कहना सभव नही था । यह जगल हिंस्र प्रकृति का स्वतत्र राज्य है इसान स इसे दुश्मनी है ।

संथाल लोग 'स्-खो स्-खो:' बोलते हुए जानवरों की-सी आवाज़ें कर रहे थे। पेड़ों की डालें काटकर उनसे पैरों के पास की खरपतवार पीट रहे थे। देवादिदेव ने जिज्ञासु दृष्टि से पुलकबाबू की ओर देखा। पुलकबाबू धीमी आवाज़ में बोले, 'सांपों को भगा रहे हैं।'

'सांप' सुनते ही देवादिदेव बहुत डर गया। वह सांप से बहुत डरता था। सँपेरों के नाचने वाले सांप, चिड़ियाघर के कांच के पिंजड़ों में बंद सांपों तक को वह नहीं देख सकता था।

—क्या सांप हैं?

पुलकबाबू ने जवाब नहीं दिया। वे लोग सहसा एक जगह पहुँच गये। वहाँ एक पगडंडी थी। पगडंडी देखकर देवादिदेव की जान में जान आयी। वह उस तरफ़ बढ़ा। पुलकबाबू ने उसका हाथ थाम लिया।

—मैं इस पगडंडी पर चलूंगा।

—नहीं।

दोनों संथाल उसके आगे-पीछे हो गये। वह क्या कैदी है! वर्षा हो रही थी। खूब हो रही थी। बरसाती से, टोपी से पानी बह रहा था। पुलकबाबू के बदन पर से पानी बह रहा था। पुलकबाबू बोल नहीं रहे थे। उसकी तरफ देखा।

—इस राह से चलिये।

पुलकबाबू ने धीरे से कहा—'सत्यशरण आया नहीं, आप आये। आप इस समय हमारी हिफाज़त में हैं। आपको मेरी बात माननी पड़ेगी। इस बेल्ट में जलपाईगुड़ी पहुँचा देने तक आपकी जिम्मेदारी हम पर है।'

देवादिदेव को रोना आ रहा था। बेबसी साल रही थी। वह फिर जंगल की तरफ चला। उसके पीछे-पीछे चल रहे संथाल फिर आगे आ गये। फुसफुसाकर बोले—'साले, गुयलकांडा बेल की जड़ नहीं मरती। उसी दिन तो काटी थी।'

बरसात हो रही थी, लगातार हुई जा रही थी। धार बनकर पड़ रही थी, बिना रुके। पेड़ के पत्तों पर वर्षा की धार की पट-पट आवाज़ हो रही थी। जैसे ड्रम पीटे जा रहे हों—कुछ दबी आवाज़ में, मानो पतले डंडे की चोट हो। अब वे बांस के वन में से होकर जा रहे थे। वह हाथियों

की प्रिय विहारभूमि थी। हाथी बाँस के मुलायम पत्ते और डालों को बहुत पसंद करते हैं। वर्षा से दृष्टि धुँधली हो रही थी। देवादिदेव कल्पना में वर्षा की झालर के उस पार एक बुड्ढे दाँत वाले इक्कल को देख रहा है। गुयालकँडा लता की हर शाखा भयानक विषधर लगती थी।

पुलकबाबू कुछ नहीं बोल रहे थे। कहीं कोई बात न करने लगें, इसलिए वे सथालों के आगे भी चले जाते। दूसरे सथाल के हाथ से डाल ले लेते हैं। अब वे तीनों ही 'ख्-ग्वो-ख्-ग्वो' आवाज निकाल रहे थे। जैसे वे तीनों विद्वेषी और हिंस्र जंगल की निर्मम आत्मा हों, जो जंगली प्राणी के समान आवाज निकालती हुई देवादिदेव को लक्ष्यहीन यात्रा पर लिये जा रही हो। गीले पत्तों के सड़ने से बनी कीचड़ में पैर धँसे जा रहे थे।

पैर धँसे जा रहे थे, पैरों को उठा उठाकर वे चले जा रहे थे। त्रयोदशी का चंद्रमा मेघाच्छादित था। किंतु मेघों के नीचे से छुपे चंद्रमा से प्रकाशित आकाश के कारण अंधकार तरल था। पेड़ों के बीच में से कभी-कभी आसमान न दीखता तो देवादिदेव मर जाता। लक्ष्यहीन यात्रा थी। लेकिन सामने 'वहाँ' स्निग्ध मरण न था। यदि मृत्यु है तो वह भयानक है, क्रूर है। साँप की फुफकार, हाथी की सूँड और अगले ही कदम पर गोली! पुलकबाबू में दिशा भूलने की गलती कतई नहीं होती है। मोहित-दा ने कहा था कि हर जंगल, हर रास्ता उनका जाना हुआ है।

कब तक चलते रहे, पता नहीं। बीच में उन्होंने जंगल छोड़ दिया। एक आदमी पेड़ के नीचे से निकला। पेड़ से टिका हुआ भीग रहा था। दुबला-पतला, लम्बा चेहरा। उसने पुलकबाबू से कुछ कहा। उसके बाद वे बायीं ओर मुड़ गये।

किसी समय जंगल विभाग द्वारा बनाये और अब बहुत दिनों से परित्यक्त, लकड़ी के लट्ठों पर बने एक मचान की पुरानी कोठरी में वे चढ़े। सीढ़ी नहीं थी। पेड़ की डालें काटकर कच्ची सीढ़ी बनायी गयी थी। सवेरा होने तक यहीं रहना था। देवादिदेव का पैर लटकाकर ... पड़ा। पुलकबाबू समेत कोई भी नहीं बोल रहा था। उस ...
से टीन की डिबिया से पुलकबाबू ने खोली। एक बीड़ी ...
एक देवादिदेव को दी।

कुछ देर बाद आसमान साफ हुआ। देवादिदेव नदी का गरजना सुन रहा था। वे लोग नीचे उतर आये। जंगल पार कर फिर तिस्ता। देवादिदेव की समझ में नहीं आ रहा था कि तिस्ता के किनारे से चहाड़-बृटि आकर, जगल में घुसकर, इतना पैदल चलकर फिर तिस्ता का किनारा किस तरह आ गया है ? उसने एक बार पुलकबाबू की ओर देखा।

पुलकबाबू ने कहा—'चहारबृटि के बाद जगल मे घुसे थे और एक घुमावदार रास्ते से आये थे।'

वे नदी के किनारे के जगल में घुसे। पुलकबाबू ने कहा—'बड़ी सभा है। देखकर अच्छा लगेगा।'

—कब जायेंगे ?

—देव बाबू, पहले जोकें छुडाइये।

इस बीच देवादिदेव ने पैरों की ओर देखा। डर से कँपा देने वाला दृश्य था। संथालों में एक संथाल नीचे बैठ गया। वह उसके पैरों से जोंकें छुड़ाने लगा। उसके पाँव में ललछौंही, काली, फूली जोकें लगी थी। जोक छुड़ाने में खून बहने लगा। पुलकबाबू नीचे बैठकर देवादिदेव के जख्मों में चूना लगाने लगे। उसके बाद बोले, 'बालू पर जोकें नहीं है। बैठिये, आराम कीजिये।' फिर वह अपने पैरो से जोंकें छुडाने लगे। बोले, 'चूना तगड़ा एँटीसेप्टिक होता है।'

पुलकबाबू की बात को झुठलाते हुए वर्षा थम गयी थी। वे पैदल चलते हुए एक गाँव में घुसे। एक अहीर का मकान था। लगा कि पुलकबाबू इस गाँव आते रहते हैं और यहाँ रुकते भी हैं।

चाय पीकर देवादिदेव की जान मे जान आयी। छप्पर-छता घर था। बड़ा-सा। एक ओर लकड़ियो की आग पर दही जमाने के लिए दूध गरम हो रहा था। कोठरी बहुत गरम थी। पुलकबाबू और संथालों ने कपड़े सुखाये। धोती का एक छोर कमर मे लिपटाये रखकर दूसरा छोर खोलकर सुखाया। देवादिदेव ने बरसाती पहनकर अपना कुरता, धोती और बनियान सुखाये।

यहाँ उन्होंने लाई और चाय ली और फिर आगे चले। इतना ज्यादा

पहुँचाकर फिर लौटना है।'

—यहां ?

—नही, दूसरी जगह। और भी दूर।

—सच ?

—हां।

—मोहित-दा आपके बारे मे बता रहे थे।

मचान पर से साइकिल उतारी गयी। तीन आदमी थे। कैरियर पर पुलकबाबू, देवादिदेव और एक सथाल को बिठाकर रवाना हुए। पुलकबाबू ने पुकारकर कहा—'आमनाटोकरी होकर आये थे, आमनापोखरी होकर लौटेंगे। आमनापोखरी आमनाटोकरी का जुड़वां जगल है।'

तिस्ता के किनारे एक नयी जगह वे साइकिल से उतरे। बरसात नही थी। उफनी हुई नदी फैली जा रही थी। वे साइकिल लेकर एक नाव से पार हुए। आषाढ के दिन थे। चार बजते ही धूप आ जाती और सब मानो गरम होकर जलने लगते। वे कांस के जगल मे घुस पडे। कांस बडा ऊँचा-ऊँचा था। देवादिदेव ने कल जिस आदमी को देखा था, अचानक वही हलके-से सीटी बजाकर कही से निकल आया। इन लोगो को बुलाकर अदर खीच लिया। पुलकबाबू से कुछ कहा। पुलकबाबू ने देवादिदेव का हाथ खीचकर भागने का इशारा किया।

वे लोग भागते रहे। सडे पत्तो की कीचड मे पांव धँस जा रहे थे। पांव निकालकर भागना पड रहा था। जरूर कोई बडी बात है। जगल एक-से ही थे। लेकिन अब वे 'खु-खो, खु-खो' की आवाज करके सांप नही भगा रहे थे। वन विभाग की नही, लकडी के किसी ठेकेदार द्वारा बनायी गयी मचान सामने थी। वे मचान के नीचे चले गये। आजकल लकडियो को काटने का मौसम न था। मचान की कोठरी मे ताला लगा था। नीचे बदन से बदन सटाये वे खडे हो गये।

वह जगह तिस्ता से ऐसी कुछ ज्यादा दूर न थी। नदी की ओर से लोगो की आवाज, जीप की आवाज सुनायी दे रही थी। पुलकबाबू ने फुस-फुसाकर कहा, 'पीछे-पीछे आये हैं।'

वे लोग वही खडे रहे। ऊपर बद कोठरी के लकडी के फर्श पर किसी

ोज के गिरने की आवाज हुई। एक आदमी बोला, 'साँप चल रहा है।' किन 'सांप' सुनकर देवादिदेव को इस समय कुछ न महसूस हुआ, बल्कि ा लगा कि वह आतंकित नहीं है। पुलकबाबू पर बोझा न बनकर वह ी तरह चल सकता है कि पुलकबाबू उसे पसन्द करने लगें। यह भी एक ा लाभ हुआ।

इसी तरह वे खड़े रहे। शाम होने पर वहाँ से चले। आखिरी आदमी हाथ मे टॉर्च थी। डिस्पोजल से खरीदी हुई। टॉर्च की रोशनी जरूर थी। इस बार वे पगडडी पकडकर चले। सथाल लाठी ठोकते चल रहे देवादिदेव की घडी म साढे बारह वज रहे थे। वे चहारबूडि जैसे एक में पहुँचे। एक खेतमजूर की बुढ़िया माँ की कोठरी मे रात बितायी। ा होते न होते वह व्यक्ति चला गया। देवादिदेव आदि इस गाँव ज बजे निकले। तिस्ता के इस पार जगल और नदी के बीच की पगडडी रास्ता पकडकर वे थोडी देर चले और फिर एक जगह रुके रहे। थोडी वह आदमी गाडी लेकर आया। वे लोग उसमे सवार हुए। उसके तिस्ता पार कर जलपाईगुडी पहुँच गये।

ाय के घर पर ही पुलकबाबू भी रुक गये थे।

देवादिदेव का शरीर ट्रेन के हिलने से झोके खा रहा था। याद है, सब-याद है। पुलकबाबू भी उस दिन रुक गये थे। गरम पानी मे नमक कर नहाने से थकान खूब मिटती है। हारूराय की बहन अध्यापिका र्यकर्ता भी थी, लेकिन विधवा थी। खाने के बारे मे पुलकबाबू से थी। पुलकबाबू बोले, 'वठि—केले के खबे—के कोफ्ते, आलू का वठि को अच्छी तरह टुकडे करके कोफ्ते बनाना।'

हिला खुश थी या नाखुश, समझ मे नहीं आया। पर खाते वक्त और आलू का चोखा देखकर देवादिदेव बोला—'कोफ्ता रसेदार और चोखा सूखी तरकारी—मैं तो यह सब भूल ही गया था।'

रूराय बोले—'सुना है कि आपकी पत्नी बहुत पढी हुई है?'

-नही नही, ऐसा क्या कि ।

-खाना बनाती है?

पहुँचाकर फिर लौटना है

—यहां ?

—नहीं, दूसरी जग

—सच ?

—हां ।

—मोहित-दा आपके

मचान पर स साइकि

पुलकबाबू, देवादिदव और

ने पुकारकर कहा—'आम

लौटेंगे । आमनापाखरी आ

तिस्ता के किनारे एक

थी । उफनी हुई नदी फैली

हुए । आषाढ के दिन थे ।

गरम होकर जलन लगते ।

ऊँचा था । देवादिदव न क

हलके-स सीटी बजाकर क

अदर खींच लिया । पुलकब

हाथ खींचकर भागने का इ

स लोग भागते रहे । स

निकालकर भागना पड रहा

ही थे । लेकिन अब व 'ख

रहे थे । वन विभाग की

मचान सामन थी । व

काटने का मौसम न था ।

से बदन सटाये वे खड हो

वह जगह तिस्ता से ऐस

लोगों की आवाज, जीप की

फुसाकर कहा, 'पीछे-पीछे

वे लोग वहीं खडे रहे ।

आदमी कितना शात है ! इतनी उमर है इतन दिना तक राजनीति की है शरीर भी उतना अच्छा नहीं है। दसन मे भारी भरकम होन स क्या होना है सूझ बूझ आश्चयजनक है। सुन रहा था, पुलकराबू को देख रहा था। उस समय देवादिदव की मानसिकता दूसर ढग की थी। एकदम भिन्न। अकाल क बाद स कई बरस इसी तरह बिता दिय थे। उसके मन म आ रहा था कि तिहैया की पृष्ठभूमि म इस व्यक्ति को नायक बनाकर एक जीवनीपरक उपन्यास लिखे। लगा कि उसक हाथ को जैस किसी ने छुआ हो। आँखें तिरछी करके देखा, चटाइ पर फैल उसक हाथ पर सौफ है। एक गौरैया आती है। बैठती है सौफ लेती है और उडकर खिडकी पर बैठ जाती है।

वह सोच रहा था कि जगल म से गुजरत समय यह आदमी जगल क साथ एकरस हो गया था। चहारबूडि म दूकानदार क परिवार क साथ भी एकरस हो गया था। उस अहीर गाँव के उस किसान वापसी मे उस बुढ़िया के घर और अब यहाँ—सब जगह यह आदमी एकरस हो जाता है। रहता पुलकबाबू हा है हर परिस्थिति का नियन्त्रित भी करता है। स्वभाव म नतृत्व सहज रूप स है। इसी स्वभाव स चलकर उन्नति की है। आश्चयजनक व्यक्ति है।

टलीपथी ! पुलकबाबू ताश खलत खेलते बाले— जात समय देबबाबू न डर भर दिया है। उसक बाद स बिलकुल अजीब लग रहा है। नहीं मोशाय इधर आकर आपन अच्छा किया।

दवादिदव को लगा कि पुलकबाबू न उसके लिए अपन मन के कमरे का दरवाजा खोल दिया है। उसे बहुत गव महसूस हो रहा था। हाथ स चिडिया फिर टकरा गयी।

—फिर आयेंगे।

—जरूर।

चिडिया चुगन लगी। इससे पहले कि दवादिदव को पता चले कि वह क्या कर रहा है उसक हाथो न पजा बनकर उसकी आश्चय भरी अविश्वास भरी आँखा के सामने अनचाह आवग के वशीभूत होकर चिडिया को दबा लिया। उसकी उँगलियो के दबाव से कामल पखो स ढँका गला

—पम। वक्त कहाँ मिलता है! नौकरी, ट्यूशन ।

भोजन के बाद पुलकबाबू बोले—'आज रुक रहे हैं। ताश खेलिए, देवबाबू! लेटे रहने से तबीयत खराब होगी। शाम को जल्दी खाना खाकर सो जाना।'

—आप लोग खेलिये। मैं देख रहा हूँ।

देवादिदेव आधी करवट लेकर चटाई पर पास ही लेटा रहा। वे लोग ताश खेलते रहे। लगता था, पुलकबाबू पक्के खिलाडी हैं। देवादिदेव का हाथ खिडकी की ओर फैला हुआ था। उसके हाथ मे सौंफ थी। खाने के बाद मुँह ठीक करने के लिए।

लेटे हुए भी उसकी आँखें खुली थी। वे ताश के खेल की ओर लगी थी लेकिन कान एक नवागतुक की बातो की ओर लगे थे।

उस आदमी के घुसते ही हारूराय बोले—'मेरा साला है, देवबाबू! डॉक्टर है। *तबीयत खराब लगती हो तो बताइये। यह सब बीमारियो मे* मेपाक्रिन देता है।'

यह आदमी हँसने लगा। लगा कि यही बात कहकर हारूराय सबसे उसका परिचय कराता है।

वह आदमी बोला—*'पुलक-दा दो दिन और रुक जाइये।'*

—क्यो, पकडा दोगे?

यह बात भी लोगो ने निश्चय ही बहुत बार सुनी थी। बोला—'उनका मालूम है कि आप लडकी के ब्याह के बाद यही है। दो दिन ठहर जाइये, देखा जायगा।'

—अनिल, कल जाऊँगा।

—आज भी जा सकते हैं।

—नही। दत्त आदमी बुरा नही है।

—घर नही चलियेगा?

—चलूँगा, चलूँगा। तुम गये थे क्या?

—हाँ। ताई ने घर जाने को कहा था।

—अभी आऊँगा।

देवादिदेव सुन रहा था। मुग्ध होकर पुलकबाबू को देख रहा था। यह

आदमी कितना शात है ! इतनी उमर है, इतने दिना तक राजनीति की है, शरीर भी उतना अच्छा नही है। देखने मे भारी भरकम होन से क्या होता है, सूझ बूझ आश्चर्यजनक है। सुन रहा था, पुलकबाबू को देख रहा था। उस समय देवादिदेव की मानसिकता दूसरे ढग की थी। एकदम भिन्न। अकाल के बाद से कई बरस इसी तरह बिता दिय थे। उसके मन मे आ रहा था कि तिहैया की पृष्ठभूमि मे इस व्यक्ति को नायक बनाकर एक जीवनीपरक उपन्यास लिखे। लगा कि उसके हाथ को जैसे किसी ने छुआ हो। आँखें तिरछी करके देखा, चटाई पर फैल उसके हाथ पर सौफ है। एक गौरैया आती है। बैठती है, सौफ लेती है और उडकर खिडकी पर बैठ जाती है।

वह सोच रहा था कि जगल मे से गुजरते समय यह आदमी जगल के साथ एकरस हो गया था। चहारबूडि मे दूकानदार के परिवार के साथ भी एकरस हो गया था। उस अहीर, गाँव के उस किसान, वापसी मे उस बुढिया के घर और अब यहाँ—सब जगह यह आदमी एकरस हो जाता है। रहता पुलकबाबू ही है, हर परिस्थिति का नियन्त्रित भी करता है। स्वभाव म नतृत्व सहज रूप से है। इसी स्वभाव स चलकर उन्नति की है। आश्चयजनक व्यक्ति है।

टेलीपैथी ! पुलकबाबू ताश खेलत खेलते बोले—'जात समय देवबाबू न डर भर दिया है। उसक बाद स बिलकुल अजीब लग रहा है। नही मोशाय, इधर आकर आपन अच्छा किया।'

देवादिदेव को लगा कि पुलकबाबू न उसके लिए अपन मन के कमरे का दरवाजा खोल दिया है। उसे बहुत गर्व महसूस हा रहा था। हाथ से चिडिया फिर टकरा गयी।

—फिर आयेंगे।

—जरूर।

चिडिया चुगन लगी। इसस पहले कि देवादिदेव को पता चले कि वह क्या कर रहा है उसके हाथो न पजा बनकर, उसकी आश्चर्य भरी अविश्वास-भरी आँखो के सामन, अनचाहे आवेग के वशीभूत होकर चिडिया को दबा लिया। उसकी उँगलियो के दवाव से कामल पखो स ढँका गला

दब गया। चिड़िया की कोमल देह थोड़ा काँपी, उसके छोटे-से कलेजे में छटपटाहट हुई उसके बाद चिड़िया लटक गयी।

तीन जोड़ी विस्फारित आँखें देख रही थीं। देवादिदेव अधलेटा था। हारूराय के साले के गले से कुछ अस्फुट शब्द निकला। पुलकबाबू की आँखों में घृणा, क्रोध और उपेक्षा थी। उनकी दृष्टि स्थिर थी।

देवादिदेव तभी भी अधलेटा पड़ा था। पुलकबाबू उठ खड़े हुए। बोले—'हारू, आज ही इन्हें वापस भेज दो। देवबाबू, आप इस सफर के बारे में एक पंक्ति भी नहीं लिखेंगे।'

बाद में पुलकबाबू ने मोहित-दा से कहा था—'उसके बारे में होशियार रहना। शक्ति पाकर वह दूसरों के लिए खतरनाक होगा। आदमी को पहचानने के लिए एक क्षण ही काफी होता है, मोहित! आदमी पहचानने में पुलक कभी गलती नहीं करता।'

पठानकोट-सियालदह एक्सप्रेस के झूले में झूलते झूलते देवादिदेव को समझ आया कि अतीत की यह घटना किस प्रकार उनके व्यक्तित्व की व्याख्या और विश्लेषण करती है? उस दिन की इस घटना से वह कहाँ व्यर्थ हो गया था? आज वह समझ पा रहा था कि तमाम लोगों के कहने के बाद भी उसने तिहैया पर कोई उपन्यास क्यों नहीं लिखा। पुलकबाबू उस घटना के तीन बरस बाद मर गये। उस समय भी उसने कुछ नहीं कहा, न कुछ लिखा। आज कहा जा सकता है कि उनके मरने से उसे चैन मिला था। उसकी वह कमजोरी नहीं रही, जिसके प्रति अपने एक अमानुषीय आचरण के लिए वह सबसे अधिक लज्जित था। बड़ा चैन था।

अब लगा कि पुलकबाबू के व्यक्तित्व के एक कण को भी उसने अपने भीतर क्यों नहीं आत्मसात किया था। इसके पीछे यही घटना थी। इस घटना को अद्भुत, अनियमित असहिष्णुता समझकर उन्होंने उसका परित्याग कर दिया था। वह यथाशक्ति अच्छा लिख सकता है, लेकिन बहिष्कृत होने की सामग्री उसके स्वभाव में, उसके रक्त में निहित है, यह बात पुलकबाबू समझ गये थे। इसीलिए देवादिदेव ने अपने अवचेतन में तिभागा, उत्तरी बंगाल के जंगल, पुलकबाबू—इन सारे विषयों को एक

तरफ रख दिया था। इन्ही पुलकबाबू ने लेंडी कुत्ते के बच्चे को पीटने पर जलपाईगुडी क धनी सठ के एकमात्र दुलारे बेटे को साइकिल से उतारकर बहुत पीटा था।

स्वीकृति ! अपन निकट अपनी ही स्वीकृति। उसके स्वभाव म, प्रकृति म एक विचित्र और जटिल द्वैत भाव था। द्वैत भाव के क्रम म ही निरापद पथ की तलाश, पलायनवादी साहित्य की रचना और वह सब कुछ आता है, जिसन अपन तई प्रतिश्रुत, अपन प्रतिरूप को अपन इमज को यत्नपूर्वक भूसा और लक्डी से, मिट्टी और रगो से बना डाला था। गुडियो की तरह सजी मूर्ति से कही साध मिटती है !

पुलकसिह प्रतिमा बन हो है, उन्ह अपन आप प्रतिष्ठा मिल रही है। प्रयत्न नही किया जाता। सभी उनका आह्वान करने हैं, वदी पर स्थापित करते है। विसर्जन करन के बाद भी उन्ही की पूजा अन्य रूपा मे करना चाहते हैं। देवादिदव जैसे लोगो को अपनी प्रतिमा की पूजा करान के लिए प्रयत्न करना पडता है। इसीलिए शक्ति पान का लाभ है, युवको को विस्थापित करन की हरकत है। इसक बावजूद उनके निकट विश्वसनीय बनन की उत्कठा, श्रद्धा पान की व्याकुलता, उनका विश्वास प्राप्त करने की आकाक्षा भी है।

घर लौटना। खुद लगाया काँटा उखाडकर फेंक दिया। अब कौन है ? ईप्सिता। अतिम युद्ध। देवादिदेव न आँखें बद कर ली। ट्रेन अधकार चीरती चली जा रही थी।

ईप्सिता ! ईप्सिता बनर्जी। देवादिदेव ईप्सिता स अचानक शादी कर लेगा, किसी ने सोचा भी न था। खुद दवादिदव को भी इसका पता न था।

ललिता भी नही जानती थी।

ललिता उससे प्यार करती थी। धनी बाप की बेटी, अत्यत स्वतत्र विचारो वाली, जो मन म आता वही करती थी। तीनो भाई उसे दुलार देत। वही उसके साथी और मित्र थे। देवादिदेव कहा करता था—'भाइयो

ने ही तुम्हारा दिमाग खराब कर दिया है।'

—दिमाग खराब करना क्या होता है ?

—यही कि रात नही, दिन नही, मेरे साथ घूमती रहती हो, भाई लोग कुछ नही कहते !

—बेकार की बातें मत करो। वे क्यो कहेगे ?

—पूछते तक नही कि कहाँ जा रही हो ?

—क्यो पूछे ? मैं कहकर ही निकलती हूँ कि तुम्हारे काम से जा रही हूँ।

ललिता देवादिदेव के घर भी आती थी । रसोई मे बैठकर बाम्हन दीदी से माँगकर चाय पीती थी। एक बार देवादिदेव घर पर नही था और ललिता आयी। पिता के लिए खाँसी की दवा लायी थी।

ललिता गाना बहुत अच्छा गाती थी। एक बार देवादिदेव के साथ एक मीटिंग मे चली आयी थी। वहाँ एक गाना गाकर सबको ताज्जुब म डाल दिया था। सभी को पता था कि देवादिदेव ने ही ललिता को दल मे खींचा है, देवादिदेव के व्यक्तित्व ने। अगर देवादिदेव और ललिता किसी दिन शादी कर लें तो यह स्वाभाविक ही होगा।

ललिता ने भी यही समझ लिया कि शादी होगी। दोनो ही जब स्वतन्त्र है, अपने मे पूर्ण है, तो देवादिदेव से उसकी शादी मे कोई रुकावट न होगी।

ललिता सोचती थी कि वह जब देवादिदेव को जी-जान से प्यार करती है और देवादिदेव यह जानते हुए भी उससे मिलता-जुलता है तो निश्चय ही वह उससे प्यार करता है। उतना ही प्यार करता है जितना प्यार वह उसे करती है।

लेकिन उसे एक बात का पता नही था—वह स्वतन्त्रचेता है, उसका व्यक्तित्व है। यही बात देवादिदेव के मन की अड़चन बनी हुई थी। यद्यपि ललिता कहती थी कि 'देव, मैं तुम पर निर्भर करती हूँ,' पर देवादिदेव एसा नही मानता था।

देवादिदेव को इस बात पर कतई विश्वास नही था । जो इतनी स्वतन्त्रचेता है जिसका ऐसा व्यक्तित्व है, वह देवादिदेव पर सम्पूर्ण रूप मे

किस तरह निर्भर रह सकती है ? ललिता बहुत ही खुले स्वभाव की लडकी थी। कोई दुविधा, सकोच, डर उसमे न था।

देवादिदेव उसके मुंह से प्रेम की स्वीकारोक्ति सुनता । सुनकर उसे अच्छा लगता, लेकिन अतरतम मे कही उस इस पर विश्वास न होता। अब देवादिदेव को महसूस होता है कि उस पर विश्वास न करना गलती थी। ललिता के प्रति उसने बहुत गलत काम किया। यही समझना ठीक होता कि ललिता सच कह रही है। उसका यह विश्वास करना उचित होता कि ललिता उसके मना कर देन पर सदा के लिए केंद्रच्युत हो सकती है। जीवन मे इसी प्रकार होना है। कुछ लडकियां इतना प्यार कर सकती हैं उनका प्यार ऐसा सर्वग्रासी, अस्तित्वलोपी होता है, ऐसा शक्तिशाली होता है कि वे उस प्यार को वश मे नही रख सकती। प्यार ही उनको नियत्रित करता है। बाहर से देखन पर लग सकता है कि इस लडकी के पास सब कुछ है, लेकिन प्यार के अस्वीकृत होने पर ऐसी लडकी का जीवन व्यर्थ, अधकारमय, केंद्रच्युत हो सकता है। देवादिदव उस दिन यह बात नही समझ पाया था।

ललिता बहुत सहज रूप से कहती—'पता है तुम्हे सुबह से नहीं देखा। अगर शाम को भी न देखती तो शायद मर ही जाती।'

बीच बीच मे वह देवादिदेव के चेहरे पर और हाथो पर हाथ फेरते-फरते कहती—'मेरे सब-कुछ तुम्ही हो, यह बात भूल न जाना।'

ललिता नही जानती थी कि उसके व्यक्तित्व का बाहरी रूप, अपन-आप मे पूरा होने का भाव, आत्मनिर्भरता, स्वतत्रचेता होन जैसी बातें ही तो देवादिदेव के मन मे रुकावट, बाधा खडी कर रही है। ललिता समझती थी कि वह उसके इन्ही गुणो पर मुग्ध है और वह यह बात कहा भी करती थी कि 'मैं इन्हीं कारणो से तुम पर मुग्ध हूँ।' किंतु उसन भीतर ही-भीतर प्रतिरोध रच लिया था।

नही, वह ललिता स शादी नही करेगा, पहले मे उसने इस विषय म कोई धारणा नही बना रखी थी। वह ललिता से ही शादी करना, यह बात जरा भी गलत न थी। देवादिदव इतना हीन न था। वह ललिता से शादी करता, अगर ईप्सिता को न देख लेता।

किंतु रक्त मे मिली कुछ धारणाएँ क्या इसके लिए जिम्मेदार न थी ? वह एक ऐसी लडकी की मन-ही मन तलाश कर रहा था, ललिता मे भी उसे ही खोज रहा था, जिसके मुँह स 'तुम मेरे सब कुछ हो, भूल न जाना' सुनकर सहज ही विश्वास हो जाये। जब वह लडकी कहे कि 'देव, मैं तुम पर निर्भर करती हूँ,' तो उस पर कतई अविश्वास न हो। वह लडकी ही उसके लिए एकमात्र नारी और देवादिदेव उसके पुरुष हो सकते थे। देवादिदव उसे मुक्त रखेगा, आश्रय दगा, उस पर निर्भर रहेगा। वह ललिता से भी ऐसी बातें कहता। ललिता कहती, 'मैं वही लडकी हूँ, देव!' देवादिदेव का हृदय ललिता पर विश्वास करता, किंतु अतरतम को विश्वास न होता। वह ललिता म ललिता जैस चरित्र-गुण और मणिबाबू के प्रति उज्जवला भाभी जैसा निर्भर रहन वाला प्रेम—इन दोनों का समन्वय खोज रहा था। ललिता के सामीप्य स वह अपन को पुरुष समझता, किंतु एकमात्र पुरुष नही समझता। वह विश्वास करना चाहता कि ललिता के ससार का वह सूर्य हो सकता है लेकिन विश्वास न कर पाता।

ललिता कभी नही समझी कि देवादिदेव के मन मे उसके लिए कहाँ रुकावट है, कहाँ रोक लगी है ? जिस तरह आज देवादिदेव तेंतालीस-वर्षीय देवादिदेव को देख और उसका विश्लेषण कर रहा है उस दिन नही कर सकता था। हाँ, ललिता मुझसे प्यार करती है, मैं उससे प्यार करता हूँ, हमारा सबध बहुत ही मुक्त है। प्यार मे भाटा आन पर दूसरा पक्ष उसे मुक्ति दे देगा—इस किस्म की बातें वे अक्सर करते थे। ललिता कहती, 'ये सब बातें बेबुनियाद है। कभी ऐसा न होगा। मैं तुम्हे और तुम मुझे हमेशा प्यार करते रहोगे। हम एक दूसरे से सदा प्यार करते रहगे।'

अशोक विश्वास। डॉक्टर, नम्र, शर्मीला और भला लडका था। वह जब तक कलकत्ता मे रहता रोज शाम को चार स सात बजे के बीच कही गायब हो जाता। सब लोग कहत, प्रेम करने जाता है। अशोक विरोध न करता। हाँ या न, कुछ न कहता सिर्फ हँस देता।

अशोक अक्सर उससे कहता—'एक लडकी तुम्हारी रचनाओ की बहुत भक्त है।'

देवादिदेव उससे मज़ाक करते हुए कहता—'आँखो से देखे बिना मानने को तैयार नही हूँ।'

—दिखाने मे डर लगता है।

—क्यो ?

—अगर तुम्हारे प्रेम मे पड जाय तो ?

—प्रेम ! प्रेम के अलावा किसी और सहज सबध के बारे में नहीं सोच सकते ? मुझे तो चिढ होती है। लडके-लडकियो के बीच क्या कोई और सबध नही हो सकता ?

—नही होता है न।

देवादिदेव को उन दिनो लगा करता था कि क्रांति आ गयी है। नये समाज मे स्त्रियो का नया परिचय होगा। पहले तो वे होगी इसान, उसके बाद स्त्री। उस समाज मे प्रेम ही एकमात्र सबध नही होगा। आज जीवन की सध्या मे पहुँचकर लगता है कि प्यार किसी भी लडकी के जीवन मे पहली और अन्तिम वस्तु बनकर रह जाता है।

अशोक उसे ईप्सिता के घर ले गया। देवादिदेव उस समय तीस वर्ष का था। ईप्सिता बीस की थी। ईप्सिता अपनी मौसी के साथ रहती थी, उसकी माँ नही थी। पिता सरकारी डॉक्टर थे। उस समय रिटायर हो गये थे। देवघर मे एक छोटा सा मकान खरीद लिया था। लडकी की शादी करनी थी। बाद मे स्वय देवघर मे ही रहेगे। ईप्सिता की मौसी कॉन्वेंट मे पढाती थी, उन्होने शादी नही की थी। ईप्सिता को यत्नपूर्वक इसान बनाया गया था। उनके घर जाते समय अशोक ने लज्जापूर्वक कहा था, ईप्सिता को वह छुटपन से ही जानता है।

उन दिनो देवादिदेव का बडा नाम था। उसका व्यक्तित्व बहुत प्रभावशाली था। उसमे आत्मविश्वास भी बहुत था। जहाँ भी जाता, औरो का सारा प्रतिरोध धूल मे मिला देता और अपने व्यक्तित्व के पैरो तले रौंद कर उन्हे मुग्ध क्रीतदास बनाकर विजयी लौटता।

ईप्सिता, उसके पिता, उसकी मौसी मुग्ध हो गये थे। माइकेल से शरत्‌चन्द्र तक सबको देवादिदेव ने उस दिन दुरुस्त कर दिया था। बेशक आज वह देवादिदेव के उन दिनो के साहित्यिक विचारो पर विश्वास नहीं

करती। उन दिनों करती थी। ईप्सिता ने मुग्ध होकर आश्चर्य से उसे देखा, उसका वातें सुनी थी। जुही के फूलों-सी सफेद, कोमल, कमनीय लडकी थी। निष्ठावान मौसी का उस पर प्रभाव था। खींचकर वाल बाँधती, सफेद साडी पहनती चेहरे पर पाउडर न लगाती थी। उसकी उँगलियाँ वडी-वडी और कोमल थी।

अशोक मुग्ध भाव से ईप्सिता की रोशन आँखों की तरफ देख रहा था। ईप्सिता बीच-बीच मे अशोक की ओर देख लेती थी। देवादिदेव पर अचानक प्रकट हुआ कि अशोक ईप्सिता को वहुत अधिक प्यार करता है।

मिलना-जुलना, आना-जाना जारी रहा। तभी उसे लगा कि अशोक ईप्सिता के जीवन म नित्य का सत्य है। ईप्सिता न उसे धूप और हवा की तरह स्वीकार कर लिया है। अशोक से ही सुना था कि प्रेम शब्द का उच्चारण उन दोनो के बीच कभी नहीं हुआ। फिर भी वे जानत थे कि किसी दिन व दोनो शादी करेंगे। लेकिन इस वात से ईप्सिता के पिता खुश न थे। वह लडकी के लिए और भी अच्छा लडका मिलन पर खश होते।

देवादिदेव उस समय अपने को वहुत योग्य समझता था। ईप्सिता को देखते ही जान गया था कि यही वह लडकी है, जो उज्ज्वला भाभी की तरह अपन पुरुष पर निर्भर करेगी। तभी उसने चाहा था कि अगर ईप्सिता उसकी पत्नी हो तो अच्छा रहेगा।

लेकिन आज जानता है कि ईप्सिता से विवाह की अपेक्षा उस समय उसके मन मे एक और प्रवल इच्छा वलवती थी—युवा अशोक की आँखो मे उमगत प्रकाश को समाप्त करन की इच्छा। उसन यह भी नहीं जानना चाहा कि ईप्सिता को वह भी पसद है या नहीं? वह यह सोच भी नहीं सकता था कि वह जिस लडकी को चाहे, वह किसी और को भी चाह सकती है।

'तुम्हे प्यार करती हूँ'—ये दो शब्द कहलाने के लिए उसने ईप्सिता के मन मे आँधी उठा दी थी। ईप्सिता उलझन मे पड गयी थी। उसन उसके पिता को विलकुल मुग्ध कर दिया था। ललिता से भी कुछ कहने की जरूरत है, उसने यह सोचा ही नहीं। मन मे न आया हो ऐसा नहीं, लेकिन ईप्सिता को देखने के बाद से उसके मन ने ललिता को अस्वीकार

करना शुरू कर दिया था, तभी देवादिदेव को प्रकट हुआ कि उसे ललिता से कितना कम प्यार था। इस बहाने से उसने अपने को समझा लिया था। जिसे इतनी सरलता से अस्वीकार किया जा सकता हो, उसके प्रति प्यार सच्चा प्यार नही है। ईप्सिता को पाने के लिए मुझमे जो प्रबल तृष्णा है, वह ललिता को पाने के लिए मैंने कभी अनुभव नही की। प्रेम मे उतार आने पर वह उसे छुटकारा दे देगा। इसलिए जब मैं छुटकारा चाहता हूँ तो ललिता भी मुझ मुक्ति दे। मैं ललिता के प्रति कोई अपराध नही कर रहा हूँ। ललिता से उसने यही बात कही थी।

ललिता सफेद पड गयी थी। स्वभाव के विरुद्ध डरी हँसी हँस कर बोली थी—'तुम जरूर मजाक कर रहे हो।'

सोचकर आज भी व्यथा होती है, पीडा होती है, दुख होता है। ललिता किसी तरह से भी विश्वास नही कर पा रही थी कि देव उसके साथ सब सबध तोडे ले रहा है। वह कई बार उसके पास आयी थी। अनेक बार। कहती थी, 'कह दो, यह दुःस्वप्न है। कह दो, देव, कि यह दुःस्वप्न मिट जायेगा। मैं तुम्हे देखे बिना कैसे रहूँगी—एक ही शहर मे, एक ही समय मे? तुमने मेरा ऐसा सर्वनाश क्यो किया?'

उसके लिए ललिता इस तरह टूट जायगी, यह देखकर एक ओर उसका अहं सतुष्टि पा रहा था तो दूसरी ओर उसे अपनी शक्ति का भान हो रहा था। वह उसे बहाने बनाकर समझाता। देवादिदेव उससे कहता, 'कैसे ताज्जुब की बात है, व्यक्तिगत सबध के बिना दोस्ती का भी सबध कैसे नही रहेगा?'

ललिता ने शून्य दृष्टि से उसकी तरफ देखा। बोली—'बहुत रो चुकी। अब न रोऊँगी। तुम यह क्या कह रहे हो, देव?'

—ठीक नहीं कहा क्या?

ललिता घायल पशु की तरह कराहकर बोली—'तुम्हें सब लोगो के बीच देखूँगी, बात कर चले जाओगे?'

—क्यो नही? सीन करोगी—तमाशा? छिटककर निकल जाओगी?

—तुम क्या इन्सान हो, देव? किससे बात कर रहे हो? तुमको देखूँगी, चली जाऊँगी? मैंने तुमको जीवन-सर्वस्व बना लिया था। तुम्हे देखकर

यह नहीं लगेगा कि इस छाती पर मेरा सिर रहा है, इन उँगलियों ने मेरा सिर, मेरा चेहरा, मेरा माथा सहलाया है। किसी अस्वाभाविक, निष्ठुर कुभावना के कारण तुम मेरे न हुए, यह बात मैं सहन कर पाऊँगी ?

—ललिता, ऐसी बातें मत करो।

—ईप्सिता तुम्हारे मन में अनुभूति जगाती है, उसकी तुम्हें जरूरत है। नहीं देव, नहीं। तुम्हारे बिना उसका जीवन चल सकता है, मेरा नहीं चलेगा। तुमको यह मालूम था। तुमने जान बूझकर मुझे अंधकार में छोड़ा है।

—नहीं, नहीं ऐसी बात नहीं है ललिता !

—सोचने में बुरा लगता है ? तुम्हारा जो अहंकार है, उसके कारण तुम मुझे छोड़कर जाना चाहते हो। फिर तुम अच्छे आदमी हो, सहृदय, महान विवेचक, हृदयवान—इस इमेज को भी अटूट रखना चाहते हो, यही न ?

—मैं बुरा आदमी नहीं हूँ, यह तुम एक दिन समझ जाओगी।

ललिता मुँह ढँके लेटी हुई थी। उसने उठकर आँचल समेट लिया। उँगलियाँ जोड़कर अपना हाथ देखा। लगा कि सारा कुछ उसका अपरिचित है। उसके बाद बोली, 'जाओ, ईप्सिता से शादी करो। मैं समाप्त हो गयी। मेरा सारा जीवन तुमने हमेशा के लिए नष्ट कर दिया, यह बात तुमको सताती रहेगी, ताकि तुम भूल न सको। लेकिन कह किससे रही हूँ ? तुम्हारे हृदय है ? तुम्हारे हृदय नहीं है, देव ! तुमने जो कुछ किया, उसके बाद यह न कहना कि तुम्हारे पास हृदय है। मैं चली, वायदा किये जा रही हूँ कि मुझे कहीं नहीं देख पाओगे। मैं तुम्हारी जैसी नहीं हूँ। सब-कुछ सहूँगी। मुझे मिटाकर भी तुम सुखी रह सकते हो। मैं भीरु हूँ, कायर हूँ, मुझसे सहन न होगा। अपने ऊपर मुझे इतना विश्वास नहीं है।'

देवादिदेव ने उस दिन भी ललिता पर विश्वास नहीं किया।

देवादिदेव ने ईप्सिता से विवाह किया।

ललिता की बात मुँह फेरकर सुन ली।

ललिता अचानक ओट म चली गयी। कही जाती न थी। जहाँ जाने से दवादिदव से भेंट हो सके वहा तो कतई नही जाती थी। न तो सडक पर न ट्राम म कही भी नही। दवादिदव को वह बहुत दिनो तक दिखायी न दी।

औरो ने दखा था। ललिता दूसरे रास्तो पर चलती थी पैर घसीट घसीटकर चलती रहती। मिन्टो पाक मे विक्टोरिया स्क्वायर म अकेली बैठी रहती। चिडियाघर मे पेड के नीचे तब तक अकेली बठी रहती जब तक कि माली आकर न कहता बद हो गया उठिये दीदी!

दवादिदव न सुना था कि उसे ब्रन फीवर हो गया है। बहुत दिनो तक बीमार रही। उसके बाद रेडियो म नौकरी कर वह दिल्ली चली गयी। दश आजाद होन के बाद विलायत चली गयी। विलायत म उसन एक भले मानस मराठ से ब्याह कर लिया। भले आदमी को विलायत म छोडकर भारत चली आयी। शरीफ आदमी की म यु हो गयी। ललिता बहुत ही शात गभीर सदा उदास रहने लगी थी। चेहरा पत्थर सा लगन लगा था। पहचानने म भी न आती थी।

इतने समय बाद इस बार डलहौजी आने से पहले दवादिदव जब क्षत विक्षत था एक दिन न्यू मार्केट मे उससे भेंट हो गयी। ललिता मार्केट के अदर से शाट-कट लकर पैदल जा रही थी। सफद उजल बाल खीचकर बाँध हुए। दुबली-पतली सीधी-तनी दह। आँखो मे मोटे काच का चश्मा। लकिन ललिता ही थी।

देवादिदव के सामने ललिता खडी थी। बोली इतने कमजोर हो गय हो? बीमार थे क्या?

—तुम भी तो कितनी बदल गयी हो? सारे बाल सफद हो गये है?

—वह तो बीस वरस पहल ही हो गये थे।

—बीस वरस!

—हाँ।

दवादिदव ने मन ही मन हिसाब लगाया चालीस के पहले ही ललिता के बाल पक गये। शायद पैंतीस मे ही।

—अच्छी हो?—देवादिदेव ने पूछा।

—नहीं। सोशल टॉक, तकल्लुफ की बातें मत करो। इसमें तो तुमको बेचैनी होती है।

—तुम कैसी हो?

—चल रहा है।

ललिता के भीतर से असीम अनुकम्पा प्रस्फुटित हो रही है, देवादिदेव को महसूस हो रहा था।

ललिता अजनबी, धीमी, थकी आवाज में बोली—'तुम ठीक नहीं हो, ईप्सिता अच्छी नहीं है, मैं बरसों से अच्छी नहीं हूँ। हम ही अपरिचित नहीं हुए, तुम भी हो गये हो, देव! हालांकि तुम मानोगे नहीं, क्योंकि मान लेने पर यह भी मानना पड़ेगा कि तुम हार गये?'

—यह सब क्या कह रही हो, ललिता?

—देव हार नहीं गये? बिना हारा आदमी ऐसा कूड़ा लिख सकता है, जो तुम लिख रहे हो?

—तुम मेरा लिखा पढ़ती हो? तो सुनो, क्या सारा लिखा अच्छा होता है?

—पढ़ती हूँ। माने दस बरस नहीं पढ़ा। 'नगर नागरी' पढ़ने के बाद तुम्हारा लिखा पढ़ने में बेकार की मेहनत लगती थी। देखा, बाईस बरस पहले जिस पतन की शुरुआत हुई थी, वह अब पूरी हो गयी।

ललिता की आवाज अजनबी लग रही थी, जैसे किसी तीसरे व्यक्ति के बारे में चौथे व्यक्ति से कुछ कह रही हो।

—वह सब बातें छोड़ो।

—ठीक है, छोड़ो।

माथे पर बल डालकर उसने कुछ देर देवादिदेव को देखा। बोली 'सोचो मत, पुराना कुछ भी नहीं बचा है। सब जलकर राख हो गया है देव! कुरेदने पर आग की एक चिनगारी तक भी नहीं मिलेगी। लेकिन कैसी बेकार की बातें हैं ये भी? मैं व्यर्थ हो गयी, तुम सारी सफलताओं के बाद भी इंसान के रूप में व्यर्थ हो गये। ईप्सिता भी निश्चय ही व्यर्थ हुई। बीच बीच में उसके बारे में सुना था। कभी-कभार दूर से देखा भी। लेकिन किसी की आँखों में ऐसा निःसंग, डरावना अकेलापन नहीं देखा।

लगता है तुम उसकी आँखों की ओर नहीं देखते हो ?

—उन सब बातों को छोड़ो, ललिता !

—बताओ तो, ऐसा क्यों किया था ? यहीं आनन की तबीयत होती है।

—ललिता। मैं मैं ।

—नहीं न, देव ! मत बोलो। तुम्हारा आचरण गलत था। उसे तुम बहुत जल्दी समझ गये। लेकिन ईप्सिता स्त्री-गुणों से भरपूर स्त्री है, इसीलिए उसे नहीं छोड़ा। बच्चों की भी बात जरूर सोची होगी। समझे थे कि मैं तुमसे झूठ बात कहूँगी । कोई तुम्हारी तरफ देखता रहे और वह मैं होऊँ—यही सोचा था न ?

—बताओ, क्या कहूँ ? तुमने सब कुछ तो कह दिया।

ललिता ने सिर हिलाया, माथे पर से सफेद बाल हटाये। अजनबी आवाज में बोली—'लेकिन इस मुलाकात की जरूरत थी । कभी प्यार किया था, इसलिए मेरी स्मृति तुम्हें सताये। आज कह रही हूँ, मैं तुमसे प्यार नहीं करती, लेकिन तुम्हारे लिए मैंने किसी और को भी प्यार नहीं किया। एक बड़े अच्छे आदमी को दुख दिया था, खुद भी व्यर्थ हुई। इसका कारण भी तुम्हीं थे। वह तुम्हें नहीं पहचानता, तुम ही परोक्ष में उसके दुख का कारण बने। देव, आज इस उम्र में वे बातें तुम्हारे शेष जीवन को बेंधती रहें, यही चाहती हूँ। तुम जानते हो, तुमने अन्याय किया था। मुँह से तुम चाहे जो भी कहो, वास्तव में तुम स्वार्थी हो, आत्म केंद्रित, हृदयहीन हो।'

ललिता चली गयी। देवादिदेव को अकिंचन, अभागा बनाकर चली गयी। ललिता की आँखें, स्वर, बातों ने देवादिदेव के अंदर दरार डालकर बैठा दिया था। प्यार किसी को इस प्रकार नियंत्रित करता है ? प्रेम व्यर्थ होने पर क्या कोई इस प्रकार केंद्रच्युत हो जाता है ? देवादिदेव को डर लग रहा था। वह क्या है ? इंसान नहीं, पूरा इंसान नहीं, वह केवल ध्वस हो कर सकता है ?

पठानकोट एक्सप्रेस सियालदह की ओर बढ़ती जा रही है तो आज सबसे पहले ललिता की बात ही देवादिदेव को याद आयी है। हाँ, घर

लौटने का अर्थ अगर किसी अक्षमता और व्यर्थता को मानसिक अक्षमता, मानसिक व्यर्थता मानकर स्वीकार किया जाये और इसीसे अपने को शुद्ध-स्वच्छ मान लिया जाये तो ललिता के बारे मे सबसे पहले सोचना होगा। उसके जीवन की धारा ललिता के समय से दुविधा मे पडकर लक्ष्यभ्रष्ट होती गयी है। बलवत और पुलकबाबू के समय मे वह धार और बँट गयी। उसके बाद वह धारा नदी के मुहाने की तरह बढी। बहुत-से द्वीप रचती हुई, तोडती हुई बही।

द्वीप तो एक-दूसरे से पृथक-पृथक रहते हैं। लेकिन हर धारा एक ही सागर की ओर उन्मुख होती है। वह सागर देवादिदेव वसु था। जिस तरह समुद्र सारी नदियों की धाराओ का जल लेकर पुष्ट होता है, देवादिदेव के जीवन न भी उसी प्रकार बहुत से स्रोतो से बहकर आये जल से अपनी भावमूर्ति को पुष्ट किया था। लेकिन उससे उसे क्या लाभ हुआ? उस जल से तो किसी की तृष्णा भी नही मिटी? वह जल खारी, कडवा, जहरीला था।

पहले ललिता, बाद मे ईप्सिता। किंतु अत मे सबसे बडा अपराध उसने शायद ईप्सिता के प्रति ही किया है, आज यही महसूस हो रहा है। इसी से शुद्ध, मुक्त होकर ईप्सिता के पास लौटने, अपने ही घर लौटकर आने की यह आकुलता है। अब किसी प्रलोभन के आगे हार नही माननी है, किसी चीज की इच्छा भी नही करनी है। पत्नी और बेटो के साथ फिर से सबध जोडेगा। पूरी ईमानदारी से लिख सका तो लिखेगा, वरना नही लिखेगा।

उसने ईप्सिता से शादी की थी।

ईप्सिता न अशोक से कहा था—'तुम तो क्षण-भर मे इस समस्या का समाधान कर सकते हो।'

नही, अशाक समाधान नही कर सकता था। उस समय वह पूरे समय के लिए पार्टी का काम करता था। डॉक्टर को उस समय बहुत काम थे। बयालीस के आदोलन और तैंतालीस के अकाल से सकटग्रस्त बगाल मे डॉक्टरो का काम बहुत वढ गया था।

अशोक न अपन कोमल स्वर मे कहा था— अभी तो वक्त नही है।

—तुम्हे कब वक्त मिलेगा ?

—अभी कैसे बता सकता हूँ ?

—लेकिन अब वक्त कहा है अशोक ?

—अभी तो म गावा म काम करन जा रहा हूँ ईप्सिता !

—बताओ मैं क्या करूँ ?

—क्या बताऊ ? मेरी हालत का तो तुम्हे पता है।

—अशोक मुझ छोडकर तुम अच्छी तरह से रह सकोगे ?

ईप्सिता न यह बात बहुत दुख के साथ कातर होकर कही थी। क्या अशोक को लगा था कि देवादिदेव न शादी की ठान ही ली है ता वह निश्चय ही ईप्सिता से शादी करेगा ? दवादिदेव न ईप्सिता का ललिता की बात नही बतायी है क्या उसे पता था ?

अशोक न धीरे म कहा था— मैं रह लूगा।

अशाक ने क्या यही सोचा था कि क्राति आ रही है वह प्रतिबद्ध काय कर्ता और सैनिक है ! व्यक्तिगत जीवन को समर्पित करन म वदना है व्यथता नही। उसने ईप्सिता को समझाया था कि वह जिसस मन स शादी करन को तैयार हो उसी से करे। इस तरह से उसन उसकी सहायता की थी।

उसन ईप्सिता से बहुत कुछ कहा था देवादिदव बहुत ऊँचा आदमी है। वह महान प्रतिभाशाली लेखक है। वही इस देश का अलक्सी तोल्स्तोय और शोलोखोव है। उसका आचार व्यवहार देखकर काई और निणय लेना ग़लती होगा। ईप्सिता अगर उससे विवाह करनी है ता परोक्ष मे एक महान आदश की सहायता करेगी।

ईप्सिता न कहा था कि वह राजनीति नही समझती।

अशोक न समझाया कि इस विवाह से तुम म भी सायकता बोध पनपेगा।

राम का सेतु दखकर गिलहरी के साथकता बोध की तरह ?

हो सकता है वही हो।

अशाक न झूठी सान्त्वना नही दी। ईप्सिता साधारण इसान थी अशोक

भी वैसा ही था। लेकिन क्रांति जब लैम्प पोस्ट की ओट तक पहुँच गयी हो तो असाधारण और उपयोगी देवादिदेव के उपयोग के लिए साधारण लोगों के आत्मसमर्पण की आवश्यकता होती है।

देवादिदेव और ईप्सिता की शादी हुई। बलवंत की मृत्यु तक अशोक उन दोनों का ही मित्र था। उसके बाद वह खुद ही हट गया। आज देवादिदेव को लगता है कि बेशक अशोक आज अनुपस्थित है, किंतु ईप्सिता को क्या हमेशा यह नही महसूस होता रहा कि उसका जीवन व्यर्थ हो गया है? एक संपूर्ण मानव-जीवन नष्ट हो गया है।

देवादिदव के लिए ईप्सिता के मन मे मोह उपजाया गया था। वह मोहभग होने मे ईप्सिता को अधिक समय न लगा।

किन्तु देवादिदेव ने स्त्रीगुणसपन्न स्त्री ईप्सिता से ललिता की सी आत्मनिर्भरता, आत्मपूर्णता और स्वतंत्र व्यवहार चाहने मे देर न की। ईप्सिता बोली, 'देव, तुमको तो मालूम है कि मैं ललिता नही हूँ।'

—ललिता की बात तुम्हे कैसे मालूम हुई?

—सभी जानते हैं। पहले जानती ।

—तो क्या करती?

—मालूम नही। शायद तुम्हारी बात पर राजी न होती।

—मैंने तो तुमको चाहा था।

—चाहा था। यही न? सदा अपने को लेकर व्यस्त रहते हो, घर को नही देखते, गृहस्थी नही देखते, मुझे नही देखते। रुपये मिलते हैं तो मेरे आगे फेंककर आगे बढ जाते हो। मुझसे तुम्हारा क्या सबध है? पिता बनकर, पति बनकर, कई रूपों मे सामने हो—बस, यही न? बाहर कहते फिरते हो कि मेरी पत्नी अपॉलिटिकल, अराजनैतिक है। जीनियस का मार्ग नही समझती।

ईप्सिता ने अपने को समेट लिया था। उसके बाद देवादिदेव धीरे धीरे बदलता गया था। धर्म और आस्था से हटता गया था। ईप्सिता ने फिर कभी कुछ न कहा। लेकिन देवादिदेव को लगता था कि ईप्सिता की मर्मभेदी दृष्टि के सामने वह जब भी खडा हुआ है, उसने सब रग-रोगन और आवरण भेदकर नीचे की कीचड, बाँस और भूसे का चौखटा देख लिया

है। ईप्सिता को धोखा नहीं दिया जा सकता है।

लेकिन आज देवादिदेव को सब मालूम हो गया है। अपना स्वरूप जानने के लिए भीतर के सभी प्रतिरोधों को तोडकर उसने अपने को देखा। अपने उत्स को लौट आया है। अपने आप बोये राह के सारे काँटों को उसने हटा दिया है। इस कर्म में वह खून से लथपथ हो गया था। लेकिन उसने हथियार नहीं डाले।

आज उसे मालूम था उसने किसी दिन भी कोई प्रतिबद्धता भंग नहीं की बेईमान अविवेकी नहीं हुआ। चरित्र और स्वभाव में सब चीजों का बीज रहता है। स्वभाव पहले फूल के पौधे पालता है फिर खरपतवार का। खरपतवार बढ़कर एक दिन फूल के पौधे को ढँक लेते हैं। देवादिदेव किसी दिन भला था उसके बाद प्रलोभन में शक्ति के लालच में साहित्य रचना में व्यर्थ होकर धीरे धीरे घर का रास्ता छोड बाहर के रास्ते पर कदम रखा। उसी की परिणति आज का देवादिदेव बसु है।

हाँ वह सब कहेगा। कोई पुरस्कार और सम्मान न लेगा। फिर नये सिरे से आत्मकथा लिखेगा। ललिता बलवंत ईप्सिता पुलकबाबू शंकरदयाल—सबकी बात लिखेगा। उसी दिन वह श्रद्धेय बनेगा, लोग उसे याद रखेंगे। ईप्सिता को उससे इसी की अपेक्षा है।

दूसरे दिन पठानकोट एक्सप्रेस सियालदह पहुँची।

स्टेशन पर सभी उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे—दिलीपचन्द भास्कर मनीषी सेन, अरुणिम दास, कनक कोहेन। और भी बहुत से लोग थे। सोमेश के हाथ में कैमरा था। गोपाल पीछे से चिल्ला रहा था। उसे देखकर सब शोर करते हुए आगे आ गये। सबसे पीछे ईप्सिता खडी थी। अकेली, उसकी ओर देखती हुई।

—आ गया आ गया। सब शोर मचाते हुए आगे बढ गये।

—क्या हुआ?

—तुमको पुरस्कार मिला है। देखा! ग्रेटेस्ट आनर—सबसे बडा

सम्मान !

—मुझे ?

—हां, तुम्हे।

—मुझे ?

देवादिदेव हँस पड़ा। सब उसके गले लग रहे थे।

गोपाल बोला, 'भाभी ने टेलीग्राम नही किया ?'

—हां, हां, वही पाकर तो ।

केकय बोला, 'बहुत तूफान मचेगा।'

देवादिदेव बोला, 'वह तो मचेगा।'

कहते-कहते उसके अंदर कुछ फूटने-सा लगा। कांटे सा तीखा, नुकीला। किसी चीज की दीवार खड़ी थी। दुख, भयानक दुख। किन्तु दुख क्यों हो ? नही, नही, खुश होना चाहिए। तीव्र अनुभूति के समय सुख और दुख एक से होते हैं। किन्तु कही जैसे एक लड़का पद्मा के पार के दिगन्त-व्यापी मैदान के विस्तार का सिरा पकड़कर घर लौटना चाह रहा है। वह देख रहा है कि रास्ते को रोककर तलवार के फलको की तरह तेज पत्तो के पेड़ उग आये है। बहुत सुदर। इसी को आधार बनाकर देवादिदेव एक सुदर-सी कहानी लिखेगा।

—चलो, हमारे साथ चलो।

—घर जाऊँगा।

—अरे, हम ही तुमको ले चलेंगे।

—ईप्सिता ! ईप्सिता, आगे आओ।

—पहले एक तसवीर उतार लें। भाभी, आइये। एक साथ फोटो लूँगा।

देवादिदेव ने चेहरा ऊपर उठाया। ईप्सिता ने उसकी आँखों में आँखें डाली, पीछे घूमी, उसके बाद सीधे चलने लगी।

गोपाल बोला, 'क्या हुआ ? भाभी चली जा रही हैं !'

देवादिदेव के चश्मे के नीचे से थोड़ा जल टपक पड़ा। उसके मित्र भौंचक्के होकर चुप रह गये। सोमेश ने शटर दबाया, फ्लैश बल्ब की रोशनी हुई। '—' पाने के बाद देवादिदेव की आंखो मे आनन्दाश्रुओं का

अवस था।

दवादिदेव वहुत दर तक कुछ न बाल सका। उसे लगा कि उसके जीवन का कोई भी अध्याय पूरा नही हुआ। घर लौटना न हुआ। कुछ भी शुरू न हुआ। उसन घर लौटना चाहा, यह मच था। लौट नहीं सका, लौटना चाहा नही यह भी उतना ही सच था। वास्तव म, जीवन म आरभ, मध्य और अत एक साथ चलत है। देवादिदेव तीन बिंदुओ के बीच मे कैमरे क आगे खडा रहा। जीवन ऐसा ही होता है। सदैव। भागन की कोई राह नहीं हाती।



